ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन

प्रकाशक
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

प्रथम संस्करण
१९५९
मूल्य छह रुपये

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी

काव्य एवं रसके
समाराधकोंके चरणोंमें
निवेदित



'सुमन'

विषय-तालिका

काव्य-समीक्षा-भाग

व्याख्या-भाग

काव्य-भाग

उपसंहार-भाग



मेरी बात :

आजसे ३३ वर्ष पूर्व मैने हिन्दी पाठकोको उर्दू काव्यका परिचय देनेका निश्चय किया था। तब हिन्दीमे उर्दू काव्यकी आवभगत न थी, जैसी आज है। 'मीर', और 'जिगर' (जो उन दिनों उठ रहे थे) पर दो पुस्तकें लिखी। वे छपी। उनका आदर हुआ। फिर राजनीतिके झझा-वातसे मेरा जीवन अस्थिर हो गया। इस प्रान्तसे उस प्रान्त, उम प्रान्तसे इस प्रान्त, कभी यहाँ कभी वहाँ, कभी जेल कभी बाहर फिरता रहा। वह निश्चय दब गया। वह क्रम टूट गया, यद्यपि अध्ययन—विशेप कवियोका—चलता रहा।

और आज तक टूटा रहा। इधर उर्दू कवियोंपर, उर्दू शायरीपर कई किताबे देखनेमे आई। पर कोई ऐसा ग्रन्थ न देखा जिसे पढ़कर एक विशेष कवि या कालका सम्पूर्ण वैभव हमारे सामने आ जाय, जिसे पढकर उस विषयपर उर्दूमे पढनेको न रह जाय, जिसमे अवतकके शोधकार्यका सम्पूर्ण सार आ गया हो; जिसमे कविकी मर्मभावनामे पैठकर उसके हृदयको, उसकी भावराशिको हमारे हृदयसे जोड दिया गया हो, सम्बद्ध कर दिया गया हो। कमसे कम मेरी प्यास नहीं बुझी। मै प्यासा ही रहा। स्वभावत. मै समझता हूँ कि और भी लोग, मेरी तरह, प्यासे होगे।

मेरे एक पुराने मित्र मिल गये। यूँही बाते चल पड़ी। उन्होने मेरे उर्दू कवियों-सम्बन्धी उन दो पुरानी पुस्तकोकी चर्चा की और यह भी वताया कि स्व० ओड़छा नरेश उनपर मुग्ध थे और सदा अपने शयन-कक्षमे तकियेके नीचे रखते। उन्होने कहा कि महाराजने कई वार उनका

जिक्र किया; कहा कि यह है जो कविका कलेजा कागजपर निकालकर रख देता है। उससे मिलाओ, मै कहूँगा कि ऐसा ही कुछ और लिखे।

इसमे प्रकारान्तरसे मेरी प्रशसा है पर मैने अपनी प्रशसाकी दृष्टिसे इसे नही लिखा। प्रसगवश लिखा है। इसलिए लिखा है कि महाराज जैसे और भी है जो कविके अन्तरमे पैठनेवाली कलमको देखने-पानेके अभिलाषी है। इस चर्चासे मेरा निश्चय दृढ हो गया। ३२ वर्ष पूर्व 'मीर' पर जो कुछ लिखा था वह इस विशेषताके साथ भी अधूरा है। इस बीच उर्दूमे उनपर काफी काम भी हुआ है। इसलिए मै सबसे पहले यह 'मीर' हिन्दी जगत्मे रख रहा हूँ। मीर उर्दू शायरीके खुदा कहे गये है। उर्दू गजलके प्राचीन कवियोमे वह बेजोड है। कोई उनतक नही पहुँचा। गालिब, जौक, सौदा सब स्वीकार करते है। इसलिए पहिले उन्हे ही लिया। इसमे उनके सम्बन्धमे अद्यतन शोधका तत्त्व भी है और वह सब भी है जिसपर महाराज मुग्ध थे।

इसके बाद मेरा विचार 'गालिब' पर लिखनेका है जिसका अध्ययन मै वर्षोसे करता रहा हूँ, और जिनपर कई पुस्तके निकलनेके बाद भी मेरे निश्चयके चरण दृढ होते गये हैं; मै अब भी उसकी उतनी ही आवश्यकता अनुभव करता हूँ। दिल एव दिमागकी मजबूरियाँ है।

पुस्तक लिखनेमे मैने अनेक ग्रन्थोसे सहायता ली है। इनका तथा इनके प्रणेताओका जिक्र अन्यत्र किया गया है। मै उनका कृतज्ञ हूँ। डा० फ़ारूकी, मौलवी 'आसी' तथा डा० अब्दुलहकका विशेष आभार मानता हूँ। उर्दूमे डा० फारूकीका शोध ग्रन्थ, अपनी कुछ खामियोके साथ भी, काफी प्रामाणिक है और मैने उससे पर्याप्त प्रेरणा एव सहायता ली है। स्व० डा० रामबाबू सक्सेनाकी कृपासे मीरकी हस्तलिपिका चित्र दे सका हूँ।

और अगली मुलाकात तक बस।

लखनऊ
३।९।५९

—श्री रामनाथ 'सुमन'

कृतज्ञता-ज्ञापन

पुस्तक लिखनेमे निम्नलिखित ग्रन्थों एवं रचनाओसे विशेप सहायता ली गयी है :—

१. कुल्लियाते 'मीर' : संपादक मौलवी अब्दुल बारी 'आसी' (नवलकिशोर प्रेस)
२. इन्तिखाबे कलामे 'मीर' : सपादक मौलवी अब्दुलहक़ (अंजुमन तरक्क़िए उर्दू)
३. 'आबेहयात' : लेखक मौ० मुहम्मद हुसेन आजाद (लाहौर-की अष्टम आवृत्ति)
४. मीर तक़ी 'मीर' : लेखक डा० ख्वाजा अहमद फ़ारूकी (अंजुमन त० उर्दू)
५. कविरत्न 'मीर' : लेखक श्री रामनाथ 'सुमन' (पुस्तक भडार, लहेरिया सराय)
६. तजकिरा शुअराय उर्दू . लेखक मीरहसन देहलवी (अजुमन त० उर्दू)
७. तजकिरा रेख्तागोयान : लेखक फतेह अली (अजुमन त० उर्दू)
८. नकातुश्शुअरा : सपादक मौलवी अब्दुलहक (अजुमन त० उर्दू)
९. जिक्रे मीर : संपादक मौलवी अब्दुल हक (अंजुमन त० उर्दू)
१०. उर्दू ग़जल : लेखक डाक्टर यूसुफ हुसेन (मकतबा जामिया)

निम्नलिखित पुस्तको एवं रचनाओसे भी सहायता ली गयी है :—

११. उर्दूकी इश्किया शायरी : लेखक 'फिराक' गोरखपुरी (इलाहाबाद)

१२. तजकिरा गुलशने बेखार : लेखक नवाब मुस्तफा खाँ 'शेफ्ता' (नवलकिशोर प्रेस)

१३. तजकिरा शाअरात उर्दू (क़ौमी कुतुबखाना, बरेली)

१४. तारीख़ फरिश्ता (न० किशोर प्रेस)

१५. तारीख इबरत अफजा (मुरादाबाद)

१६. तारीख़ अवध (न० किशोर प्रेस)

१७. इनफ्लुएस आफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर . लेखक डा० ताराचन्द ।

१८. दरियाए लताफत : लेखक इशा (अजु० त० उर्दू)

१९. फैजे 'मीर' : सम्पा० सै० मसऊद हसन रिजवी

२०. मजा 'मीर' : लेखक नवाब जाफ़रअली (किताबी दुनिया, देहली)

२१. मरासी मीर : सपा० सैयद मसीहुज्ज़माँ (सरफराज कौमी प्रेस, लखनऊ)

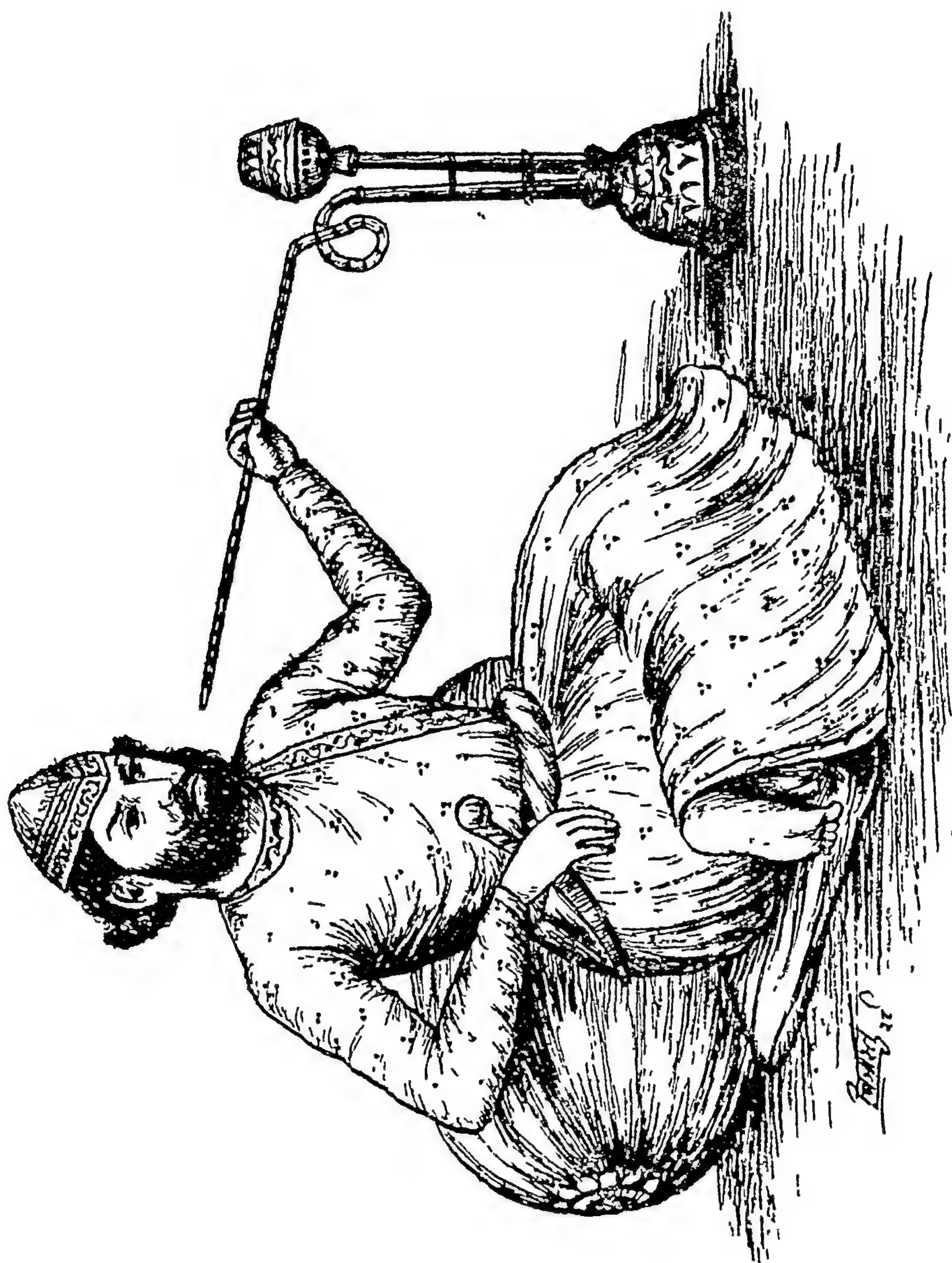
२२. मस्नवियाने मीर . सपा० सर शाह सुलेमान (निजामी प्रेस, बदायूँ)

इसके अतिरिक्त अनेक पत्र-पत्रिकाओ तथा उर्दू, हिन्दी, सस्कृत, फारसी कवियोकी रचनाओसे भी सहायता ली गयी है। डा० फारूकीकी पुस्तक काफी अच्छी है, उससे मैने पर्याप्त सहायता ली है। उनका कृतज्ञ हूँ, यद्यपि पुस्तकमे सन् सवत्की अनेक भूले रह गयी है। लेखको एवं सम्पादको सबके प्रति हार्दिक कृतज्ञता-ज्ञापन।

—श्री रामनाथ 'सुमन'

मीर

•



मीर की हस्तलिपि

जीवन-भाग

‘मीर’ : जीवन-प्रवाह



इनका पूरा नाम था ‘मीर तकी’; ‘मीर’ इनका तख़ल्लुस (उपनाम) था। इनके पूर्वजो एव पिताके विषयमे जो बाते इधर-उधर मिलती है, उनमे परस्पर अन्तर हैं। परन्तु हमारे सौभाग्यसे मीर-द्वारा फारसी गद्यमे लिखित आत्मचरित ‘जिक्र मीर’[1] प्राप्त है। उनकी एक दूसरी फारसी पुस्तक ‘नकातुश्शुअरा’ भी है जिसमे बहुत-सी बाते मिल जाती है।

मीरकी वंश-परम्परा

‘जिक्र मीर’ के अनुसार इनके पूर्वज हेजाजके रहनेवाले थे। जमानेकी कठिनाइयोसे तग आकर वे लोग, अपने क़बीलेके साथ, भारतके दक्षिण प्रदेशमे आये। वहाँसे वे अहमदाबाद (गुजरात) पहुँचे। कुछ वही रह गये और कुछ जीविकाकी खोजमे आगे बढे और अकबराबाद (आगरा) आये तथा वही बस गये। इनके परदादा भी इसी प्रकार आगरा आये। पर वहाँ की जलवायु उनके अनुकूल न हुई, बीमार पड़ गये और बीमारीमे ही इस ससारसे बिदा हो गये। वह एक पुत्र छोड गये थे। यही मीरके दादा थे। बडी-बड़ी कठिनाइयाँ उठाकर दादाने अकबराबाद (आगरा) की फौजदारी प्राप्त की। अब आरामसे कटने लगी। पर लगभग ५० वर्ष की आयुमे वह भी बीमार पडे। पूर्णतः नीरोग होनेके पूर्व ही उन्हे ग्वालियर जाना पडा और वही, कुछ दिनो बाद, उन्होने देह त्याग दी। दादाका नाम रशीद था।

दादाके दो बेटे थे। बड़े विक्षिप्त थे और भरी जवानीमे मर गये। छोटेने दो शादियाँ की जिनसे कई सन्ताने हुई पर बादमे उन्होने फकीरी ले

---

१. ‘जिक्र मीर’—अब यह पुस्तक ‘अजुमन तरक्किए उर्दू’ द्वारा प्रकाशित कर दी गयी है।

ली और ससारमे रहकर भी ससारका त्याग कर दिया। यही 'मीर' के पिता थे।

समकालिक एवं परवर्त्ती लेखकोमे 'मीर' के पिताके नामको लेकर वडा मतभेद है। कुछने उनका नाम मीर अब्दुल्ला[1], कुछने मोहम्मद मोतक्की,[2] और कुछने मीर मोहम्मदअली[3] माना है। पर सब बातो पर विचार करनेसे अन्तिम नाम मीर मोहम्मदअली ही ठीक जान पड़ता है। सन्तोषी एव साधु स्वभाव होनेके कारण ही लोग उन्हे 'मोतक्की' कहने लगे थे।

पिताका नाम क्या था ?

मीरके पिता साधु पुरुष थे। उनकी दो शादियाँ हुई थी। पहली पत्नी फारसी भाषाके लब्धप्रतिष्ठ लेखक और प्रकाण्ड पण्डित सिराजुद्दीन अलीखाँ 'आरजू' की वहिन थी, दूसरीके नाम-धामका पता नही चलता पर मीर दूसरी पत्नी की सन्तान थे। इस प्रकार 'आरजू' इनके मामा लगते थे। पिता ईश्वरके ध्यानमे सदा लीन रहते थे। वह प्रेमी और भक्त थे। उन्होने शाह कलीमुल्ला अकवरावादी

पिता और उनके द्वारा प्रदत्त संस्कार

---

१. सआदत खाँ 'नासिर'ने अपने ग्रथ 'तजकिरा खुशमार्का जेवा' मे, हकीम अब्दुल हईने 'साहिवे गुलेराना' मे, मुहम्मद हुसेन आजादने 'आवे-हयात' मे और ब्लूमहार्टने अपनी इण्डिया आफिसकी सूचीमे मीर अब्दुल्ला नाम ही दिया है। १९२६ मे जब मेरी पुस्तक कविरत्न 'मीर' प्रकाशित हुई तो मैने भी यही नाम दिया था। श्री अब्दुलवारी 'आसी' का कहना है कि अली मोतक्की गुरु-प्रदत्त उपनाम था।

२ वीलने अपनी 'ओरियटल वायाग्राफिकल डिक्शनरी'मे तथा डा० अब्दुल हकने 'मुकद्दमा जिक्रे मीर' मे यही नाम माना है।

३ 'जिक्रे मीर' (पृ० ६२) मे मीर वासितके पूछने पर कि किसके लडके हो मीर स्वय जवाव देते है—"अज़ मीर मोहम्मद अली अस्त।"

(मृत्यु० १६९७ ई०) से ज्ञान प्राप्त किया था। उन्हीके पथ-दर्शनमें बडी-बडी साधनाएँ की। मीरने लिखा है कि वह सदा यादे इलाही[1] मे मसरूफ[2] रहते थे। जब उनकी तबीयत शगुफ्ता[3] होती तो फरमाते कि "बेटा! इश्क[4] इख्तियार[5] करो कि इश्क ही इस कारखाना[6] पर मुसल्लत[7] है। अगर इश्क न होता तो यह तमाम निजाम[8] दरहम-बरहम[9] हो जाता। बेइश्कके जिन्दगानी वबाल है और इश्कमे दिल खोना असले कमाल[10] है। इश्क ही बनाता है और इश्क ही बिगाड़ता है।"

पिता जब कभी प्रेम-विह्वल या भावाविष्ट होते तो कहते कि "आलम[11] मे जो कुछ है इश्कका जहूर है। आग सोजे इश्क[12] है, पानी रफ्तारे-इश्क[13] है, खाक क़रारे-इश्क[14] है, हवा इजतरारे-इश्क है[15] है! मौत इश्ककी मस्ती है, हयात इश्ककी होशयारी है, रात इश्कका ख्वाब[16] है, दिन इश्ककी बेदारी[17] है। तवक्का[18] कुर्वे इश्क[19] है, गुनाह बआदे इश्क[20] है, बिहिश्त[21] इश्कका शौक[22] है,...और मुकामे इश्क तो अबूदियत, असरफियत, जाहिदियत, सदीकियत, खुलूसियत, मुश्ताकियत और हबीबियत[23] से बुलन्द[24] और बरतर[25] है।"

बादके दिनोमे तो इनकी हालत सन्त या सूफीकी-सी हो गयी थी। जमीनपर पडे-पडे न जाने क्या सोचते। "दिनमे खोये-खोयेसे रहते और रातको उपासनामे तल्लीन हो जाते।"[26] उपासनाकी निद्रा जब टूटती, कुछ

---

१. भगवत्-स्मरण, २ तल्लीन, ३ प्रफुल्ल, ४. प्रेम, ५. ग्रहण, ६. जगत्से अभिप्राय है, ७. आच्छादित, ८. व्यवस्था, ९ छिन्न-भिन्न, १०. साधनातत्व, ११. ससार, १२. प्रेमकी जलन, १३. प्रेमकी गति, १४ प्रेमकी स्थिरता, १५ प्रेमकी बेचैनी, १६. स्वप्न, १७ जागरण, १८. निस्पृहता, सन्तोष, १९. प्रेमका सानिध्य, २०. प्रेमका उल्लघन, २१. स्वर्ग, २२. प्रेमकी आकाक्षा, २२. ईश्वर-साधनाकी विभिन्न अवस्थाएँ, २४. उच्च, २५ श्रेष्ठ, २६ "रोज हैरांकार, शब जिन्दादार, अक्सर रूये नियाज बर खाक।"

होशमे आते तो फर्माते—"वेटा! आलम[1] की हकीकत[2] एक हगामामे ज्यादा नही है। इससे दिल न लगाना। इश्के-इलाही[3] इख्तियार करो और खुदासे लौ लगाओ। आखिरत[4] की फिक्र लाजिम[5] है। यह दुनिया गुजरनेवाली है और जिन्दगी वहम[6] है। वहमके पीछे दौडना अवस[7] है। चलचलाव लगा है। इसलिए जादेराह[8] की फिक्र करो वर्ना इस मजिल तक पहुँचना मुमकिन नही। उससे रुजूअ[9] करो आलम जिसका आइना है और इख्तियार[10] उसको सौपो जिसको हम अपनेमे ढूँढते है।"

'मीर' ने लिखा है कि मेरे पिता कामिल फकीर थे और वडी दर्दनाक तवीयत रखते थे। जब मुझे गले लगाते तो शफक्कत[11] से कहते कि "ऐ सरमायए-जान[12]! यह कैसी आग है जो तेरे दिलमे छुपी है, और यह कैसा सोज[13] है जो तेरी जानके साथ लगा है।" इस पर मै हँस देता और वह रोने लगते। एक रोज नमाजके वाद मेरी तरफ तवज्जुह फरमाई[14] और मुझे खेलता देख कर कहने लगे—"वेटा! जमाना सय्याल[15] है यानी वहुत कम फुर्सत। अपनी तर्वियत[16] से गाफिल[17] न रहो। रस्तेमे वहुत नशेवोफराज[18] है, देख कर चलो। ऐसे फूलका वुलवुल वनो जो सदावहार है। फुर्सतको गनीमत समझो और अपने तई पहचाननेकी कोशिश करो।"

पिताके चेहरे पर नूर वरसता था। मुख पर पवित्रताकी छाया थी। भीडभाडसे दूर रहते थे। प्रियतमके ध्यानमे प्राय डूवे रहते, प्राय आँखे भीगी, हाल वेहाल[19]। कभी-कभी तो फूट कर माशूकके लिए इस तरह रोते कि हिचकी वँध जाती।

---

१ दुनिया, २ तत्व, सत्य, ३ प्रभु-प्रेम, ४. अन्तकाल, ५ आवश्यक, ६ भ्रम, माया, ७ निस्सार, निरर्थक, ८ मार्गका सवल, पाथेय, ९ प्रेम, आसक्ति, १० प्रभुत्व, अधिकार, ११ कृपा, १२ प्राण-धन, १३ जलन, १४ ध्यान दिया, १५ प्रवहमान, परिवर्तनशील, १६ प्रशिक्षण, १७ असावधान, १८ नीच-ऊँच, १९. "मिजगाँ नम, हाल दरहम"—जिक्रे मीर पृष्ठ ९।

जो लोग भी उनके सम्पर्कमे आते, प्रभावित हुए बिना रह न सकते थे। उनके सम्बन्धमे अनेक घटनाएँ बताई जाती है। आगरा (अकबरावाद) मे वह शहरसे बाहर ईदगाहके पास रहते थे। एक बारकी बात है कि घर मे आये और खाना पकानेवाली बुढियासे कहा कि कुछ खानेकी चीज घरमे हो तो लाओ। वह बोली कि घरमे तो कोई सामान नही है, बाजार जाती हूँ, वहाँसे सौदा-सुलुफ लाऊँ तो कुछ पकाऊँ। बुढिया कुछ आटा-दाल वगैरह लेकर पलटी तो उन्होने खाना तैयार करनेके लिए जल्दी मचायी। बुढिया बिगड कर बोली कि साहब! फ़क़ीर हो तो फ़कीरीके अन्दाज सीखो, सब्र करो; दरवेशी कोई बच्चोका खेल नही है। बुढियाका कहना तीरका काम कर गया। उससे तो कुछ न कहा लेकिन उठे, आँसुओसे भीगा हुआ रूमाल उठाया और चलने लगे। बुढिया डर गयी, दौड़ कर उनसे लिपट गयी और पूछा—कहाँ चले, बैठो। उन्होने जवाब दिया—कुछ हर्ज नही, तुम मेरे लिए खाना पकाओ, मै जरा लाहौरमे एक दरवेशसे मिल आऊँ। अभी वापिस आता हूँ। बुढ़ियाने बहुत समझाया-बुझाया किन्तु वक्त हाथसे निकल चुका था; अब क्या हो सकता था? विवश चुप बैठ रही। और यह है कि उसी धुनमे, चल खड़े हुए। एक बेचैनीकी हालत थी, एक नशा उन पर सवार था। न पासमे कोई सामान, न मार्गके लिए कोई खाद्य-सामग्री, न रुपया-पैसा। आखिर लाहौर पहुँचे। जिस दरवेशसे मिलनेकी उत्कण्ठा थी, उससे रावीके तट पर भेट हुई। वहाँसे देहली लौटे और मीर क़मरुद्दीनके पास ठहरे, पर उनके यहाँ चेला-चाटियोकी भीड लगी रहती थी जो इनके स्वभावके प्रतिकूल थी। एक दिन आधी रातको चुपकेसे चल पड़े, लोग ढूँढते ही रह गये। दो-तीन दिनकी यात्राके बाद बयाना पहुँचे। यहाँ एक नवयुवक सय्यदजादे पर उनकी जादूभरी निगाहोने ऐसा असर डाला कि वह भूता-विष्टकी भाँति बेहोश होकर गिर पड़ा। लोगोने यह हालत देखी तो इनसे अनुनय-विनय की कि इसपर कृपा कीजिए। इन्हे भी कुछ रहम आ गया।

थोडा-सा पानी लिया, उसे अभिमन्त्रित किया। उसका कुछ अंश पिला दिया, कुछ मुँह पर छिडका। युवक होशमे आकर उठ बैठा और घुटने टेक कर सामने बैठ गया और प्रार्थना की कि कुछ दिन गरीबख़ाने पर कयाम फर्माइए। उन्होने यह कह कर मंजूर कर लिया कि, खैर पर मै यात्रामे हूँ। लोगोने कहा जिस समय आपकी जो आज्ञा होगी उस पर अमल किया जायगा। फिर कहा कि हमारा क्या, कभी किसीसे खुश है, कभी नाखुश। पर लोगोके बहुत प्रार्थना करने पर उसके यहाँ गये।

संयोग उसी दिन उस युवककी शादी थी। लोगोंने इनसे भी शादीमे शामिल होनेकी प्रार्थना की। इन्होने कहा—फकीरको इन झगडोसे क्या मतलब? उस नवजवानसे कुछ बाते की। उधर बारात गयी, इधर यह वहाँसे चल पडे और अकबराबाद (आगरा) आ पहुँचे। उधर बारात जब वापस आयी, दूल्हाको इनके चले जानेका हाल मालूम हुआ। न जाने क्या बात हुई कि दिल उचट गया, सुप्त ईश्वर-प्रेम जग पडा। परिणाम यह हुआ कि बेचारेने घर पर पानी भी न पिया, नई-नवेली दूल्हनको छोड-छाड उनकी तलाशमे निकल खडा हुआ, कई दिनो तक जंगलोमे खाक छानता फिरा, जो मिलता उसीसे फकीरका पता पूछता पर किसीको क्या मालूम कि किस फकीरको पूछ रहा है। कुछ पता न चला। एक दिन एक साधु पुरुष मिल गये। उन्होने इसे त्रस्त देख दयार्द्र हो पूछा—किसे ढूँढता है? उसने रङ्ग-रूप बता कर अस्त-व्यस्त भाषामे अपना प्रयोजन कह सुनाया। उन्होने कहा—जा, सीधा अकबराबाद चला जा, अली मोतक्की वही है, ढूँढ ले। यह सुन कर गरीब पूछता-पाछता अकबराबाद आया और किसी तरह अपने गन्तव्य-स्थल पर पहुँच गया।* मीर मोहम्मद अली उर्फ मीर मोतक्कीने तसल्ली देकर वही ठहरा लिया। धीरे-धीरे वह उनका

---

* अब्दुल बारी 'आसी', कुल्लियातमे मुकद्दमा। पृ० १० (न० कि० प्रेस)

ऐसा भक्त और प्रिय बन गया कि मीर मोहम्मद अली उसे अपना छोटा भाई मानने लगे। इस युवकका नाम सय्यद अमानुल्ला था। मोहम्मद अलीने उसे साधनाका मर्म बताया और धीरे-धीरे वह बहुत उच्च साधक बन गया।

उस समय मीर साहब बच्चे ही थे; सिर्फ ७ सालकी उम्र थी। पर पिताके सस्कारोका तथा जो बुजुर्ग उनके पास आया करते थे उनकी बातोका प्रभाव उन पर अन्दर ही अन्दर पड़ने लगा था। सय्यद अमानुल्लाके आने पर मीर साहब उनकी देख-रेखमे पढने लगे। मीर, बापके बाद, उनकी सबसे ज्यादा इज्जत करते थे। दोनोके बीच दिली मोहब्बत थी। वह अमानुल्लाके साथ और भी बडे लोगोके पास जाते और उनकी बाते ध्यानसे सुना करते थे। तीन साल तक बराँबर उनके पास पढते रहे। जब १० सालके हुए अमानुल्लाकी अचानक मृत्यु हो गयी। उस छोटी अवस्थामे भी, यद्यपि इनकी शिक्षा पूर्ण नही हुई थी, बहुत कुछ समझने लगे थे। मीरके जीवन पर पिता एव अमानुल्लाका अत्यधिक प्रभाव पड़ा। अमानुल्लाकी मृत्युकी चोट तो इनको ऐसी लगी कि अक्सर रोया करते। मीरने स्वय ही लिखा है कि मै उनकी मृत्युसे बहुत दुखी रहता था। मुझे दुखी देख कर मेरे पिता मुझे समझाया करते कि तुम बच्चे नही हो, दस सालके हो, दरवेशके लड़के हो। तुम्हे दिल मजबूत रखना चाहिए।[1]

अमानुल्लाकी मृत्यु पर 'मीर' का दुखी होना स्वाभाविक था। पिता तो सदा ईश्वरोपासना एव ध्यानमे मग्न रहते थे, मीर ज्यादातर अमानुल्ला के पास ही रहते थे। वह उन्हे चचा कहते थे। अमानुल्ला भी 'मीर' को

---

१. "कि ऐ पेसर मन तुरा बिसियार मी ख्वाहम। अम्मा अजी गम मी काहम कि मन नीज बर सरे राहम। गाह मी गुफ्त कि माह मन न तिफ़्ल:हाल:। अलहमदुल्ला कि दह साल:। च व काहिश उफ़्तदये आख़िर दरवेगजादह, दिलक़वीदार।"

वेटेकी तरह मानते थे, एक क्षणको अपनी आँखोसे दूर नही करते थे और कुरान शरीफ पढाते थे[1]।

अमानुल्ला अपने गुरुकी प्रेमोपासनामे रँग गये। मानवरूपमे भी इन्हे ईश्वरका चमत्कार दिखायी देता था। 'मीर' ने इसकी प्रेमलता और

प्रेमके पागल अमानुल्ला

विदग्धताके सम्बन्धमे एक विचित्र घटना लिखी है। एक वारकी वात है कि अमानुल्ला जुमाके वाजारकी सैरको गये। वहाँ उनकी दृष्टि एक तैल-विक्रेता लडके पर पडी। देखते ही दिल कावूसे वाहर हो गया। उस मुहब्वतके गममे ऐसी दुर्वलता हो गयी कि जमीन पर पाँव नही उतार सकते थे। एक नौकरके कन्धे पर हाथ रखकर तव खडे होते थे। जव हालत खराव हो गयी तो गुरुकी सेवामे उपस्थित हुए कि कोई विधि निकाले। जव वहाँ पहुँचे तो हाल यह था कि आँखोमे आँसू थे और लवो पर ठण्डी आहे। सच्चे वियोगी की अवस्था थी। उपस्थित लोगोने इनको देखते ही जगह कर दी किन्तु गुरुने इन्हे अपने पास वैठाया और पूछा—"अरे भाई, कहाँ थे ?" अमानुल्ला वोले—"जुमेकी वाजारकी सैरको गया था।" फरमाया—"क्या तुमने नही सुना—

'दीदने तिफ्लां तहे वाज़ार रुसवा मी कुनद।'

फिर फरमाया—"जाओ! आठ दिन तक अपने वियोग-कक्षसे वाहर न निकलो और खवरदार, किसीके सामने यह दास्तान मत वयान करना। ईश्वर दयालु है, क्या आश्चर्य उसकी कृपा तुम्हारी दशा पर हो जाय।"

---

१ मीर स्वय लिखते है—"मन दरा अय्याम हफ्तसाला वूदम। वाखुदम मानूस साख्त व दर गरेवानम अन्दाख्त यानी मा मादर व पेदरम न गुजाश्त व वफ़रजन्दी खवीशम वर्दाश्त। लमहये अज खुद जुदायम नमी कर्द व वनाज व नअम मी परवर्द। चुनाचे रोजो शव वा ओ मी मादम व कुरान शरीफ वखिदमत ओ मी ख़ादम।"

"अभी एक सप्ताह भी न बीता था कि वह चाँद स्वय बेकरार हो गया और भागा हुआ आकर उस पवित्र स्थानपर उपस्थित हुआ जो शहर पनाह के बाहर ईदगाहके निकट स्थित था। मीर मोहम्मद अलीने एक सेवकको इशारा किया और कहा—"जाओ, बिरादर अजीज[१]को बुला लाओ। उससे कहो कि तुम्हारा अभीष्ट तुम्हे ढूँढता है।" अमानुल्ला नगे पाँव भागे हुए आये और गुरुके चरणोंसे लिपट गये। उसके बाद उस किशोरको गले लगाया। उस लडकेने कहा—"मैंने बहुत तकलीफ उठाई, लेकिन खैर, खजाना पा लिया। अब इस आस्ताना[२] की जारूबकशो[३]को अपनी सआदत[४] समझता हूँ।" धीरे-धीरे अपनी साधनाके कारण उसने मोहम्मदअलीके शिष्योमे काफी प्रतिष्ठा प्राप्त की।

अपने 'चचा' सय्यद अमानुल्लाके बारेमे 'मीर'ने अनेक घटनाएँ लिखी है। "उन्हे दरवेशो, फकीरो, सन्तोसे मिलनेकी सदा उत्कण्ठा रहती थी। एक दिनकी बात है कि वह एहसानउल्ला नामके एक दरवेशके पास गये। मै भी उनके साथ था। इस फकीरका यह कायदा था कि जब कोई दरवाजे पर आवाज देता तो वह कह देता कि अहसानउल्ला घरमे नही है। उस दिन भी उसने ऐसा ही किया। मेरे 'चचा'ने कहा—'अगर एहसान-उल्ला नही है तो अमानउल्ला है।' वह हँसा और उसने फौरन दरवाजे के किवाड खोल दिये। एक जवान शख्स[५] नजर आया। "उसके चेहरे पर अन्त ज्योति फूट रही थी। थोडी देर बाद वह बुजुर्ग मेरी तरफ आकृष्ट हुए और पूछा यह लडका किसका है। चचाने फरमाया—'अली मोतक्कीका फर्जन्द[६] और मुझ गुनहगार[७] का परवर्दा है[८]। दरवेशने फरमाया कि यह अभी बच्चा है। अगर इसकी वखूवी तर्बियत[९] हुई तो

---

१. प्रिय भ्राता, लघु भ्राता, २. (पवित्र) स्थान, ३. झाड़ू देना, सफाई, ४ कल्याण, सौभाग्य, ५ व्यक्ति, ६. पुत्र, ७ पापी, ८. पालित, ९. प्रशिक्षण।

एक ही परवाज[1]मे आसमानके उस पार पहुँच जायगा। उसके बाद दरवेशने रोटीका एक सूखा टुकडा पानीमे तर करके खानेको दिया।" उसमे मुझे वह लज्जत[2] मिली जो आज तक किसी खानेमे नही मिली और उसका जायका अब तक याद है।"

इसी प्रकार एक दिन मालूम हुआ कि एक दरवेश बायजीद नामके, सराय गीलानीके पास, जो बाढसे तबाह और बर्बाद हो गयी थी, ठहरे हुए है। चचा तुरन्त मिलनेके लिए गये। देखा, एक जवान विदग्धहृदय, प्रशस्तात्मा, प्रेमविह्वल बडी बेकरारीकी हालतमे पडा है और प्रभुके चिन्तन एव स्मरणमे लीन है। न खाने-पीनेकी सुध है, न पहनने-ओढनेकी। यह दरवेश मेरे चचासे मिलकर बहुत खुश हुए और जबाने मुबारकसे बहुत नसीहते[3] की। इन नसीहतोमेसे एक नसीहत यह भी थी कि मन्दिर-मस्जिदकी कैदसे आजाद हो जाओ और अगर मकसूद[4] तक पहुँचना चाहते हो तो किसी दिलमे राह पैदा करो।*

दूसरी भेटके समय बायजीदका ध्यान 'मीर'की ओर गया। उन्होने अमानुल्लासे पूछा—यह कौन है? उन्होने कहा—"अली मोतक्कीके बेटे है।" दरवेशने कहा—"हाँ, वह तो बडे बुजुर्ग है—दानाय इसरार[5], खुरशीदे आस्माँ[6]। यह इसी दरियाका[7] मोती है? हम फ़कीर तो उनके मुकाबिलेपर[8] बिल्कुल तिहीदस्त[9] है।"

एक दिन मीर अमानुल्ला 'मीर'को लेकर फिर बायजीदके पास पहुँचे।

---

* "जिनहार कि दिलशिकनी कसे न कुनी व सग सितम बर शीशए न जनी।
दिल रा कि अर्श मी गोयन्द अमी राह अस्त कि मजिलखासआँ माह अस्त—
नियाजारम जखुद हर्गिज दिले रा
कि मी तर्सम दरो जाये तू बाशद।

१ उडान, २ स्वाद, ३ उपदेश, ४ लक्ष्य, इष्ट, ५ रहस्यज्ञाता, ६ आकाशके सूर्य, ७ समुद्र, ८ तुलनामे, ९ नगण्य, दरिद्र।

यह तीसरी और आखिरी मुलाकात थी। उन्होने देखा कि बायजीद बीमार और मलिन है और एक पहलूसे लेटे हुए आह-आह कर रहे है। सय्यद अमानुल्लाको देखकर एक ठण्डी साँस ली और 'शफाई'का यह शेर पढा—

परिस्तारे नदारम बरसरे बालीन बीमारे
मगर आहम् अज़ी पहलू बआँ पहलू ब गरदानद।

चचाके पूछनेपर कि क्या हाल है, फर्माया—"ऐ अजीज! मेरा सीना ऐसे जल रहा है गोया अन्दर आग सुलग रही है। हर नाला[1] आतिश[2] है और हर आह एक शोलए-सरकश[3]। अगर मौत मेरी फरियादको पहुँच जाय तो मै अपनेको खुशकिस्मत समझूँगा। न दिनको चैन है, न रातको करार। हवा जो चलती है इस आगको भडका देती है। पानी जो पीता हूँ इस आगपर तेलका काम करता है। काश, कोई मेरे सीनेको चीर डाले और दिल व जिगरको बाहर निकाल फेके।"

"सूर्यास्त तक यही हाल रहा। शामकी नमाज पढी और प्राण निकल गये। रातको चचाने उन्हे सपनेमे देखा। बहुत खुश थे और कह रहे थे—"देखा तुमने। एक इश्कने मेरे अन्दर कैसी आग लगा दी थी। इसका इलाज सिवाय मरणके और कुछ न था।‡ जब मेरे प्रियतमने मेरी बेताबी देखी तो मुझे रहमत[4]के समुन्दरमे डाल दिया और मुझे गौहरे मकसूद[5] से हमकिनार[6] किया।"

'मीर' के निर्माणमे इन बुजुर्गोका बहुत बड़ा हिस्सा है। उनके जीवन और काव्य दोनोपर इन दिशाओ एव संस्कारोके चिह्न दिखायी पड़ते है। काव्यकी समीक्षा करते समय हम विस्तारसे इसकी चर्चा करेगे। यहाँ

‡ "दीदी कि इश्क च आतिशे दरमनजद व चुनानम सोख्त चारये कार जुज मर्ग न बूद।"

१. आर्तनाद, चीत्कार, २. आग, ३ प्रचण्ड लपट, ४ कृपा, ५. वाञ्छित मुक्ता, ६. सम्बन्ध कराना, मिलन कराना।

इतना लिख देना चाहते है कि पिता (मीर मोहम्मदअली), चचा (मीर अमानुल्ला) तथा इन दरवेशोकी जीवन-प्रणाली और व्यक्तित्वका 'मीर' के हृदयपर सदैव गहरा असर रहा। वचपनमे जो कुछ उन्होने देखा, सुना उसे ही कैशोर एव यौवनमे ग्रहण किया। उन्होने निस्पृहता, स्वाभिमान और एकान्तप्रियता अपने पितासे सीखी, प्रेमकी विह्वलता, दर्द, जलन और आवेश 'चचा' अमानुल्लासे ग्रहण किया, तथा पूजाके मिथ्याचारोके प्रति उपेक्षा एव धार्मिक उदारताका भाव दरवेशोसे प्राप्त किया।

मै ऊपर लिख चुका हूँ कि जव यह दस सालके थे, सय्यद अमानुल्ला का देहावसान हुआ। 'मीर' के दिलपर गहरी चोट लगी। पर उसके

चचा एवं पिता का निधन

कुछ ही दिनो वाद पिता भी चल वसे। और 'मीर' इस ससारमे अकेले रह गये। उन्होने अपने पिताकी मृत्युके सम्वन्धमे एक घटनाका जिक्र किया है जिससे पता चलता है कि सवको पहलेसे ही मालूम हो गया था कि अव अन्त आ गया है। 'मीर' लिखते है कि "मेरे वालिद[१] ने सय्यद अमानुल्लासे फर्माया—"ऐ विरादर अजीज! जोफ[२] वढता जाता है। अगर कुर्रा हिफ्ज[३] कर लो तो क्या अच्छा हो।" अर्ज[४] किया कि वहुत खूव। एक दिन दोनो वैठे पाठ कर रहे थे कि एक दरवेश असदउल्ला नाम, नीले कपडे पहिने और नमदी कुलाह[५] ओढे विशेष परिच्छद् पहिने आया। ज्यो ही मेरे वालिदके सामने आया, उन्होने फर्माया—'भाई, इतने दूर-दराजका सफर तूने क्यो अख्तियार किया और इतनी जहमत[६] और मशक्कत[७] क्यो उठायी ?" दरवेश दौडके कदमो पर गिर पडा। वालिद उससे वगलगीर हुए[८]। और उसे अपने पास जगह दी। चचाजान यह घनिष्टता देख हैरान हुए और पूछा, यह कौन वुजुर्ग है ? कहा—मेरे पुराने

---

१ पिता, २ दुर्वलता, ३ जवानी याद करना, ४ निवेदन, ५ टोप, ६ विपत्ति, ७ श्रम, ८ भेटे।

परिचित है। वह और अधिक चकित हुए, इसलिए कि उनको इसके पहिले न कभी देखा था, न उनकी चर्चा ही कभी सुनी थी। उनको चकित देख पिताने कहा—हम दोनों एक ही आश्रम—धर्मस्थान—के सेवक हैं। पहिले सालमे एक बार जरूर उनकी सेवामे उपस्थित होता था। एक बार मैंने गुरुदेवसे निवेदन किया कि कितना अच्छा हो अगर मरनेसे पहिले मुझे इसकी सूचना मिल जाय ताकि मै अपना ध्यान अन्य वस्तुओसे हटा लूँ। आदेश हुआ कि जब तुम इस विशेष परिच्छदको दोबारा देखो तब समझ लेना कि दूसरे साल तक जीवित न रहोगे, उम्र बहुत थोडी बाकी है। चचा यह सुन कर बडे दुखी हुए और कहा—भगवत्कृपासे मै इस घटनाको अपनी आँखोंसे न देखूँगा और इसके पूर्व ही इस ससारसे विदा हो जाऊँगा।

"जब उस दरवेशसे बाते हुई तो उसने कहा कि कुछ दिनोसे मेरी दुकान बिल्कुल नही चलती थी और इसके कारण बहुत ही परीशान था। एक दिन मैंने गुरुदेवको स्वप्नमे देखा कि वह सिरहाने खडे हैं और फर्मा रहे है कि 'ऐ असदउल्ला, यद्यपि यात्रामे कठिनाइयाँ बहुत है और रास्ता भी दूरका है लेकिन एक बार तुम अली मोतक्कीके पास जरूर जाओ। मेरे और उनके बीच एक सङ्केत है जिसको वह तुम्हारे जानेसे समझ जायँगे। इसलिए जल्दी जाओ और कठिनाइयोसे परीशान न हो। वहाँसे लौटने पर तुम्हारी दुकान खूब चलेगी। बस, मैंने दुकान एक शिष्यके सुपुर्द की और सीधा अकबराबादके लिए चल खडा हुआ।

"ईदका दिन था। चचाजानने कपडे बदले और नमाज पढी। इसके बाद उनके सीनेमे ऐसा दर्द शुरू हुआ कि किसी करवट चैन नही आया। चेहरेका रग बदल गया और सब्रकी ताकत जाती रही। वालिदसे बुला कर कहा—मालूम होता है कि यह दर्द जानके साथ जायगा। दम घुटा जाता है और सब्र है कि किसी तरह नही होता। शाम तक यह दर्द सारे जिस्ममे फैल गया और उनकी तकलीफ़से देखनेवालोके दिल हिलने लगे।

प्रात कालीन नमाजके समय वह चले गये ।" इस प्रकार अपने गुरुकी मृत्यु अपनी आँखो न देखनेके अपने वचनका निर्वाह किया । मीरने उस दु खका वर्णन किया है जो इस घटनासे उनके पिताको ओर उन्हे हुआ । वह कहते है कि चचाकी मृत्युसे मेरे पिताको वडी चोट लगी और वह अपने आपको 'अजीज मुर्दा' कहने लगे । मेरे ऊपर तो कयामत[1] ही गुजर गयी। हर वक्त उनके साथ रहता था और अपनी जरूरतोको उन्हीसे कहता था । अव दिन और रात सिवा उनकी यादके और कुछ शगल[2] नही था । वालिद वहुतेरी दिलजोई[3] करते लेकिन गमगलत[4] न होता । कभी फर्माते कि मुझे तेरा वडा ख्याल है लेकिन मै खुद वरसरे राह[5] हूँ । कभी कहते, खुदाका शुक्र है कि दस वरसके हो । उस पर नजर रखो और अपने दिलको मजवूत करो ।

चचाके बाद पिता भी

"एक रोज अपने भाजे मोहम्मदके पास आलमगज तक पैदल धूपमे जाना पडा । दिन भर वहाँ रहे. शामको लौटे । अपनी मस्जिदमे नमाज पढी । फिर मुझसे फर्माने लगे कि मुझे लूका असर हुआ मालूम पडता है । सिरमे दर्द है और मालूम पडता है कि वुखार हो जायगा । इस वक्त कुछ नही खाऊँगा । सो गये । सुवह वुखार और तेज हो गया । उनके पुराने चिकित्सक हकीम अव्दुलफतहने वहुतेरा इलाज किया मगर कुछ फायदा न हुआ । वुखार ठहर गया और रोज शामको तेज होने लगा । एक महीने चिकित्साके वाद भी जव कुछ लाभ न हुआ तो लोग समझ गये कि वुखार हड्डियोमे असर कर गया । धीरे-धीरे क्षय हो गया । भोजन विल्कुल छूट गया । सिर्फ नर्गिसके फूल सूँघ लेते थे । वादमे दवा भी छोड दी । एक दिन मुझे और वडे भाई हाफिज मोहम्मद हसनको वुलाया और फर्माया कि मै एक फकीर हूँ । मेरे पास न रुपया, न पैसा,

---

१ प्रलय, २ काम, ३ दिल वहलाव, ४ दु ख-निवृत्ति, ५ पथके वीच, मतलव है कि चलने ही वाला हूँ ।

न सामान, न जायदाद। अलबत्ता तीन सौ जिल्दें किताबोंकी है, लाओ उन्हीको तुम दोनोमे बॉट दूँ। बडे भाईने कहा कि 'आपको मालूम है, मै विद्यार्थी हूँ और किताबे सिर्फ मेरे काम आ सकती हैं। मोहम्मद तकीको इससे क्या वास्ता, सिवा इसके कि इनकी पतग बनाकर उडाये या फाड़ डालें।' वालिदको बात बुरी लगी। वह समझ गये और फर्माया—"अगर्चे तूने फ़कीरी इख्तियार की है लेकिन तेरे मनसे बुराई नही गयी। इन किताबोको तूही ले ले लेकिन याद रख कि अल्ला गयूर[1] है और गयूरको दोस्त रखता है। मोहम्मद तकी तुम्हारा दस्तेनिगर कभी न होगा। ज्यादा सताओगे तो उसकी सजा पाओगे। समझ लो कि उसके सामने तुम्हारा चिराग हर्गिज हर्गिज जल नही सकता।" उसके बाद मुझे फर्माया—"मुझपर तीन सौ रुपये बाजारके कर्ज है, जबतक उन्हे चुका न देना, मेरा मृतक कर्म न करना।" मैंने निवेदन किया—"घरकी सम्पत्ति तो यही किताबें थी जो भाईजानके अधिकारमे आ गयी; अब मै कर्ज चुकानेका क्या उपाय करूँगा।" उन्होंने कहा—"घबराओ मत। खुदा कारसाज है। हुण्डी रास्तेमे है। पहुँचना ही चाहती है। जी चाहता है कि मेरे सामने ही आजाय किन्तु मौत करीबतर[2] है और फुर्सत कम, लिहाजा[3] खुदा हाफिज[4]।" इसके बाद प्राण त्याग दिये।

बापके मरनेके बाद इस बालकपर क्या बीती होगी, इसकी कल्पना-मात्रसे मन करुणार्द्र हो जाता है। लावारिस गरीब बच्चा, ऋणदाताओका

पिताके निधनके बाद

तकाजा, घोर ऐकान्तिकता, भाईकी निष्ठुरता, मतलब विपत्तियोंका पहाड़ ही टूट पड़ा। पर उसने पिताकी आज्ञाका पालन किया, प्रभुमे विश्वास रखा और किसीके आगे हाथ नही फैलाये।[5] बडे भाईने बाह्य

---

१. स्वाभिमानी, २. निकटतर, ३. अत., ४. ईश्वर रक्षक है, ५. "खुदाये करीम मरा शर्मिन्दए एहसान कसे न कर्द। दोस्त निगर बिरादर कि सर बसर मन दाश्त न साख्त। नक़ल मातम दरवेश किस्मत साख्तम। कारे रा बलुत्फे-खुदावन्द अन्दाख्तम।"

शिष्टाचारसे भी मुँह मोडा और यह सोचकर कि बाप निर्धन मरा है, ऋणदाता तग करेगे, अलग बैठ रहे और कहने लगे कि जिनको उन्होने दुलारसे पाला है वह जाने, उनका काम जाने। मै तो किसी काममे न पहिले था, न अब हूँ। ऐसे समय केवल ईश्वरका ही सहारा था। बाजार के बनिये दो सौ रुपये लेकर आये पर 'मीर' ने स्वीकार न किये। इतनेमे इनके पिताके शिष्य मुकम्मलखाँ पाँच सौ रुपयेकी हुण्डी लेकर आये। 'मीर' ने पहिले तीन सौ रुपये ऋणदाताओंको चुकाये और सौ रुपये पिताके अन्तिम कृत्यमे व्यय किये। गुरुकी कब्रके पास दफन किया।

उनकी उम्रके सम्बन्धमें मतभेद

जिक्रे मीरसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि पिताकी मृत्युके समय इनकी उम्र ग्यारह वर्षके लगभग थी। पर इस सम्बन्धमे उर्दू विद्वानोमे मतभेद है। सर शाह सुलेमानका कथन है कि 'मीर' ने अपनी उम्रका ठीक अन्दाज नही किया। श्री अब्दुलबारी 'आसी' ने भी अपने 'कुल्लियाते मीर' की भूमिकामे लिखा है कि मीर साहबसे उनके स्वर्गीय पिताकी बाते और उपदेश, ऋणदाताओके प्रति कर्तव्य-पालन, पिताके प्रति अन्तिम कृत्य-सम्पादन, सब बातोका निबटारा और अपने छोटे भाईको घर सौंपकर जीविकाकी तलाशमे उनका बाहर निकलना[1], किसीसे कुछ मदद माँगे बिना जीविकोपार्जनके लिए दूरका सफर, और पिता तथा अमानुल्लाके जीते जी भी दरवेशोका सत्सग वगैरा ऐसी बाते नही है कि दस-बारह सालके बच्चेके करने योग्य मानी जायँ। फिर आगराके आस-पास कुछ दिन भटकनेके बाद 'मीर' दिल्लीका रुख करते है। दिल्ली पहुँचते है।

---

१. मीर लिखते है :—"दमे खुदरा व बिरादर खुर्द सुपुर्द: बतलाशे रोजगार दर इतराफ़े शह्र उस्तख्वाँ शिकस्तम लेकिन तर्फे न बुस्तम यानी चारयेकार दर वतन नयाफ्तम। नाचार बगुर्बत शताफ़्तम। रजे राह बरखुद हमवार कर्दम। शदायदे सफर इख्तियार कर्दम व शाहजहानाबाद देहली रसीदम।"

इस पर 'आसी' लिखते है—" दिरायत[1] व कयास[2] कभी इस अमर मुहाल[3] के तस्लीम[4] करनेको तैयार नहीं है कि एक दस-ग्यारह बरसका बच्चा अकबराबादसे देहली तकका उस जमानेमे सफर करे कि काफिले लुटते थे, रास्ते महफूज[5] न थे, कदम-कदम पर खून बहाये जाते थे। फिर यह सब कुछ भी हो तो उस वक्त उनके ऐजाए-करीब[6] ने क्योंकर उनको इस दूर दराज मुसाफत[7] तय करनेकी इजाजत दी।"

दो-एक और साहबोने भी इसी प्रकारके सन्देह प्रकट किये है। पर ये सब कोरी कल्पनाकी बाते है। जब बातचीतमे कई बार उनके पिता भी उनकी दस सालकी उम्रका जिक्र करते है तब उसमे सन्देह करनेका कोई कारण नही। कभी झूठी बात बोलनेकी कल्पना भी वैसे पवित्र व्यक्तिके सम्बन्धमे नही की जा सकती। फिर पिताके आखिरी वक़्तमे मीरके बडे भाईका यह व्यग कि 'यह तो किताबोको फाड़ डालेगा या पतङ्ग बनाकर उड़ायेगा' भी यही सिद्ध करता है कि मीर बच्चे थे। और जो कुछ मीरने छोटी उम्रमे किया वह कोई असम्भव बात नही। १२ सालकी उम्रमे ही बाबर अपने कबीलेका सरदार चुना गया था। तेरह सालकी उम्रमे अकबरने गद्दी सँभाली थी। बात यह थी कि बचपनसे ही मीर अपने पिताके असाधारण तपोमय जीवनकी छायामे पले, उनके यहाँ एकसे एक ऊँचे आदमी आते थे। वह स्वय भी चचाके साथ अनेक फकीरोके पास जाते थे। उनके प्रशिक्षणका भी पिता और चचा बडा ध्यान रखते थे। इसलिए स्वभावत. बचपनमे ही उन्हे उच्च सस्कार पड गये और सामान्यत १५–१६ सालके लडकेसे जिस बातकी अपेक्षा की जा सकती है वह ११

क्या यह असम्भव है ?

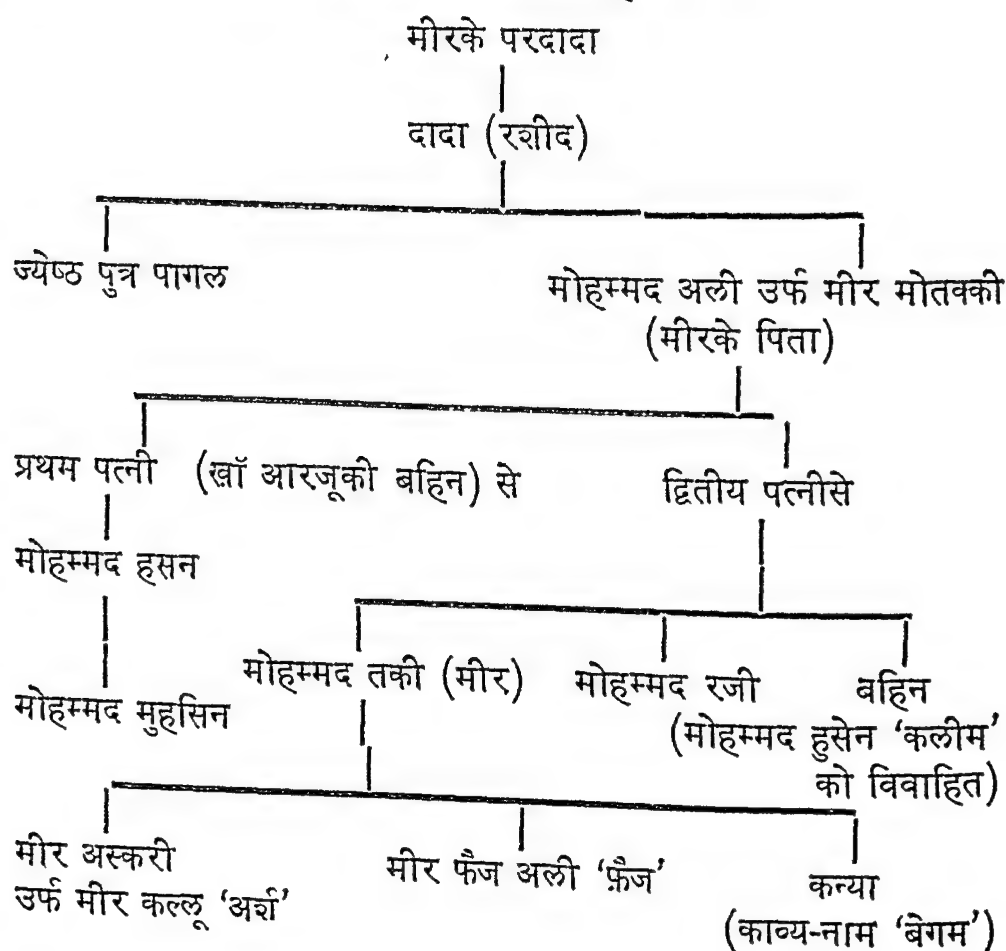
---

१. प्रज्ञा। २. अनुमान, कल्पना। ३. असम्भव कार्य। ४. मान्य। ५. सुरक्षित। ६. निकटके, प्रिय, स्वजन। ७. फासला, अन्तर। देखिए कुल्लियाते मीरमे श्री अब्दुल बारी 'आसी' का मुकद्दमावाला अश पृष्ठ १३ कुल्लियाते मीर (न० कि० प्रे०)

वर्षकी अवस्थामे 'मीर' करने लगे थे। आज भी ऐसी बातें हमारे आपके ही कुटुम्बोमे मिल सकती है और अब तो वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक अनुसन्धानोने भी सिद्ध कर दिया है कि मनुष्यकी बौद्धिक आयु एव शारीरिक आयुमे कोई विशेष सम्बन्ध नही है। ८ वर्षका बच्चा १२ वर्षके बच्चेकी बुद्धि रख सकता है। इसलिए मुझे जरा भी शुबहा नही कि मीरने अपना जो हाल लिखा है वह ठीक है।

दिल्लीको प्रयाण

पिताकी मृत्युके बाद 'मीर' बिल्कुल अकेले पड गये। इनके वंशवृक्षको, जो नीचे दिया जा रहा है, देखनेसे जान पडता है कि बडी माँसे उत्पन्न बडे भाईके अलावा इनकी माँसे उत्पन्न एक छोटा भाई था, और एक बहिन भी थी—



इन्होंने छोटे भाई मोहम्मद रजीको अपने स्थान पर रखा और स्वयं जीविकाकी खोजमे बाहर निकले। कुछ समय आगराके आस-पास फिरते रहे पर कोई साधन जीविकोपार्जनका न मिला तो जन्मभूमिको प्रणाम किया और दिल्लीकी ओर चल पड़े। बड़ी दिक्कतोसे वहाँ पहुँचे। वहाँ जाकर कहाँ ठहरे, इसका कोई पता नही लगता। पर एक दिन घूमते-फिरते अमीरुलउमरा समसाम-उद्दौलाके भतीजे मोहम्मद बासितसे भेट हो गयी। अमीरुलउमरा इनके पिताके भक्तोमे थे। मोहम्मद बासित इन्हे अपने चचा के पास ले गये। उन्होने पूछा—'यह किसका लडका है ?' बासितने जवाब दिया—'मीर मोहम्मदअली का।' फर्माने लगे—'इसके यहाँ आनेसे तो जाहिर[1] होता है कि वह राहिए अदम[2] हुए।' बडा दु:ख प्रकट किया। उसके बाद कहने लगे—'उस शख्स[3] के मुझपर बहुतसे हुकूक[4] है। इस लडकेको एक रुपया रोज हमारी सरकारसे दिया जाय।' इस पर 'मीर' ने निवेदन किया कि जब नवाब साहबने इतनी कृपा की है तो मेरे प्रार्थना-पत्र पर लिखित आदेश देनेकी भी कृपा करे। यह कहकर जेबसे प्रार्थना-पत्र निकाला और पेश कर दिया। धनिक एव विलासी राज्याधिकारी टाल-मटोल वाले हुआ ही करते है। नवाबने कह दिया :—"वक्ते कलमदान नेस्त" अर्थात् "कलमदानका वक्त नही है।" मीर साहब लिखते है कि यह सुन कर मुझे जोरोकी हँसी आ गयी। नवाबने चकित होकर देखा और पूछा—"क्यो भई ! क्या है ? हँसे क्यो ?" मैने झट कह दिया कि मैने हुजूरके इस फिकरेका मतलब नही समझा। अगर आप यह फर्माते कि हस्ताक्षरका समय नही या क़लमदान उठानेवाला नही तो खैर एक बात भी थी किन्तु यह कहना कि वक्तेकलमदान नही है, एक अजीब और नया मुहाविरा है। कलमदान कोई जानदार तो है नही, वह तो लकड़ीका है, उसके लिए कोई समय या असमय नही होता, जिससे कहिएगा उठा

---

१. प्रकट। २. मृत्युके पथिक। ३. व्यक्ति। ४. अधिकार।

लायेगा ।' इस पर नवाव हँसने लगे और वोले–'ठीक कहते हो।' उसी वक्त कलमदान मँगवाकर अर्जी पर हस्ताक्षर कर दिये और मुझे वड़े स्नेह एवं कृपापूर्वक विदा किया ।"

इससे सिद्‌ध होता है कि वचपनमे ही उनको भापा पर कैसा अधिकार मिल गया था और उनकी मेधा कितनी तीव्र थी ।

इस प्रकार उनकी तुरन्तकी कठिनाई दूर हो गयी । 'मीर' को यह वृत्ति नादिरशाहके हमले—१७३९ ई०—तक मिलती रही । उस हमलेमे अमीरुलउमरा समसाम उद्‌दौला मारे गये और वृत्ति वन्द हो गयी । इस प्रकार एक डेढ साल वाद जीविकाका प्रश्न फिर उठ खड़ा हुआ । अव यह फिर वेकार और परीशान हो गये ।

ऐसा जान पडता है कि वापकी मृत्युके वाद जीविकाकी तलाशमे दो-एक वरस यह आगराके आस-पास ही चक्कर काटते रहे । लगभग १३ सालकी अवस्थामे दिल्लीकी ओर रवाना हुए । वहाँ भी तुरन्त ही तो इनकी भेट नवाव साहवसे हुई न होगी । एकाध साल गुजरनेके वाद यानी १४॥–१५ सालकी उम्रमे यह नवावसे मिले होगे । फिर लगभग १६॥–१७ सालकी उम्र तक उन्हे यह वृत्ति मिलती रही होगी ।

नादिरशाहके हगामेके वाद यह वतनको लौट गये । पर वहाँ लोगोकी दुनियादारीसे इनके भावुक हृदयको गहरी ठेस लगी । किशोरावस्थाकी

देहलीकी दूसरी यात्रा

उभरती उमगे लोगोकी आँखोमे स्नेहकी दीप्ति ढूँढती है, जिन्दगी सौ-सौ वल खाती है, रोती, नाचती और खिलखिलाती है; मन किसीसे वँधना चाहता है—किसीका होना चाहता है, किसीको अपना बनाना चाहता है । वहाँ कही इसकी गुजाइश न थी । लोगोके दिल समयके लौह दण्डसे कुट-पिट कर चौरस हो रहे थे । इनकी स्नेहकी प्यास वहाँ न वुझी, किसीने इनसे वह प्रेमल व्यवहार न किया जिसकी इनको आशा थी । वह लिखते है :—

"जो लोग दरवेश (पिता) की ज़िन्दगीमें मेरी खाके पा[1] को सुर्मा समझ कर आँखोंमें लगाते थे अब उन्होंने एकबारगी मुझसे आँखें चुरा लीं ।"*

निराश हो कर यह पुनः दिल्ली लौटे और इस बार अपने सौतेले बड़े भाईके मामा सिराजुद्दीन अली खाँ 'आरजू'के यहाॅ ठहरे। खाँ आरजू उस समय दिल्लीके बौद्धिक एव साहित्यिक जगत्मे बड़ी प्रतिष्ठा रखते थे और 'इमामुल मुताख़रीन' कहे जाते थे। यह उनके पास रहते थे और कुछ लोगोंकी सहायतासे बराबर अपना अध्ययन भी जारी रखे हुए थे। 'आरजू' भी इनकी शिक्षा-दीक्षामे बड़ी दिलचस्पी लेते थे। पर वह पुराने ख्यालके बुजुर्ग थे। उधर दिल्लीसे आगरा लौटने पर, ऐसा जान पडता है कि 'मीर' किसी विधुवदनी पर मोहित हो गये थे। इस बातसे इनके सौतेले बडे भाई और चिढ गये और उन्होने अपने मामासे उनकी शिकायत लिखी कि वह धूर्त्त और उपद्रवी है। उसकी शिक्षा-दीक्षा पर परिश्रम न करें। § इससे मामा और चिढ गये और इनके साथ कठोरताका व्यवहार करने लगे। ‡

इससे मीरका मानसिक सन्तुलन दिन-दिन बिगड़ता गया। उस समय

---

१. पैरकी धूल।

* "कसाने कि पेश दरवेश खाके पाए मरा कहलबसरी साख्तन्द, एक बार अज नजरम अन्दाख्तन्द।" पृष्ठ ६३।

§ "मीर मोहम्मद तकी फितनए-रोजगार अस्त। जीनहार व तर्बियत ओ न : बायद परदाख्त।"

‡ "वह अजीज वाकई दुनियादार शख्स था। भाँजेके लिखनेसे मेरे दर पे हो गया। जब कभी मुलाकात होती तो बिला वजह बुरा-भला कहना शुरू कर देते और तरह-तरहसे तकलीफ पहुँचानेकी कोशिश करते। मेरे साथ उनका सलूक ऐसा था जैसे किसी दुश्मनसे होता है। अगर उनकी दुश्मनीकी तफ़सील करूँ तो एक दफ्तर हो जाय।"

की उनकी मनोव्यथाकी कल्पना कीजिए। एक ऐसे पिताका लड़का जिसकी चरण-धूलि लेनेको न जाने कितने लोग उत्सुक रहा करते थे, ससारमे अनाथ, सब साधनोसे हीन, बेकार, परीशान, प्रेमकी असफलतासे निराश और दिल्ली जैसी महानगरीमे जिसके एक मात्र आश्रय मे था उससे भी प्रताडित। क्या स्थिति रही होगी, इनके मनकी। असीम मनोव्यथा के कारण यह लगभग पागल हो गये। किवाड बन्द कर लेते और दिन-दिन भर पडे रहते। चाँदकी ओर देखते रहते। उसमे एक सूरत नजर आती। 'जिक्रे मीर' तथा अपनी मस्नवी 'ख्वाबो खयाल'मे भी अपनी अवस्थाका वर्णन इन्होंने किया है —

चला अकबराबादसे जिस घड़ी।
दरो बाम[1] पर चश्मे हसरत[2] पड़ी॥
पस[3] अज क़तअ रह[4] लाये दिल्लीमें बख्त[5]।
बहुत खींचे याँ मैंने आजार[6] सख्त॥
जिगर[7] जौरे गर्दू[8] से खूँ हो गया।
मुझे रुकते-रुकते जुनूँ[9] हो गया॥
हुआ खब्तसे मुझको रब्ते तमाम[10]।
लगी रहने वहशत[11] मुझे सुबहो शाम॥
य वहमे ग़लतकार[12] याँ तक खिंचा।
कि कारे जुनूँ[13] आस्माँ तक खिंचा॥

---

१ द्वार एव छत। २. लालसापूर्ण नयन। ३. अत.। ४. वह रास्ता छोड़कर। ५ भाग्य। ६. यातनाएँ। ७. हृदय (यकृत)। ८. जमानेके अत्याचार। ९. उन्माद। १०. आत्मीयताका विच्छेद। ११. पागलपन। १२. मिथ्या भ्रम। १३. उन्मादका प्रभाव।

नज़र रातको चाँद पर गर पड़े।
तो गोया कि बिजली सी दिल पर पड़े॥
महे चारदह[1] कारे आतिश[2] करे।
डरूँ याँ तलक मैं कि जी ग़श[3] करे॥
नज़र आये इक शक्ल महताब[4] में।
कमी आये जिससे खूरो खाबमें॥

जब हालत ज्यादा खराब हो गयी तब मित्रों एव प्रियजनोने चिकित्सा शुरू की। ऐसे समय फ़खरुद्दीन ख़ाँकी पत्नीने, जो इनकी निकट सम्बन्धिनी भी थी, इनकी बड़ी सेवा की। उन्होने इलाजके साथ मन्त्रोपचार भी कराया। धीरे-धीरे इनकी तबीयत ठीक हो गयी। पर खाँ आरजूसे इनका दिल फट गया; वह अन्तर बढ़ता ही गया और अन्ततोगत्वा एक दिन यह वहाँसे हट गये।

परस्पर-विरोधी विवरण

खाँ आरजू और 'मीर' के पारस्परिक सम्बन्ध क्यों बिगडे, इसका कोई स्पष्ट कारण, ज्ञात नही होता। भाजेकी शिकायतसे एक गम्भीर विद्वान्का इतना चिढ जाना कि दुश्मन-जैसा व्यवहा करने लगना, कुछ समझमे आनेवाली बात नही है। उस समयके प्राप्त सभी विवरणोमे खाँ आरजूकी विद्वत्ता, गम्भीरता तथा सहृदयताकी प्रशसा मिलती है। स्वय मीरने अपने प्रथम ग्रन्थ 'नकातुश्शुअरा' मे उनकी बड़ी प्रशसा की है और उन्हे अपना उस्ताद माना है। एक जगह तो लिखा है कि ऐसा फ़ाजिल[5] हिन्दुस्तानमे कोई नही बल्कि विदेशोमे भी सन्देह ही है कि कोई होगा। उधर अपनी बादकी किताब जिक्रे मीरमे, जिसका प्रणयन खाँ आरजूकी मृत्युके एक साल बाद

---

१. चौदहवीका चाँद, पूर्णचन्द्र। २. आगका काम। ३. मूर्च्छा। ४. चन्द्र। ५. विद्वान्।

आरम्भ हुआ, वह उनकी कठोरता एव अन्यायकी बात लिखते है।* तब क्या सत्य है? या तो ख़ाँ आरज़ूके जीवन-कालमे उन्होने उनके विरुद्ध कुछ लिख कर और उत्तेजित करना और अपने मार्गकी कठिनाइयाँ बढाना उचित नही समझा, या फिर बादमे छोटी-छोटी घटनाओको लेकर उन्हे बढ़ा-चढा दिया है। 'नकातुश्शुअरा' एक साहित्यिक समीक्षा ग्रन्थ है; उसमे कवि-चर्चा है; काव्यका विवेचन है। सम्भव है, इसीलिए 'मीर' ने उसमे अपनी व्यक्तिगत बातो और निजी झगडोकी चर्चा करना उचित न समझा हो 'किन्तु ज़िक्रे मीर' मे वह अपनी जीवन-घटनाएँ लिख रहे थे। इसका सम्बन्ध उनके निजी जीवन और अनुभवोसे था, इसलिए सभव है, इसमे अपने मार्गमे आने वाली कठिनाइयोके निदर्शनके लिए उन्हे लिखा हो।

बहरहाल, इतना तय है कि ख़ाँ आरज़ूसे मीरका सम्बन्ध बादमे कड़ुवा हो गया। शम्सुलउलमा मौलाना मुहम्मदहुसेन 'आज़ाद' ने अपने ग्रन्थ 'आबे हयात'मे इस बिगाड़का कारण यह बताया है कि ख़ाँ आरज़ू हुनफी थे और यह शिया इसीलिए किसी मस्ले पर बिगडकर अलग हो गये। पहली बात तो यह कि इसका भी कोई निश्चित प्रमाण नही है कि मीर शिया-थे। उनके पूर्वज तो निश्चित रूपसे सुन्नी थे। हाँ, यह ज़रूर है कि उस समय न केवल राजनीतिक क्षेत्रमे वरं विद्या एव साहित्यके क्षेत्रमे भी शिया प्रभाव फैलता जा रहा था। वस्तुत. मीर धर्मके बारेमे बड़े उदार थे; वह प्रेम-धर्मी थे। प्रेमधर्मी पितामे उच्च आध्यात्मिकताके कारण जो आत्म-नियन्त्रण था वह मीरमें न था। उन्हे इसका समय एव अवसर ही नही मिला। फिर

---

*आश्चर्य तो यह है कि डा० अब्दुलहक़ जैसे विद्वान्ने इसी आधार पर नकातुश्शुअराके बादमे लिखे जानेकी कल्पना की है। जब दोनों ग्रन्थोके प्रणयन कालके सम्बन्धमे निश्चित प्रमाण उपलब्ध है तब ऐसी कल्पना भ्रमात्मक है। एक नही, अनेक स्थानो पर बार-बार उस कालका उल्लेख है जिसमे ये दोनो ग्रन्थ लिखे गये।

किशोरावस्था; वह प्रेमी, सौन्दर्योपासक बन गये। किसीके प्रेममें बदहवास इधर-उधर फिरते थे। इससे कुछ बदनामी भी होने लगी थी। ख़ाँ आरज़ूको यही बुरा लगा होगा। और एक बार जब आदमी पर एक छाप पड़ जाती है तो जल्द मिटती नही। जो भी बात हो, इतना तो मानना ही पड़ेगा कि मीरके जीवन और काव्य पर—और काव्य पर तो बहुत ज़्यादा—खाँ आरज़ूकी छाप पडी है। खॉ आरज़ूकी फ़ारसी तरकीबो एव शब्दोको, जो उनके कोशमे है, मीरने खूब अपनाया है और उनका अच्छा निर्वाह किया है।

उन्माद शान्त होने पर 'मीर' ने पुनः स्वाध्याय आरम्भ किया। एक दिन बजारमे एक किताबका कोई अश लिये बैठे थे कि एक जवान मीर

अन्य गुरुजन

जाफर उधरसे गुजरा। यह लिखते है :—"मुझे देखा और बैठ गया। कहा, मालूम होता है तुम्हे पढनेका शौक है। अगर मेरा अनुमान सत्य है तो मै तुम्हे पढा सकता हूँ। मै भी विद्याभ्यासी हूँ पर कोई समानधर्मा नही मिलता।" मीरने कहा—"मै आपकी कोई खिदमत तो कर नही सकता, अगर यों ही यह जहमत गवारा फर्माये[1] तो इनायत[2] होगी।" उन्होंने कहा—"मगर बगैर नाश्ताके मेरे लिए कही आना-जाना मुमकिन नही है।" मीर बोले—"मेरे पास कुछ नही है पर खुदा यह मुश्किल भी आसान करेगा।" तबसे मीर जाफर इन्हे पढाने लगे। मीरने लिखा कि वह बड़ी मेहनतसे मुझे पढाते और मुझसे भी जहाँ तक बन पडता उनकी ख़िदमत करता। यह क्रम कुछ दिनों तक चला। बादमे घरसे कोई जरूरी पत्र पाकर मीर जाफर अपने वतन (पटना) चले गये।

कुछ दिनों बाद 'मीर' की भेट सय्यद सआदत अलीसे हो गयी। यह अमरोहाके रहनेवाले थे और रेखतामे शेर लिखते थे। अबतक 'मीर'

---

१. कष्ट स्वीकार करे। २. कृपा।

फारसीमे कविता करने लगे थे पर रेखताका रिवाज बढ रहा था। सआदत अलीने इन्हे रेखतामे लिखनेको उत्साहित किया। मीरके हृदयमे पिता एव अमानुल्ला द्वारा दिये हुए गहरे प्रेम-सस्कार थे, हृदयमे वेदना थी, ख़ॉ आरज़ूका रग था, यौवनकी अँगडाई और खुमारी थी, स्वाध्याय-अर्जित फारसी एव अरबीका ज्ञान था, बस इन्होने रेख़तामे काव्यका प्रणयन आरम्भ कर दिया और उसको पकडा तो ऐसा पकडा और ऐसा गहरा अभ्यास किया कि शीघ्र ही दिल्लीके प्रतिष्ठित शायरो[1] मे गिने जाने लगे। पर जो तुनुकमिजाजी इनमे आ गयी थी वह इनकी जिन्दगीसे कभी न गयी। एक दिन ख़ाँ आरज़ूने अपने साथ खानेके लिए बुलाया। बातचीतमे ख़ाँ आरज़ूके मुँहसे कोई ऐसी बात निकल गयी जिसे 'मीर' बर्दाश्त[2] न कर सके और बिना खाना खाये घरसे बाहर चले गये। जामा मस्जिदकी ओर चले किन्तु न जाने ध्यान कहाँ था कि रास्ता भूलकर हौजकाजी पर जा निकले। प्यास लगी थी, वहाँ रुककर पानी पीने लगे। उधरसे अलीमउल्ला नामका एक आदमी जा रहा था। उसने इन्हे देखा तो आगे बढकर इनसे पूछा—"क्या जनाब का नाम मीर मोहम्मदतकी 'मीर' है?" इन्होने पूछा—"आपने कैसे पहचाना?" वह कहने लगा कि आपकी मजनूँनाना हरकतोकी तो शहर भरमे धूम है। खैर, निवेदन यह है कि एतमाद उद्दौला कमरुद्दीन खाँके बहनोई* रिआयत ख़ॉ आपसे मिलनेको बड़े उत्सुक है। अगर मेरे साथ तशरीफ ले चले तो मेहरबानी होगी।" इन्होने स्वीकार कर लिया। अलीमउल्लाके साथ पहुँचे। रिआयत ख़ॉने बड़े तपाकसे इनका स्वागत किया। बस, उस दिनसे मीर उनके यहाँ नौकर हो

---

१. कवियो। २ सहन।

*'आसीने इन्हे कमरुद्दीन खाँका दामाद लिखा है। और डा० अब्दुल-हक़ने दौहित्र। पता नही क्या गोरखधधा है। वस्तुत. यह अजीमुल्ला खाँके पुत्र थे।

गये। यह सन् १७४८ ई० की बात है। इस समय मीरकी उम्र २५–२६ सालकी रही होगी। उनके शेरोंकी धूम थी और कविके रूपमे वह दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो चुके थे। इसीके ३ साल बाद १७५१ ई० मे उन्होने 'नकातुश्शुअरा' लिखा जिससे प्रकट होता है कि लोग इनके शेरोकी बड़ी इज्जत करते थे।

परिवर्तनोंकी आँधीके बीच चलते हुए

इस समय देशकी दशा बहुत बुरी थी। कब क्या होगा, कोई नही जानता था। मीर साहबने वह जमाना देखा था, जब पिताके पास लोगों की भीड़ लगी रहती थी। उनकी साधुता तथा चचाकी प्रेमोपासनाका उनपर गहरा असर पडा था। फिर वह एकदम अनाथ हो गये। स्नेहकी छाया उनपरसे उठ गयी। जिनसे उम्मीदे थी, उन्होंने कनाराकशीकी। बे-आस, बेसहारे यह ससारके अनजान मार्ग पर चल पडे। दुनियामे जो कुछ देख रहे थे, उससे सासारिक ऐश्वर्य परसे इनकी आस्था उठ गयी थी। जैसे हवाके झोके आते और चले जाते है वैसे ही वह उसे समझते थे। दरवेशों और ईश्वर-भक्तोकी सगतने इनके दिलमे प्रेमकी गरमी पहिलेसे ही पैदा कर दी थी; जीवनका जो रूप देखा उसने हृदयको और कोमल एव करुणार्द्र कर दिया। वह देख रहे थे कि अभी जिनके यहाँ महफिल लगी है, मुसाहब घेरे हुए है, सुख एव विलासके सब साधन प्रस्तुत है, थोड़ी देर बाद वही सूखी रोटीको मोहताज है, न कोई दोस्त है न पुरसाँ हाल। देहली जो किसी समय ऐश्वर्य एव शान्तिका केन्द्र थी, रोजकी लडाइयो, परिवर्तनो और रुधिर-पिपासाके बीच व्याध-बाणके सामने पड़ी मृगी की भाँति भयभीत थी। चारो ओर गुण्डो और उचक्कोका राज्य था। आज एक उठा, कल दूसरेने उसे क़त्ल किया और इसके पहिलेके अधिकार उसके हाथमे आवे, खुद मार दिया गया :—

चोर उचक्के सिख मरहठे शाहो गदा[1] सब ख्वाहाँ[2] हैं,
चैनसे हैं जो कुछ नहीं रखते फ़क्र[3] भी एक दौलत है यहाँ।

मतलब हालत ऐसी थी कि शान्ति एव सुखकी बात तो दूर रही, लोगोको जिन्दगी और इज्जत बचानी मुश्किल हो गयी।

'मीर' सुबह कुछ शाम कुछकी इस अवस्थामे बहुतोको गुजरता हुआ देख रहे थे और खुद भी गुजर रहे थे। रिआयत खाँके साथ रहते कुछ ही दिन बीते थे कि दुर्रानियोका हमला हुआ। रिआयत खाँके साथ इन्हे भी जाना पडा। मोहम्मद शाहका अन्त हुआ; अहमदशाहको तख्त पर बिठाया गया। इस समय ख्वाजासरा जावेद खाँकी तूती बोलती थी। उधर राजस्थानकी ओरसे मरहठे चले आ रहे थे। साँभरके समीप उनसे लडाई हुई जिसमे रिआयत खाँके साथ यह भी थे। वहीसे अजमेर ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्तीकी दरगाहकी जियारत[4] को गये। देहली वापिस आये तो फिर बेकार हो गये। नवाब साहबके साथ रहे, कुछ चैन मिला। अरबीका अध्ययन शुरू किया कि फिर हवा बदल गयी। सफदर जगने धोकेसे नवाब बहादुरको मरवा डाला। फिर बेकारी आई पर अबतक वह काफी प्रसिद्ध हो चुके थे इसलिए इस बार ज्यादा कठिनाई न हुई। दीवान महानारायणने इन्हे बुलवा लिया। कुछ दिन चैनसे कटे कि बादशाह और वजीरमे युद्ध आरम्भ हो गया। छ. महीने तक यह सिलसिला चलता रहा। इसी ज़माने (१७५३ ई०) मे अपने उस्ताद और मामा खाँ आरजूका स्थान छोड कर स्वय अमीर खाँ 'अजाम' की हवेलीमे रहने लगे। उधर सफदर जगका देहावसान हो गया, शुजाउद्दौला अवधके सूबेदार बनाये गये।

'मीर' के काव्योत्कर्षका यह मध्यकाल था। अपनी गहराई और दर्दमन्दी, अपनी जबान और प्रसाद गुणके कारण यह दिल्ली पर छा गये थे। गजलोका यह हाल था कि लोग उन्हे तोहफे[5] की तरह दूर-दूर अपने

---

१. राजा-रक। २ इच्छुक। ३. फकीरी। ४. दर्शन। ५. उपहार।

सम्बन्धियोंको भेजते थे। बडे-बड़े लोग उनकी अछूती भावनाओ और कविताओं पर जान देते थे। जिसे देखिये, इनसे मिलनेको उत्सुक रहता था। पर इनका जरा-जरा सी बात पर गर्म हो जानेका स्वभाव मतलब इनकी तुनुक-मिजाजी बढती ही जा रही थी। एक दिन राजा जुगलकिशोरने* इन्हे अपने मकान पर बुलाया। कुछ सुना-सुनाया और अपना कलाम[1] इस्लाह[2] के लिए पेश[3] किया। मीर साहब तिनक गये। मामूली शिष्टाचार और दुनिया-दारीका भी पालन न किया। क्रोधमे सारे कलाम पर छुरी फेर दी। भला ऐसे आदमीसे क्या सत्सग हो सकता था। परिणाम वही हुआ कि कष्ट और विपत्तिमे पडे रहे; राजासे जो लाभ हो सकता था वह नही हुआ। फिर भी इतना जरूर हुआ कि राजा जुगलकिशोरने राजा नागरमलसे परिचय करा दिया। नागरमल उस समय खालसाके दीवान थे। उन्होने भी मीरके काव्यकी बड़ी तारीफ़ की। राजाके लडकेने कुछ मासिक वृत्ति बाँध दी। यह वृत्ति एक साल तक उन्हे मिलती रही। फिर स्वय राजाने भी एक सालकी तनख़ाह दिलवा दी। बीच-बीचमे भी मीरको उनसे कुछ न कुछ मिलता रहा।

इस बीच राजाकी उन्नति हुई। वह नायब वजीर हुए। उम्दतुल मुल्ककी उपाधि प्राप्त की किन्तु उससे मीरको कोई विशेष लाभ पहुँचनेके पूर्व ही अचानक दुर्रानीका दूसरा आक्रमण हो गया। राजा नागरमल अपने कुटुम्बियों और साथियोको लेकर भरतपुरके राजा सूरजमलके किलेमे चले गये। मीर भी उन्हीके साथ थे। उधर वे गये; इधर दिल्लीमे वहशतकी एक आँधी आई। नालियोमे खून वहने लगा, लाशे सड़कोपर बिछ गयी।

---

* यह कौमका भाट और पेशेसे मद्यविक्रेता था। मोहम्मद शाहके जमानेमे वगालका वकील हो गया। अपने बेटेकी शादी इस शानसे की कि ऐसी दूसरी न हुई।

१. काव्य-रचना। २. सशोधन। ३. प्रस्तुत।

कुछ शान्ति हुई तो मरहठोने फिर दिल्लीको दबोच लिया। उधर मीर साहब राजा नागरमलसे आज्ञा लेकर तरह-तरहकी विपत्ति झेलते हुए बरसाना पहुँचे। वहाँसे मुखेर गये। यहाँ सफदरजंगके खजांची राधाकृष्ण-के पुत्र बहादुरसिंहने इनका बडा आदर-सत्कार किया। जब मरहठो और दुर्रानियोका युद्ध समाप्त हो गया तो राजा नागरमल मुखेर पहुँचे। राजाके पुत्र राय बिशनसिहने मीर साहबको ठहरा लिया था और कुछ मासिक वृत्ति भी नियत कर दी थी। पर मीर साहबकी तो किसीसे पटती न थी। उन्होने राजासे कहा कि अबतक हुजूरका इन्तजार[1] था वर्ना मैं यहाँ रहनेवाला नही था; अब जानेकी आज्ञा दे। राजाने कहा—कुछ खबर है कि आप यह फर्मा क्या रहे हैं ? ऐसे खतरेके वक्त मै आपको जानेकी इजाजत नही दे सकता। इसके बाद तनख्वाह नियत कर दी और कुछ और भी उपहार दिया। इसलिए यह वही रह गये और काफी अर्से तक वहाँ रहे। जब मराठे हार गये और दुर्रानियोका पूर्ण अधिकार दिल्लीपर हो गया तब पुराने सरदारोको फर्मान[2] भेजकर बुलाया गया। राजा नागरमलके नाम भी सदेश पहुँचा। वह दिल्ली आये। मीर साहब भी उनके साथ ही आये। पर इस बीच दिल्लीपर जो तबाही गुजरी थी उसका वर्णन सम्भव नही है। "नक्शा ही बदल गया था; न वे गृह न वे गृही, न वे मुहल्ले, न वे बाजार, हर तरफ वहशत, हर तरफ वीरानी, न दोस्त न[3] आशना।"* मीर साहबका दिल रो पडा। उनपर इस परिवर्तन एवं विनाशका गहरा असर पडा। उनका हृदय निम्नलिखित शेरोमे रो रहा है :—

दिल्लीमें आज भीक भी मिलती नहीं उन्हें,
था कल तलक दिमाग़ जिन्हें तख़्तो ताजका[4]।

---

१. प्रतीक्षा। २. राजाज्ञापत्र। ३. प्रेमी। * आसी—'कुल्लियाते मीर' मे पृ० २६। ४. सिंहासन और मुकुट।

दिल्लीमें अबके आकर उन यारोंको न देखा
कुछ वे गये शिताबी[1] कुछ हम ब-देर[2] आये।

× × ×

मंज़िल न कर जहाँको[3], कि हमने सफ़रसे आ,
जिसका लिया सुराग़[4], सुना वे गुज़र गये।

× × ×

शहाँ कि कह्ल जवाहर[5] थी खाके पा[6] उनकी
उन्हींकी आँखोंमें फिरती सलाइयाँ देखीं।

नागरमल जहाँ भी जाते, मीर साहबको साथ ले जाते थे। जब उन्हे शुजाउद्दौलाके पास सफाईके लिए भेजा गया तब भी मीर साथ थे; जब सूरजमलके बुलानेपर अकबराबाद (आगरा) गये तब भी मीर साथ थे। लगभग तीस सालके बाद वतनमे लौटे थे इसलिए अपने बुजुर्गोंकी मजारो पर प्रार्थना की, प्रियजनोसे मिले। अकबराबाद भी बहुत बदल गया था इसलिए जी न लगा। फिर भी चार महीने वहाँ रहे। बादमे राजाके साथ ही सूरजमलके क़िलेमे लौट गये। आगरामे इनके पास शायरोंकी भीड लगी रहती थी।★ इससे ज्ञात होता है कि कविके रूपमे वह बडे

---

१. शीघ्रतासे। २. देरसे, विलम्बसे। ३. ससार। ४ भेद। ५. रत्नाजन, श्रेष्ठ सुरमा। ६. पद-धूलि।

★ 'मीर' खुद लिखते है :—"वहाँके शुअरा मुझे उस्तादे फन समझ मुझसे मिलने आते थे। मै सुबह शाम दरियाके किनारे जा बैठता। "मेरी शेरगोई" की शोहरत आलममे फैल गयी थी चुनाँचे शर्मगी माशूक, खुश-तरकीब और जामाजेब हसीन और बहुतसे पाकीजा तीनत और मौजूं-तबीयत मेरे गिर्द जमा रहते और मेरी इज्जत करते। दो-तीन बार शहर भी गया और वहाँके उलमा, फुक़्रा और शुअरासे मिला लेकिन कोई ऐसा

लोकप्रिय हो गये थे। उनकी विद्या और ज्ञानकी अपेक्षा लोग उनके काव्यके प्रेमी अधिक थे।

राजा नागरमलके साथ ही दूसरी बार भी आगरा गये। इस बार केवल १५ दिन रहनेका मौका मिला।

कुछ समयके वाद यह राजासे अलग होकर फिर देहली आये। कुटुम्बको अरव सरायमे छोडकर फिर जीविकाकी खोजमे घूमने लगे। यह इनके जीवनका सवसे कठिन समय था। उम्र काफी हो चुकी थी। अव कठिनाइयाँ सहन करनेकी वह ताकत न थी। फिर भी एक-एकके सामने गये, प्रार्थना की पर किसीने इन पर ध्यान न दिया। बहुत दिनो तक तकलीफे झेलनेके वाद हिगामुद्दौलाके भाई वजीहउद्दीनखाँने कुछ वृत्ति दी जिससे किसी प्रकार जीवन वीतने लगा।

इस कठिन समयमे काव्य ही इनके जीवनका एक मात्र सुख था। वही इन्हे कठिनाइयोके वीच भी आनन्द प्रदान करता था। यह मुशायरोमे जाते, दोस्तोसे मिलते, हँसते, गप्पे लगाते। मतलव उनमे खूब स्फूर्ति थी। ख्वाजा मीर दर्द, मीर सज्जाद, मीर अलीनकी काफिर तथा मसहफी इत्यादिके यहाँ आना-जाना होता रहता था।

मुखातिव जिससे दिले वेतावको तसल्ली होती, नही मिला। मैंने दिलमे कहा—"सुभानअल्ला ! यह वह शहर है जिसकी हर गली, कूचेमें आरिफे कामिल, फाजिल, शायर, मुशी, दानिशमद, मुतकल्लिम, हकीम, सूफी " दरवेश और खानकाह, मेहमासराएँ, मकान और वाग मिलते थे। आज वहाँ कोई ऐसी जगह नही मिलती कि कुछ देर खुशीसे बैठूं और कोई आदमी ऐसा नही मिलता कि उससे वाते करके लुत्फ उठाऊँ। सारा शहर एक वीराना है जिससे एक वहशत टपकती है। मै चार माह आगरेमे रहा। चलते वक्त वडी हसरत हुई ...।"

मै पहले लिख चुका हूँ कि 'मीर' आरम्भसे ही बडे तुनुकमिजाज थे। जब उनका काव्योत्कर्ष हुआ वह दिल्ली पर छा गये तथा दूर-दूर तक उनकी प्रसिद्धि हो गयी। इससे उनके स्वाभिमानने अहकारका रूप धारण कर लिया। दूसरे शायरों पर फबतियाँ कसने लगे। इससे काफी नाराजी फैली। यहाँ तक कि धीरे-धीरे लोगोने इनसे मिलना-जुलना छोड दिया, बल्कि बहुतसे लोग इनके विरुद्ध हो गये। लोगोने इनके खिलाफ़ कहना और लिखना भी शुरू कर दिया। 'बका' का एक शेर देखिए, जिसमे इस विरोधकी झलक है :—

पगड़ी अपनी सँभालियेगा 'मीर'
और बस्ती नहीं य दिल्ली है।

दिल्लीकी बर्बादी, जीविका की कठिनाई, साथियोंकी कनाराकशी तथा शायरोमे बढते हुए विरोधके कारण इनका दिल और टूट गया। बाहर निकलना छोड दिया। खुद लिखते है :—

"फकीर इन अय्याम[1] मे खानानशीन[2] था। बादशाह अक्सर तलब फर्माते[3] थे मगर मै न गया। अबुलकासिम खाँ, सूबेदार कश्मीर मेरे साथ बहुत सलूक करता था। मै कभी-कभी उसकी मुलाकातको जाता था, और बादशाह भी कभी-कभी कुछ भेज देते थे।"

शेरोमे भी इस स्थितिकी झलक है :—

मीर साहबको देखिए जो बने,
अब बहुत घरसे कम निकलते हैं।

× × ×

क्या कहें मीर जी हम तुमसे मआश अपनी ग़रज़,
ग़मको खाया करे है लोहू पिया करते हैं।

---

१. दिनों। योमका बहुवचन। २. घरमे रहने वाला। ३. बुलाते

मनमे बार-बार दिल्ली छोडनेकी इच्छा भी होती थी पर साधन-हीन होनेसे विवश थे। फिर जाते तो कहाँ जाते ? अकबराबादकी वही हालत थी। दिल्लीका पतनकाल था। बार-बार उनकी इज्जत लुटती थी। कल क्या होगा, कोई जानता न था। दक्षिणकी ओर जानेमे लम्बा सफर था। ले देके रह गया था लखनऊ, कभी-कभी उधर ही ध्यान जाता था।

सयोग कहिए या 'मीर' का भाग्य, वजीरुल्मुल्क नवाब आसफउद्दौला को एकाएक इनका ख्याल आया। उन्होने नवाब सालार जग और उनके छोटे भाई इसहाक खाँ नजीमुद्दौलासे मीरका जिक्र किया और फर्माया कि अगर मीर मोहम्मद तकी यहाँ आ जायँ तो अच्छा है। उन लोगोने निवेदन कियाकि अगर नवाब साहब राह खर्चके लिए कुछ हुक्म कर दे तो मीर साहब यहाँ आ सकते है। राह खर्च मिल गया। और उन लोगोने इन्हे लिख दिया कि श्रीमन् नवाब साहब याद करते है, जिस तरह हो सके आप यहाँ आ जाइए। दिल्लीकी लडाइयो, अशान्ति, अव्यवस्था, आर्थिक कष्टसे यह ऊबे हुए थे ही, खत मिलते ही लखनऊ जानेके लिए तैयार हो गये। यद्यपि दिल्ली उनके प्राणोमे बसी हुई थी और मरते दम तक बसी रही परन्तु चाह कर भी वहाँ रहनेका साधन न होनेसे इन्हे उसे छोडना ही पडा।

आँसू भरे हुए और यह कहते हुए कि 'रुखसत ऐ अहले वतन हम तो सफर करते है' दिल्लीसे रवाना हुए। पहला वतन अकबराबाद बचपनमे ही छूट गया था, अब बुढापे मे दूसरा वतन और प्यारा शहर दिल्ली भी छूट गया। उन्होने स्वय लिखा है :—

लखनऊ आगमन

"चूँकि खुदा का यही मशा था, मै बे यार व मददगार बगैर काफले और रहबर[1] के फर्रुखाबादके रास्तेसे गुजरा। वहाँके रईस मुजफ्फर जग थे। उन्होने हरचन्द[2] चाहा कि कुछ रोज वहाँ ठहर जाऊँ मगर मेरे दिलने

१ पथदर्शक। २ सब तरहसे।

क़बूल न किया। दो रोजके बाद रवाना होकर मजिले मकसूद पर पहुँच गया।"

लखनऊमें पहिले सालार जगके यहाँ गये। उन्होने बडी आव-भगत की और नवाबसे कहला भेजा। उन दिनो लखनऊमे मुर्गोकी लडाईका बडा जोर था; जहाँ देखो मुर्गोकी पालियाँ हो रही है। सयोगकी बात कि नवाब एक दिन मुर्गोकी लड़ाई देखने आये। मीर भी वहाँ मौजूद[1] थे। एकाएक नवाबकी नजर इन पर पड़ी। पूछा कि क्या आप मीर तकी मीर हैं। आसिफउद्दौला शिष्टाचार, सभ्यता और प्रेमकी मूर्ति थे। मालूम होते ही गले लगे और अपने बैठनेकी जगह ले गये। अपना कुछ कलाम[2] सुनाया; 'मीर' को अच्छा लगा, उन्होने खुलकर प्रशसा की। उन्होने मीरसे भी कुछ सुनानेकी फर्माइश की। अपनी एक गजलके चद शेर इन्होने सुनाये। जब चलने लगे तो नवाब सालार जगने कहा कि अब मीर साहब, आपके आदेश के अनुसार, हाजिर हो गये है। उन्हे कोई जगह दे दी जाय। वजीरुलमुल्क आसिफुद्दौलाने कहा—मै कुछ नियत करके आपको इत्तिला[3] कर दूँगा। दो तीन दिन बाद याद फर्माया। हाजिर हुए और एक कसीदा पढा। उसी दिनसे वहाँ नौकर हो गये। तीन सौ रुपये मासिककी वृत्ति बाँध दी गयी और यह सम्मान और आरामकी जिन्दगी बिताने लगे।

क्या 'आज़ाद' का बयान ग़लत है ?

उपर्युक्त विवरणसे मालूम होता है कि 'मीर' बड़े आदरपूर्वक लखनऊ बुलाये गये थे, और जैसा 'मीर' ने खुद लिखा है कि आनेके बाद वह सालारजगके पास पहुँचे थे। पर मुहम्मद हुसेन 'आजाद' ने अपने 'आबेहयात' मे लिखा है :—

---

१. उपस्थित। २. कविता। ३ सूचना।

"· 'इसलिए १७७६ ई०* मे दिल्ली छोडनी पडी। जब लखनऊ चले तो सारी गाडीका किराया भी पास न था। नाचार एक शख्सके साथ शरीक हो गये और दिल्लीको खुदा हाफिज कहा। थोडी दूर आगे चलकर उस शख्सने कुछ बात की। यह उसकी तरफसे मुँह फेरकर हो बैठे। कुछ देरके बाद फिर उसने बात की। मीर साहब चीबर्ची[1] होकर बोले कि साहब किबला[2] आपने केराया दिया है, बेशक गाडीमे बैठिये मगर बातोसे क्या तअल्लुक[3]?" उसने कहा—"हजरत! क्या मुजायका[4] है, राहका शगल है, बातोमे जरा जी बहलता है।" मीर साहब बिगडकर बोले—"आपका शगल है, मेरी जबान खराब होती है।" §

---

*'गुलशने हिन्द' और 'गुलजारे इब्राहीमी' दोनोमे इनके लखनऊ जानेका समय सन् १७८२ ई० दिया हुआ है। स्पष्ट लिखा है कि उस समय सौदाकी मृत्यु हो चुकी थी। सौदा १७८० ई०मे मरे थे। मीर हसनने भी अपने तजकिरेमे १७८० मे मीरके दिल्लीमे होनेकी बात लिखी है। इससे १७-८२का समय ही ठीक जान पड़ता है।

§ सआदत अलीखाँ नासिरने अपने ग्रन्थ 'तजकिरा खुश मार्कए जेबा' मे भी, ज़रा परिवर्तित रूपमे इस घटनाका जिक्र किया है —

"जब मीर साहब अकबराबादसे पूरबको चले, हस्ब इत्तफाक एक बनियेके साथ गाड़ीमे सवार हुए मगर वक्त सवार होनेके कुछ रात बाकी थी। जब रोज रोशन हुआ और सूरत उसकी देखी, मुँह अपना उधरसे फेर लिया और लखनऊ तक उसकी तरफ मुँह करके न बैठे। सुभान-अल्ला! क्या आली दिमाग लोग थे कि जरूरतमे भी नागवारको गवारा न करते थे।"

१ चिढना। २ बडोके प्रति सम्बोधनका ढग। ३ सम्बन्ध। ४ हर्ज।

"लखनऊ पहुँचकर, जैसा मुसाफिरोका दस्तूर[1] है, एक सरायमे उतरे। मालूम हुआ, आज एक जगह मुशायरा है। रह न सके। उसी वक्त गजल लिखी और मुशायरेमे जाकर शामिल हुए। इनकी वजअ[2] क़दीमाना[3] खिड़की दार पगडी, पचास गजके घेरका पाजामा, एक पूरा थान पिस्तौलिए का कमरसे बँधा, एक रूमाल पटरीदार तह किया हुआ......नागफनीकी अनीदार जूती जिसकी डेढ बालिश्त[4] ऊँची नोक, कमरमे एक तरफ सैफ यानी सीधी तलवार दूसरी तरफ कटार—...गरज जब दाखिल महफिल[5] हुए तो वह शहर लखनऊ नये अन्दाज[6], नयी तराशे[7] बाँके टेढे जवान जमा। इन्हे देखकर सब हँसने लगे। मीर साहब बेचारे गरीबुल वतन[8], जमाने[9] के हाथ पहिले ही दिल शिकस्ता[10], और भी दिलतग[11] हुए और एक तरफ बैठ गये। शमअ[12] इनके सामने आई तो फिर सबकी नजर पडी और बाज अशखासने[13] पूछा कि हुजूरका वतन कहाँ है?" मीरने तीव्र वेदना भरे स्वरमे पढ़ा—

क्या बूदो बाश[14] पूछो हो पूरबके साकिनो[15]।
हमको गरीब जानके हँस-हँस पुकारके॥
दिल्ली जो एक शह्र था आलम[16] में इन्तखाब[17]।
रहते थे मुन्तख़ब[18] ही जहाँ रोज़गार[19] के॥

---

१. ढग, नियम। २. रूपरग। ३. पुरातन। ४ वित्ता। ५. सभामे प्रविष्ट। ६. ढग। ७. काट। ८. जिसका वतन छूट गया हो। ९. युग। १०. भग्नहृदय। ११ खिन्न। १२. मोमबत्ती, दीपक। पुराने मशायरोमे हर शायरके सामने शमअ लाई जाती थी, तब वह गजल पढता था। १३. कुछ व्यक्तियो। १४. रहन-सहन। १५. निवासियों। १६. ससार। १७. प्रसिद्ध। १८. चुने हुए। १९. युग।

उसको फ़लकने[1] लूटके वीरान कर दिया।
हम रहनेवाले हैं उसी उजड़े दियार[2] के॥

सवको मालूम हुआ। लोगोने माफी माँगी। सुवह होते-होते मशहूर हो गया कि मीर साहव तशरीफ लाये है।"*

इस बयानमे और 'मीर' तथा दूसरोके बयानमे विरोध मालूम होता है। एकका कहना है कि राह खर्च भेजकर आसफउद्दौलाने मीरको वुलवाया और वह सालार जगके पास पहुँचे, दूसरा बयान ऊपर दिया गया है कि कैसी वुरी हालतमे लखनऊ आये। पर विचार करने पर मुझे दोनो विवरणोमे कोई विशेप विरोध नही जान पडता। दिल्लीमे मीर साहवकी आर्थिक स्थिति वहुत खराव हो गयी थी। ऐसे वक्त राह खर्चमेसे, वहुत मुमकिन है, कुछ हिस्सा दिल्लीमे ही खर्च हो गया हो, लोगोका हिसाव-किताव करनेमे। दूसरी वात यह कि विल्कुल सभव है कि पहले वह सरायमे जाकर ठहरे हो और दूसरे दिन सफरकी थकान मिटाने और कपड़े वगैरह वदलनेके वाद सालार जगके यहाँ गये हो। हाँ, यह जरूर है कि 'आजाद' ने नमक मिर्च मिलाकर घटनाको रगीन बनानेकी कोशिश की है।

लखनऊमे मीर साहवकी बडी इज्जत हुई। लोगोने उनको हाथो हाथ लिया। दरवारमे उनका वड़ा सम्मान था और नवाब वजीर उनको

लखनऊ निवास

इतना मानते थे कि यात्रामे भी साथ रखते थे। कई वार तराईकी ओर शिकारमे ले गये। आर्थिक दृष्टिसे भी लखनऊमे जो सुविधा इन्हे मिली, वह कभी नही मिली थी। यह इनका सौभाग्य है कि इन्हे तीन सौ रुपये मासिक मिलते थे, जब 'गालिव' तकको दिल्ली और रामपुरसे इतनी बडी रकम मयस्सर न हुई।

---

१ आकाश (उर्दू काव्यमे समस्त विपत्तियोका मूल आकाश है।)
२ शहर, देश। * आवेहयात पृष्ठ २०५–२०६।

'जौक' को तो आरम्भमे सिर्फ चार रुपये महीना वजीफा मिलता था, बादमे पाँच और सात रुपये हुए और अन्तमे सौ रुपये मिलने लगे थे। 'मसहफी' की हालत भी बहुत खराब थी।

दिल्लीका जादू इन परसे कभी न उतरा

लखनऊने हर तरह इनका सम्मान किया। आसफ उद्दौलाके बाद नवाब सआदत अलीखाँने भी इनको तनख़ाह जारी रखी। चारों तरफ़ इनकी धूम थी; लोग इनकी इज्जत करते थे पर अपने अभिमानी स्वभावके कारण इनकी ज्यादा दिन किसीसे न बनी फिर गरीबीकी मारसे यह लखनऊ आ तो गये थे पर दिल्लीका जादू इनके सिरसे कभी न उतरा। उस उजडे दयारमे एक विचित्र आकर्षण था जो मीरको बराबर खीचता था इसलिए रुपया-पैसा, सामान सब पाकर भी लखनऊमे यह कभी दिलसे खुश न रहे। लोगोकी तारीफ़को 'असमझवार सराहिबो' समझते थे।* उनके काव्यमे इस शिकायतकी झलक बार-बार मिलती है—

रही न गुफ़्ता[1] मेरे दिलमें दास्ताँ मेरी।
न इस दयारमें समझा कोई ज़बाँ मेरी॥

× × ×

बहुत कुछ कहा है करो मीर बस।
कि अल्लाह बस और बाक़ी हवस॥
जवाहर[2] तो क्या-क्या दिखाया गया।
खरीदार लेकिन न पाया गया॥

× × ×

---

१. व्यक्त, कथन। २. रत्न।

*मसहफीने लखनऊके एक मशायरेके बारेमे लिखा है—"वज़्मे नाम-हरम व मर्दुम हमा बेगाना तमाम।

मुताए[1] हुनर फेर कर ले चलो।
बहुत लखनऊमें रहे घर चलो॥

× × ×

दिल्लीकी प्रशसा करते नही अघाते—

हफ़्त अक़लीमें[2] हर गली है कहीं।
दिल्लीसे भी दयार होते हैं॥

× × ×

दिल्लीके न थे कूचे[3] औराक़े मुसव्विरें[4] थे।
जो शक्ल नज़र आई तस्वीर नज़र आई॥

× × ×

दिल्ली थी तिलिस्मात कि हर जागह मीर।
इन आँखोंसे आह हमने क्या-क्या देखा॥

× × ×

दिलो दिल्ली दोनों हैं गर्चे खराब,
पै कुछ लुत्फ़ उस उजड़े नगरमें है।

एक जगह अत्यन्त व्यथापूर्ण एव करुणार्द्र स्वरमे वायुको दूत बना दिल्लीवालोके पास सन्देश भेजते है.—

ऐ सबा[5] गर शह्रके लोगोंमें हो तेरा गुज़ार।
कहियो हम सहरानवर्दों[6] का तमामे हाले ज़ार[7]।
ख़ाके देहलीसे जुदा[8] हमको किया एकबारगी।
आसमाँको थी कुदूरत[9] सो निकाला यों गुबार।

१ पूँजी। २. सप्तदेश। ३ गलियाँ। ४ चित्रकारके पृष्ठ। ५ प्रभाती वायु। ६. मरुवासियो, वनवासियो। ७. बुरा हाल। ८ अलग। ९. मनोमालिन्य।

इतना ही नही, लखनऊसे एक प्रकारकी घृणा-सी थी । देखिये:—

ख़राबा दिल्लीका दहचन्द[1] बेहतर लखनऊसे था ।
वहीं मैं काश मर जाता सरासीमा[2] न आता याँ ॥

× × ×

बरसोंसे लखनऊमें अक़ामत[3] है मुझको लेक[4] ।
याँके चलनसे रखता हूँ अज़्मे सफ़र[5] हनोज़[6] ॥

× × ×

आबाद उजड़ा लखनऊ चुग़दों[7] से अब हुआ ।
मुश्किल है इस खराबेमें आदमकी[8] बूदोबाश[9] ॥

यद्यपि वह अन्तिम दिन तक लखनऊमे रहे और वहीकी मिट्टीमे समाधिस्थ हुए पर अन्त तक दिल्लीका आकर्षण इन पर छाया रहा । जैसे वहाँकी उजडी जमीन इन्हे पुकार रही हो ।

सामान्य दृष्टिसे देखे तो उन्हे लखनऊमे कोई तकलीफ न थी । दिल्लीकी तरह यहाँ उनका जीवन अनिश्चित न था । आरामसे गुजरती थी । उनका यश भी फैला हुआ था । लोग उनकी प्रशसा भी करते थे तब क्या कारण है कि इनका मन दिल्लीकी ओर दौडता था और लखनऊ इनके दिलको विजय न कर सका था । मनोवैज्ञानिक अध्ययनसे ये सब गुत्थियाँ भी खुल जाती है.—

इस आकर्षणका कारण

१. लखनऊमे उनके काव्यके प्रशसक तो थे पर उसके पारखी न थे । लोग ऊपरसे प्रशसा करते थे, समझकर नही ।

---

१. दसगुना । २. व्यग्रचित्त, परीशान । ३. निवास । ४. लेकिन, किन्तु । ५ प्रवासका सकल्प । ६ अबतक । ७ उल्लुओ । ८. आदमी । ९. रहन-सहन ।

२. मीर पुरानी तर्जके आदमी थे। जीवनमे गभीरताके अनुरागी, इसलिए लखनऊकी काट-छॉट और छैलापन उन्हे बिलकुल न भाता था। लखनऊकी सभ्यतामे रगीनी और रूप था पर दिलकी गर्मी न थी। ऑखे उससे ठडी होती थी पर दिल नही। वह बाहरी चमक-दमक वाली सभ्यता थी।

३ उजड़ी दिल्ली इनके मानसिक जगत्के अधिक अनुकूल थी। इनका टूटा, उजडा, लुटा दिल, इनकी सारी व्यथारजित जिन्दगी दिल्ली से मेल खाती थी क्योकि वह उस खिजाका प्रतीक थी जो इनकी जिन्दगी पर सदाके लिए छा गयी थी।

४ वह लखनऊकी भीडके बीच भी अपनेको सदा अकेला अनुभव करते थे। वह उस पौधेकी भॉति थे जो एक प्रतिकूल जलवायुमे रोप दिया गया हो।

५ जिस प्रेम और सौन्दर्यका वर्णन सुनकर लखनऊके दिलकी कली खिल उठती थी वह हलका, चूमाचाटी वाला प्रेम था, उसमे गहराई न थी। उसमे वह दर्द न था जो जिन्दगीकी घाटियोको हरा-भरा रखता है, उसमे वह आग न थी जिसमे जलकर आदमी नवयौवन प्राप्त करता है; उसमे वह सूक्ष्म दृष्टि न थी जो जगत् एव जीवनके प्रश्नोके भीतर प्रवेश करती है।

६ लाख लोग तारीफ करते हो पर 'मीर' को सुनकर नही बल्कि जुर्रतको सुनकर लखनऊ वाले खिल उठते थे। मीर जिन मूल्योके लिए अमर है जुर्रत उनका विनाश-साधक था। 'मीर' के दिलकी व्यथाभरी पुकारे जुर्रतके चूमा-चाटीमे बदल जाती थी।*

---

* 'तजकिरा करीमुद्दीन' (पृष्ठ २०६–२०७) मे लिखा है :—

"मजलिसे शुअरा मिर्जा मोहम्मद तकी खॉ तरक्कीके घर मुनअकद हुई। जुर्रतकी बहुत तारीफ हुई। जुर्रत मीर तकी 'मीर'से दादख्वाह अपने

७. यौवन कालमे 'मीर' उन्मादके रोगी रह चुके थे। रोग अच्छा हो गया था पर अपना असर छोड़ गया था। उसने इनकी अकड़ और तुनुक मिजाजीको और बढा दिया था। अपनी झुझलाहटमे बार २ उन्हे दिल्ली याद आती थी।

वस्तुत. मीरके जीवनकी सम्पूर्ण प्रेरणाएँ दिल्लीसे प्राप्त हुई थी। सभ्यताके उनके मानदण्ड, सास्कृतिक मूल्याकन, रग-ढग, रहन-सहन, शिष्टाचार, सब दिल्लीसे उन्हे प्राप्त हुए थे। इस उजड़े नगरका शताब्दियोंका अतीत आदमीको कुछ शिक्षा देता था। उसने न जाने कितने साम्राज्योंकी समाधि देखी थी; इस विनाश-परम्पराने जीवनकी जड़ोको अन्त.स्थ कर दिया था, वह ज्यादा गहराईमे चली गयी थी इसलिए एक प्रकारकी आध्यात्मिक दृष्टि लोगोंमे थी। यहाँ लखनऊका हाल दूसरा था। यह नगरी उस रमणीके समान थी जो यौवनकी पहली अँगडाईमे हो और उसकी आँधी उसे उड़ाये लिये जा रही हो। डा० फारुकीने भी यही बात लिखी है—

"मीरके लिए लखनऊ जाना एक तहजीबी सानहा[1] से कम न था। दिल्ली लाख उजड़ चुकी थी लेकिन वह एक अजीमुश्शान[2] तहजीबकी निशानी थी····सल्लनत मुगलियाके कमजोर हो जाने और दौलतमन्दीके मिट जानेसे लखनऊको तरक्की करनेका मौका मिला और दिल्लीकी सारी

अशआरका हुआ। मीरने दो-चार वार खातिरदारी की। जब देखा कि मगज उसका चल निकला है, कहा कि जब तुम बदी जद्दो कद पूछते हो, लाचार कहता हूँ—कैफियत इसकी यह है कि तुम शेर तो कहना नही जानते हो अपनी चूमाचाटी कह लिया करो।"

हकीम कुदरत उल्ला कासिमने जुर्रतको लखनऊके कवियोका शिरमौर लिखा है और इस घटनाको भी उद्धृत किया है।

१. सास्कृतिक, सभ्यतागत, दुर्घटना, २. ज्वलन्त, श्रेष्ठ।

रौनक[१] वही सिमट आई लेकिन अवधने बादशाहतके एलानके साथ तमद्दुन[२] व मुआशरत[३] मे अपने मजाकके मुताबिक इस्लाहे[४] की और इस बातकी पूरी कोशिश की कि देहलीकी तहजीबी कयादत[५] से भी छुटकारा मिल जाय चुनाञ्चे लिबास[६], वजअ कतअ[७], तराश-खराश, नशस्त व बर्खास्त[८], आदावो इख़्लाक[९] और शेरो अदब[१०] मे तब्दीलियाँ[११] हुई ···। मीर जिस जमानेमे लखनऊ गये है, दिल्ली सयासी[१२] और इकतसादी[१३] मुश्किलात मे घिरी हुई थी और आलम[१४] यह था कि—

हर रोज़ नया क़ाफ़ला पूरब को रवाँ है।

लखनऊमे एक नई बिसात बिछाई जा रही थी, नई रवायतें क़ायम हो रही थी।··· मीरकी जेहनी नशवोनुमा[१५] देहलीमे हुई थी और उसकी तहजीबी कदरे[१६] उनकी रूह[१७] मे दाखिल[१८] हो चुकी थी इसीलिए उनके यहाँ लखनवी माहौल[१९] के खिलाफ रूअमल भी सख्त है।"

यह हाल कुछ मीरका ही न था। देहलीकी सास्कृतिक जलवायुमे पले जो भी शायर लखनऊ आये, सब कुछ ऐसा ही अनुभव करते थे। इस नये वातावरणमे उनका दम घुटता था; वे इसके अनुकूल अपनेको ढालनेमे असमर्थ थे। 'मसहफी' का भी अनुभव 'मीर' ही-जैसा था। उन्होने लिखा है —

यारब शहर अपना यों छुड़ाया तूने।
वीरानेमें मुझको ला बिठाया तूने॥

---

१ शोभा, २ सस्कृति, ३. जीवन-प्रणाली, ४ सशोधन, ५. बन्धन, ६ वेशभूषा, ७ रग-ढग, ८ उठना-बैठना, ९. शिष्टाचार, १०. काव्य और साहित्य, ११ परिवर्तन, १२ राजनीतिक, १३. आर्थिक, १४. हालत, १५ बौद्धिक निर्माण, १६ सास्कृतिक मूल्य, १७ आत्मा, १८. प्रविष्ट, १९ वातावरण।

मैं और कहाँ यह लखनऊकी खिलक़त[1] ।
ऐ वाय यह क्या किया ख़ुदाया तूने ॥

दिल्लीवालोंको अपनी जबान पर अभिमान था। वे दिल्लीके बाहर-वालोंको इस मामलेमे नीचा समझते थे। 'मसहफी' लिखते है :—

दिल्ली नहीं देखी है, ज़बाँदाँ य कहाँ हैं ?

पुनः लिखते है :—

सहराइयाने पूरब क्या जानते हैं इसको ।
ऐ मसहफ़ी जुदा है अन्दाज़ इस ज़बाँका ॥

मीरका अपनी भाषा पर अभिमान डेखिए—

अव्वल तो मैं सनद[2] हूँ, फिर य' मेरी ज़ुबाँ है ।

× × ×

यह हमारी ज़बान है प्यारे ।

बकौल उनके लखनऊमे उनकी जबानको समझनेवाले न थे—

किस-किस अदासे रेखते मैंने कहे वले ।
समझा न कोई मेरी ज़ुबाँ इस दयारमें ॥

जन्म-मृत्यु

'मीर' की जन्म-तिथिके सम्बन्धमे काफी मतभेद है। इतना तो निश्चित है कि पैदा अकबराबाद (आगरा) मे हुए थे। बादमे कठिनाइयोंके कारण दिल्ली गये।* १७१४ से १७३२ तकके बीचमे कभी इनका जन्म हुआ होगा। इन्होने लम्बी उम्र पाई। कोई १००, कोई ९० लिखते है। पर मृत्यु-तिथिके प्रमाण निश्चित है। १२२५ हिजरी (१८१२ ई०) शोबानकी २० तारीख

---

१. जनता। २ प्रमाण।* नकातुश्शुअरामे 'मीर' ने स्वय लिखा है :—"वतन अकबराबाद अस्त। बसबब गर्दिशे लैलो निहार अजचन्दे दर शाहजहाँबाद अस्त।" (पृष्ठ १६३)।

शुक्रवारको शामके वक्त इनकी मृत्यु लखनऊमे हुई। नासिख़ने जो तारीख़ कही § है, उससे भी यही प्रमाणित होता है।

अन्तिम दिन

बूढ़े हो गये थे। निराशा और अन्तर्वेदना तेजीसे उन्हे खा रही थी। आँखे कमजोर हो गयी थी, और भी छोटे-मोटे एकाध रोग लग गये थे पर ऐसे अशक्त न हुए थे कि किसी पर निर्भर करते हो या खाट पर पडे हों। अपने सब काम अपने हाथो करते थे। काव्य-गोष्ठियोमे भी बराबर शामिल होते थे। पर भाग्य ने पलटा खाया। एक पर एक चोट उनको लगती गयी। पहिले उनकी लड़कीकी मृत्यु हुई। दूसरे ही साल एक लड़का मरा और तीसरे साल उनकी पत्नी चल बसी। इन घटनाओने उनका दम तोड़ दिया; भग्न हृदय हो गये। वुढापेमे कोई अपना न रहा। दु खसे पागल हो गये। बाहर निकलना छोड दिया; मशायरो तथा दूसरी रगीन मजलिसोमे जाना छोड़ दिया। दिल्लीकी जीवन-प्रणाली* यो ही लखनऊमे बदल गयी थी, अब

---

§ तारीख़ कहना—उर्दू और फारसी साहित्यमे यह परम्परा है कि जव कोई प्रसिद्ध कवि, साहित्यकार वा महान् पुरुप परलोकवासी होता है तो उसका कोई विद्वान् या कवि भक्त कुछ ऐसे काव्यात्मक पदकी रचना करता है जिसमे एक ओर तो उसके गुणोका सूत्रवत् वर्णन रहता है और दूसरी ओर उन अक्षरोके मूल्य (ध्यान रहे कि इनके यहाँ प्रत्येक अक्षरका साख्यिक मूल्य नियत है) का योग करने पर वह तिथि निकलती है जब मृत्यु-घटना घटी रहती है। 'नासिख़' ने 'मीर' की जो तारीख़ कही, वह यो है '—'वावेला मर्दे गहे शायरॉ।"

* "नागाह दर मुहल्ला रसीदम कि दर आनजामी मान्दम। सोहवत मी दाश्तम। शेर मीखान्दम। आशकाना मी जीस्तम। इश्क बाखुशकदॉ मी वाख़्तम। ऐगान रावुलन्द मी अन्दाख़्तम। वा सिलसिला मूयॉ मी बूदम। परस्तिश न कोयाँ मी नमूदम। अगर दमे वेऐशा मी नशस्तम तमन्ना वर तमन्ना मी शिकस्तम। वज्म मी आरास्तम। ख़ूवॉरा मी ख्वास्तम। मेहमानी मी करदम। जिन्दगानी मी करदम।"

निराशा और दु:खके कारण वह समाप्त-सी हो गयी। शेरो-शायरीका मजा भी जाता रहा; जीवन-प्रवाह शिथिल हो गया। वह स्वयं अनुभव करने और कहने लगे:—

लुत्फ़े सख़ुन[1] भी पीरी[2] में रहता नहीं है मीर,
अब शेर हम पढ़े हैं तो वह शद्दोमद नहीं।

कुछ परलोककी भी फ़िक्र हुई। ख्याल आया, अब ऊँची बातोंकी ओर, पुण्य कार्योंकी ओर ध्यान देना चाहिए। लिखते है:—

किसको दिमाग़े शेरो सख़ुन ज़ोफ़[3] में कि मीर
अपना रहे हैं अब तो हमें बेशतर ख़याल।

× × ×

बस बहुत वक्त़ किया शेर के फ़न में ज़ायाँ[4]
मीर अब पीर हुए तर्कें ख़यालात करो।

एक ओर यह अन्तर्वेदना, दूसरी ओर धीरे-धीरे रोगोमे वृद्धि। यह बीमार पड़ गये। खाट पकड ली और छ: मास तक बिस्तरपर पड़े रहे। जितने भी राजचिकित्सक और प्रसिद्ध हकीम थे, इनके दोस्तो और प्रशसकोमे थे। अन्त्रशूल हो गया था और वह बढता जाता था। सबकी राय हुई कि ऐसी दवा देनी चाहिए कि कब्ज न रहे। उन्हे एक रेचक दवा दी गयी। नियतिका खेल देखिए कि जिस दवाको चिकित्सकोने लाभके लिए दिया था वही उनके लिए घातक हो गयी। एक-एक दिनमे डेढ-डेढ सौ दस्त आने लगे। रोग और मौतने साँठ-गाँठ की और एक सच्चा शायर सदाके लिए सो गया। महल्ला सिठिट्ठीमे यह रहते थे। अब यह महल्ला नही है पर उन दिनो काफ़ी आबाद था। इसी मुहल्लेमे

---

१. काव्यानन्द। २. बृद्धावस्था। ३. दुर्बलता। ४. नष्ट।

उर्दूके प्रसिद्ध कवि और बेजोड मर्सिया-लेखक मीर अनीसका भी मकान था। यह मुहल्ला गोमतीके दक्षिणी किनारेपर, आज जहाँ डालीगज है उसीके समीप, वसा हुआ था। इसमे इसी नामका एक बाजार भी था जहाँ सूतका क्रय-विक्रय होता था।

दूसरे रोज दोपहरको अखाडा भीम नामके एक प्रसिद्ध क़ब्रिस्तानमे दफनाये गये। लगभग ४०० आदमियोने इनके जनाजेकी नमाज पढी थी। यह कब्रिस्तान गोलागजमे रेलकी पटरीके बराबर दूर तक चला गया है। यहाँ टूटी-फूटी बहुतेरी कब्रे है; इन्हीमे कोई 'मीर' की भी होगी। शायद उन्हे भविष्यका आभास था, तभी तो उन्होने ख़ुद कहा है :—

मत तुर्बते[1] मीरको मिटाओ
रहने दो ग़रीबका निशाँ तो।

मृत्युके ठीक पहिले उन्होने यह शेर पढा—

साज़ पेच आमादा[2] है सब काफ़लेकी तैयारी है।
मजनूँ हमसे पहिले गया है अबके हमारी बारी है॥

मीर साहबके तीन सन्ताने थी—दो बेटे, एक बेटी। तीनोमे काव्य-रचनाकी प्रतिभा थी। बडे बेटे मीर अस्करी उर्फ़ मीर कल्लू बडी मस्त तबीयतके आदमी थे और पहले 'राज', फिर 'अर्श' उपनामसे कविता करते थे इनका एक दीवान भी है जो पहिले छपा था पर अब दुर्लभ है। यह अपने पिताके ही शिष्य थे और बहुत अच्छी कविता करते थे। कही-कही जबानकी सफाईमे अपने पितासे भी आगे है। "उम्र भर न किसी रईसकी दरबारदारी की, न किसीकी शानमे कसीदा लिखा। फुक्र व फाका[3] मे बसर कर दी[4]। बापकी तरह नाजुक थे।"* काफी नाम कमाया।

---

१. कब्र, २. तैयार, ३. साधुता व उपवास, ४. बिता दी।
*लाला श्रीराम (खुमखानए-जावेद)

१८६७ ई० मे मृत्यु हुई और लखनऊमे ही रकाबगज मुहल्लेमे दफन हुए। इनके शिष्य शेख़ मोहम्मदजानने इनके बारेमे लिखा है :—

"आप मोतवस्तुलकामत[1]. दोहरे जिस्मके थे। साँवला रग, कुर्ते पहिने, कभी सिर पर पगड़ी और कभी टोपी, अफीम पीनेके आदी थे और हुक्का कभी हाथसे न छूटता; मुशायरो और महफिलोंमे भी साथ लाते। मशायरोमे तरतीबे ख्वाँदगी[2] के आदी न थे, जब जीमे आता, साहब खाना[3] की इजाज़त लेकर अपनी ग़जल सुना देते और हुक्क़ा उठाकर रुखसत[4] हो जाते।"

इनमे मीरके अनेक गुण थे। मीर इन्हे मानते भी बहुत थे। मीर जब ज़्यादा वृद्ध और दुर्बल हुए तो एक रोज़ इन्हे बुलाकर कहने लगे—

"बेटा, हमारे पास माल व मुताए दुनियासे तो कोई चीज नही है जो आइन्दा तुम्हारे काम आये लेकिन हमारा सरमायए–नाज़[5] कानूने ज़बाँ ६ है जिसपर हमारी जिन्दगी और इज्ज़तका दारोमदार[7] रहा, जिसने हमको खाके जिल्लत[8] से आसमाने शोहरत ९ पर पहुँचा दिया। इस दौलतके आगे हम सल्तनते आलम[10] को हेच[11] समझते रहे तुमको भी अपने तर्कमे यही दौलत देते है।"

बेटेने बापकी इस दौलतको न केवल ग्रहण किया बल्कि उसमे वृद्धि की। जबानका बहुत ख्याल रखा। बस इनकी जबान देखिये—

गर हो न ख़फ़ा[12] तो कह दूँ जी की।
इस दम तुम्हें याद है किसी की।

---

१. मझोले क़दके, २. पढनेके क्रम, ३. अध्यक्ष, मीर मजलिस। ४. विदा, ५. गौरवपूर्ण पूंजी, ६. भाषाके नियम, ७. निर्भरता, ८. तुच्छ-भूमि, ९. प्रसिद्धिके आकाश, १०. ससारका राज्य, ११. तुच्छ, १२. क्रुद्ध।

गुलगीर[1] ने काट कर सिरे शमअ[2]
पर्वाना[3] से शब जली कटी की।
तर्तीबे कुहन[4] को वज़अ ऐ अर्श
हमने दीवानमें नयी की।

इनका एक शेर बहुत प्रसिद्ध है —

आसिया[5] कहती है हर सुबह बा आवाज़ बुलन्द[6]
रिज़्क़[7] से भरता है रज़्ज़ाक़[8] देहन[9] पत्थरके।

मीर फ़ैज़ अली

'मीर' के दूसरे बेटेका नाम था—मीर फैज अली। इनके नामपर मीरने फैजे मीर पुस्तक लिखी। इनके चन्द शेर नीचे दिये जाते है :—

न मानी तूने मेरी अपनी ही ज़िद बेवफ़ा रक्खी,
करें हम किससे अब जाकर हमारी तूने क्या रक्खी।
[10]कुदूरत जब न तब अन्दाज़से निकला ही की तेरे,
हमारी खाक[11] इस कूचे[12] में तूने कब सबा रक्खी।
बनाये सानये कुदरत[13] ने क्या-क्या फूल गुल यूँ तो,
मेरे इस गुलबदनमें कुछ अदा सबसे जुदा[14] रक्खी।

× × ×

---

१. वत्ती काटनेवाला, २. मोमवत्तीका सिर, ३. पतग, ४. पुराने कूम, ५. पनचक्की, ६. ऊँची, तेज, ७. भोजन, ८ दाता, ईश्वर, ९ मुँह, १०. मनोमालिन्य, रंजिश, ११. मिट्टी, १२. गली, . १३. प्रकृति-निर्माता, १४. अलग।

दौरमें साक़ी[1] तेरे आ निकले हैं मैनोश[2] हम,
जाम[3] खाली दे है क्या ? इतने नहीं मदहोश[4] हम।
बे-ज़बानीकी न पूछो वजह हमसे कोफ़्तमें,
चोट कुछ ऐसी लगी दिल पर कि हैं खामोश हम।

× × ×

नहीं मालूम किस रश्के क़मर[5] की राह तकते हैं,
कि सारी रात आँखोंमें कटा करती है तारोंको।

'मीर' के एक लड़की भी थी जिसे वह बहुत प्रेम करते थे। शादीके थोडे ही दिनों बाद उसका देहावसान हो गया। मीर खूब रोये और लिखा.—

अब आया ध्यान ऐ आरामेजाँ ![6] इस नामुरादीमें,
कफ़न देना तुम्हें भूले थे हम असबाबे शादीमें।

कई ग्रन्थोमे इनकी लड़कीका जिक्र मिलता है जो 'बेगम' के नामसे कविता करती थी। 'बेगम' की एक गजलके चन्द शेर देखिए—

बरसों ख़मे गेसू[7] में गिरफ़्तार तो रक्खा,
अब कहते हो क्या तुमने मुझे मार तो रक्खा।
कुछ बेअदबी[8] और शबेवस्ल[9] नहीं की,
हाँ यारके रुख़सार[10] पै रुख़सार तो रक्खा।

१. पिलाने वाला, २. मद्यप, ३. सुरापात्र, ४. मूर्छित, ५. जिसे देख चन्द्रको ईर्ष्या हो, ६. प्राणोके विश्राम, ७. अलककी वक्रता, ८. अशिष्टता, ९. मिलन-रात्रि, १०. कपोल।

वह ज़िबह करे या न करे गम नहीं इसका,
सर हमने तहे ख़ंजरे खूँख़ार[1] तो रक्खा।
इस इश्ककी हिम्मतके मैं सदके[2] हूँ कि 'बेगम',
हर वक्त मुझे मरने पै तैयार तो रक्खा।

कही-कही मिलता है कि मीरने बुढापेमे शादी भी की थी। पर इसका कोई प्रमाण नही है।



१. रक्त-पिपासु तलवारके नीचे। २ निछावर।

'मीर' : चरित्र-पक्ष

किसी व्यक्तिके निर्माणमे अनेक सस्कार काम करते है । पहला स्थान तो उन सस्कारोका है जो माॅ-बापसे या आनुवशिक परम्परा द्वारा सन्ततिको प्राप्त होते है । उसके बाद उस वातावरणकी बात आती है जिसमे बच्चा पलता और साॅस लेता है । फिर प्रशिक्षण और बौद्धिक प्रगतिके लिए प्राप्त सुविधाओंकी बारी आती है। इसके बाद मित्र-मण्डली तथा कौटुम्बिक वातावरणका स्थान है जिसमे वह चलता-फिरता, खेलता और हृदयका रस प्राप्त करता है ।

मीरको बचपनसे ही अपने पूज्य पिता और चचाकी उच्च भावभूमिमे रहने और सैर करनेका अवसर मिला था । ये दोनों हो सत प्रकृतिके

बचपनका वातावरण

थे; दुनियासे ज्यादा सम्बन्ध न रखते थे, प्रेम-रस मे डूबे हुए थे । प्रभुके ध्यानमे मस्त रहनेवाले; कभी-कभी उसी मस्तीमे रोते, बिलखते और सिर धुनते थे । प्रियतमके विरहकी आगमे जलते थे; रात-दिन, खाते-पीते, उठते बैठते, चलते-फिरते उसीका ध्यान था । आदमियोंमे भी उसीकी छाया दिखाई देती थी । उदार, सन्तोषी, त्यागी, साम्प्रदायिक क्षुद्रताओसे ऊपर उठे हुए उनमे सूफियोकी सब विशेषताएँ थी ।

'मीर'मे जो स्थिरता, दृढता, भौतिक सुखोके प्रति लापरवाही, उच्च मूल्योंके प्रति निष्ठा, आत्म-नियन्त्रण है उसका स्रोत उनके पिता और चचा

पिता और चचासे प्राप्त पूँजी

ही है । दोनों इन्हे बहुत मानते थे । बचपनसे ही मीरमे एक अद्भुत आर्द्रता थी जिसे पिताने लक्ष्य किया था । इस प्रेमकी तडपको देख कर ही पिताने एक दिन कलेजेसे लगाकर कहा था—"ऐ सरमायए जान ! यह कौन-सी आग है जो तेरे दिलमे निहाॅ है ?" वह

सदा कहते रहते थे कि बेटा, इस ससारमे प्रेम ही एक सत्य है। उसीसे और उसीको लेकर सम्पूर्ण जगत् है। इश्कमे दिल खोना, प्रेममे निमज्जन ही मानवका गौरव है। यद्यपि 'मीर'की उम्र इन गूढ शिक्षाओंको समझने की न थी पर वह उनकी ओर खिचते ही गये। इस तरह बचपनसे ही इनमे इश्ककी आग जल उठी थी,—वह आग जो जल कर फिर जन्म भर नही बुझी। यह दिन-दिन अन्त.स्थ होते गये, दिल दर्द और करुणासे पूरित होता गया। बाहरी टीम-टामसे ध्यान हटता गया। बचपनमे चचाके साथ अनेक दरवेशोके पास जाते थे। वहाँ जो देखा, जो सुना वह इनके अन्तःमन पर बैठता गया।

मुसीबतोंकी आँधीमें

एक ओर इस आन्तरिक संस्कृतिका लाभ उनको मिला, दूसरी ओर बचपनमे ही, उस सस्कृतिको पूर्णतः अपना बना लेनेके पूर्व ही इन पर पहाड़ टूट पडा। मुसीबतोकी ऐसी आँधी आई कि यदि पिता चचाके प्रारम्भिक सस्कार इन्हे दृढ न रखते तो यह उसमे उड़ कर लापता हो जाते। पहिले चचा मरे, फिर पिता चल बसे। ऐसी मानसिक व्यथामे भी बडे भाईने उपेक्षा एव स्वार्थपरताका व्यवहार किया। जो लोग पिताके समय इन्हे हाथो हाथ रखते थे उन्होने आँखे फेर ली। दुनियाकी भीड़के बीच भी एक अजब वीरानापन इनके चारों ओर था। इस इकलेपन, इस वीरानेपनकी छाया इनके समस्त काव्यमे है। यह बिना किसी पथ-दर्शक एव यारदोस्तके सुनसान दुनियामे भटकनेको विवश हुए।

छोटी-सी उम्र, साथी कोई नही, हमदर्द कोई नही और ज़माना ऐसा था कि बडे-बडे कलेजे वाले घरसे बाहर निकलते डरते थे। मुगलशक्तिका अध पतन तीव्र गतिसे हो रहा था। दिल्ली, शान-शौकतकी दिल्ली, शक्तियो का केन्द्र दिल्ली, भारतकी शासनसत्ताका प्रतीक दिल्ली, मध्ययुगीन भारतीय सभ्यताका स्रोत दिल्ली भूलुण्ठिता थी। बे-आबरू, बर्बाद, लुटी हुई, अपहृता नारीके समान बाल छिटकाये, विधवा-सी पर वैधव्यके तेज एवं

पवित्रतासे हीन दिल्ली, जहाँ कोई किसीका न था, जहाँ आजका मित्र कलका दुश्मन था, जहाँ आज आलिगन करने वाला मित्र कल कलेजेमे कटार भोंक देता था, दिल्ली डूब रही थी; रिक्तताके सागरमे डूबते हुए संध्याकालीन सूर्यकी भाँति। अन्धकार घिरता आ रहा था। लोग अकेले राह न चलते थे। काफिलोमे चलते थे और फिर भी लुटते थे। ऐसी अस्थिरताके युगमे सब प्रकारकी छायासे हीन, साधनहीन, अनाथ मीर जीविकाकी खोजमे उस दिल्लीकी ओर जा रहे है।

उन मानसिक एव शारीरिक विपत्तियोंकी कल्पना कीजिए जो बाप एव चचाकी मृत्युके बाद इस बच्चे पर पड़ी होगी। स्वभावतः उसका कलेजा कुम्हला गया, उसमे ऐकान्तिकता आई। अपने साथ और दुनियामे दूसरोके साथ जो व्यवहार उसने होते देखा उससे उसका दिल बुझ गया। यौवन कालमे दुनियाकी रगीनियो, चटक-मटक, उत्फुल्लता और मजोंकी ओर आर्कषित होनेकी जगह एक प्रकारका गहरा सूनापन, दुनियासे अलहदगी इनमे आती गयी।

यौवनमे प्रेम किया, उसमे भी असफलता ही हाथ लगी। इसलिए वह दु.ख और घना होता गया। गभीर विरह-दु.खसे इनका जीवन और उस जीवनसे निकलने वाला सम्पूर्ण काव्य भर गया।

बाह्‌य एवं अन्तर्जगत्‌के इन अनुभवोंको भावनाकी तीव्रताके कारण काव्यमे व्यक्त करनेमे इन्हे अद्‌भुत सफलता मिली। इनमे वह शोखी, छेड़-छाड़, शरारत कभी न आई जो यौवनमे जिन्दगीके इर्दगिर्द बिखर जाती है। जिस वातावरण और जीवनके तीव्र दु खद अनुभवोसे यह गुजरे उसके कारण इनमे एक तुनुकमिजाजी आ गयी। ससारके प्रति तीव्र विरक्तिके सस्कारोके बीच काव्यकी सफलताने इनके स्वाभिमानको इतना तीव्र कर दिया कि उस पर अभिमानका आवरण चढता ही गया। सारी जिन्दगी यह दुनियासे खिचे, साथियो और समकालिक साहित्यकारोसे खिचे रहे। करुणा, ससारके प्रति व्यापक सहानुभूति, दिलकी लोच, दूसरोको कलेजेसे

बाँध लेने, अपना लेनेकी जो शक्ति सामान्य अवस्थामे होती है, वही असाधारण स्थितियोके कारण इनमे गहरी वेदना, विरक्ति, खीझ, दूसरोके प्रति असहनशीलता और अहकार बन गयी।

ये सब वृत्तियाँ इनके जीवन एव काव्यमे मिलती है। इतने पर भी इनकी सफलता यही है कि आँधीमे भी यह अडिग रहे। दूसरा लडका इन स्थितियोमे बह जाता, ऐशो इशरतमे, लफगईमे पड जाता पर पिता चचा एव दरवेशोसे प्राप्त सस्कारोने इन्हे गिरने न दिया। प्रेमकी अभिव्यक्तियाँ सदा मामूली सतहसे ऊँची रही।

बेखुदी पिता, चचा एव दरवेशोंमे जो बेखुदी, मस्ती, अद्भुत बेहोशी थी—वह उस स्तर पर तो नही पर कुछ नीचे उतर कर इनमे भी थी। देखिए—

बेखुदी ले गई कहाँ हमको,
देरसे इन्तज़ार है अपना।

बेखुदीमे न जाने कहाँ पहुँच गये है और अपने ही लौटनेकी, अपने ही प्रत्यावर्त्तनकी प्रतीक्षा है। अपनी मानसिक स्थिति, खोये हुए मीरकी स्थितिको बार-बार बयान किया है—

बेखुदी पर न मीरके जाओ,
तुमने देखा है और आलममें।

× × ×

करते हो बात किससे वह आपमें कहाँ है?

और भी देखिए, जब दूसरी दुनियामे होते थे, मिलते न थे—

मिलने वालो, फिर मिलिएगा है वह आलमे दीगरमें,
मीर फ़क़ीरको सक्र है यानी मस्तीका आलम है अब।

और यह पिता चचा तथा दरवेशोंकी शिक्षाका ही परिणाम था कि मीर साम्प्रदायिक भेदभावसे सदा ऊँचे उठे रहे। मन्दिर और मस्जिदमे कोई

देरो हरम से ऊपर

भेद उन्हें कभी अनुभव न हुआ। वस्तुतः यह इन दोनोको सच्ची उपासनामे बाधक और वैमनस्य उत्पन्न करने वाला मानते थे। सूफियोंका मार्ग प्रेमका मार्ग था; वे प्रियतमके गहरे सान्निध्यके रसमे डूबे रहते थे और कर्मकाण्डीन उपासनाके प्रति उदासीन रहते थे। 'मीर' पर भी इसका असर है —

हम न कहते थे कहीं ज़ुल्फ़[1], कहीं रुख़[2] न दिखा,
इख़्तिलाफ़[3] आया न हिन्दू-मुसलमाँ के बीच।

× × ×

हम न कहते थे कि मत देरो-हरम[4] की राह चल;
अब य' दावो हश्र[5] तक शेखो-बरहमन में रहा।

मै ऊपर लिख चुका हूँ कि इनपर बचपनमे जो मुसीबतें आई, उनके कारण दुनियाके प्रति एक बे-दिमागी, एक कड़ुआहट इनमे आती गयी;

अहंकी प्रतिक्रियाएँ

स्वाभिमानने अहकारका रूप धारण कर लिया। प्रचलित मतो एव फैशनो के प्रति, ससारकी प्रशसा एवं मूल्योके प्रति एक विद्रोहका भाव इनमे आता गया। इसीलिए काव्योत्कर्षके जमानेमे किसीको कुछ न समझने की बे-दिमागी इनमे आई। इनके अभिमानी स्वभाव, खीझ और तुनुक-मिजाजीके सम्बन्धमे अनेक कहानियाँ कही जाती है। स्वभावतः यह गम्भीर थे; बातें कम करते थे। तुच्छ विलास-भावनाओसे सदा दूर रहते थे।

---

१. अलक, २. मुख, ३. भिन्नता, ४. मन्दिर और काबा, ५. प्रलय।

आत्माभिमान विकृत होकर इतना बढ़ गया था कि अधीनता तो दूर नौकरी का नाम भी बर्दाश्त नही कर सकते थे, किन्तु संसारका मार्ग इतना सरल नही है; विवश होकर उसमे चलना ही पड़ता है। इस अकड़का परिणाम भोगते थे फिर भी अकड़े रहते थे। इन शिकायतोंके लोगोंमे जो चरचे थे उससे वह स्वय भी परिचय रखते थे। एक मुख़म्मस (पचपदी) मे इनकी झलक मिलती है। कहते है :—

हालत तो यह कि मुझको ग़मोंसे नहीं फ़राग़[1]।
दिल सोज़िशे दरूनी[2] से जलता है जूँ चिराग़।
सीना तमाम चाक[3] है सारा जिगर है दाग़।
है नाम मजलिसोंमें मेरा मीर बे-दिमाग़।
अज़ बस कि कमदिमाग़ीने पाया है इश्तिहार[4]।

अपनी नाज़ुकमिजाजीके बारेमे खुद कहते है —

नाज़ुकमिज़ाज आप क़यामत है मीरजी,
जूँ शीशा मेरे मुँह न लगो मैं नशेमें हूँ।

× × ×

तेरी चाल टेढ़ी, तेरी बात रूखी,
तुझे मीर समझा है याँ कम किसूने।

× × ×

ज्यादा मिलने-जुलनेमे न थे, एकान्तप्रिय थे :—

सोहबत[5] किसीसे रखनेका उसको न था दिमाग़।
था मीर बे-दिमाग़को भी क्या बला दिमाग़।

---

१. मुक्ति, २. अन्तर्दाह, ३ विदीर्ण, ४. प्रसिद्धि, विज्ञप्ति, ५. संग।

बातें करे बरश्तगीए दिलकी पर कहाँ,
करता है इस दिमाग़जलेका वफ़ा दिमाग़।
दो हर्फ़[1] जेरे-लब[2] कहे फिर हो गया ख़मोश,
यानी कि बातें करनेका किसको रहा दिमाग़।

निरन्तरकी कठिनाइयों, असफलताओने इन्हे चिडचिडा बना दिया था। अक्सर कड़ी बाते कह जाते; लोगोंको बुरी लगतीं पर परवा न करते थे। जो मनमे आता कह डालते थे, ज़बान पर काबू न था। स्वय स्वीकार करते है :—

कहना जिससे जो कुछ होगा सामने मीर कहा होगा,
बात न दिलमें फिर गई होगी मुँह पर मेरे आई हुई।

अपने ज्ञान-भण्डार और काव्य-प्रतिभाको अक्षय धन समझ कर गरीब-अमीर किसीकी परवा न करते थे। अपने बेटेसे वृद्धावस्थामे कहा ही

अहंकार एवं स्वाभिमान

था—"बेटे मेरे पास माल व मुताए दुनियासे तो कोई चीज नही है जो आइन्दा तुम्हारे काम आये लेकिन हमारा सरमाए नाज क़ानूने जबाँ है।" इसी दौलत पर उनको गर्व था। अनेकानेक कठिनाइयाँ सह कर भी अपना सिर सदैव ऊँचा किये रहे। ऐसा कोई काम न करते जिससे अपनी स्वतन्त्रता पर कुछ भी भार पड़ता। चार दिनके भोग-विलासके लोभसे अथवा दीनताके दु:खसे अपना सिर दुनियाके आगे कभी न झुकाया। इनका काव्य इस बातका साक्षी है कि इनके दिलकी कली और त्यौरीकी गिरह कभी खुली नहीं। यदि इनका अभिमान इन्हे केवल अमीरोकी प्रशसा करनेसे रोकता तो विशेष हानि न थी परन्तु दु:खकी बात है कि औरोके कलामकी विशेषताएँ भी इन्हे दिखाई न पड़ती थी। मुखसे दूसरोकी प्रशसा

१. अक्षर, शब्द, २. ओठके नीचे।

बहुत ही कम निकलती थी। यह बात उनके यश रूपी शुभ्र वस्त्र पर एक भद्दे काले धब्बेके समान है। मामूली लोगोकी तो कौन गिनती, फारसीके सबसे प्रसिद्ध कवि सादी और गीराजीकी गजलोको भी खुल कर प्रशंसा नही करते थे।

दिल्लीमे मीर कमरुद्दीन खाँ 'मिन्नत' एक कवि हो गये है। एक बार सशोधनके लिए उर्दूकी एक अपनी गजल मीर साहबके पास ले गये।

फ़ारसी-वारसी कह लिया कीजिए

मीर साहबने वतन पूछा, उन्होने सोनीपत (पानीपतके पास एक स्थान) बताया। मीरने फर्माया—"जनाब उर्दू खास दिल्लीकी जुबान है, आप उसमे तकलीफ न कीजिए; अपनी फारसी-वारसी कह लिया कीजिए।"

एक बार नवाब तहमास्प बेग खाँके पुत्र सआदतयार खाँ 'रगी', जिनकी उम्र १४–१५ वर्षकी थी, बडी सज-धजसे मीर साहबके पास गये, और इस्लाह (सशोधन) के लिए गजल पेश की।

कविता दिल जलानेका काम है

मीर साहबने देख कर कहा—"साहबजादे! आप अमीर है, कुलीन है, तलवार-तीरन्दाजी वगैरा सीखिए, कविता दिल जलानेका काम है, उधर मत जाइए।" जब उन्होने बहुत हठ किया तो कहा—"आपकी तबीयत इसके योग्य नही है, शायरी आपको नही आयेगी, व्यर्थ अपना समय न खोइए।" इसी प्रकार उर्दूके प्रसिद्ध कवि 'नासिख'को भी इन्होने बेतरह फटकार बताई थी।

× × ×

दिल्लीमे जब थे तब 'अजदरनामा' नामकी एक मसनवी लिखी। उसमे अपनेको अजगर लिखा और अन्य कवियोमेसे किसीको चूहा, किसीको

अज़्दरनामा

कनखजूरा, किसीको बिच्छू और किसीको साँप बनाया। कहानी यो बनाई कि किसी पर्वतकी घाटीमे एक भयकर अजदहा (अजगर) रहता था। एक बार उसे हराने

और नष्ट कर देनेके लिए जगलके सब जानवर मिल कर उससे लड़ने गये। जब सामना हुआ तो अजगरने ऐसी गहरी साँस ली कि सब उसके पेटमे चले आये और नष्ट हो गये। इसका नाम 'अजदरनामा' रखा और उसे मुशायरेमे लाकर पढा।* मोहम्मद अमाँ 'निसार' शाह हातिमके शिष्योमे एक तेज और आशु कवि थे। उन्होने वही एक कोनेमे बैठकर पाँच-सात शेरोंका एक 'क़ता' लिखा और उसी समय मुशायरेमे पढा। चूँकि 'मीर' साहबकी बात किसीको पसन्द न आयी थी अतएव इस क़ते पर खूब कह-क़हे लगे और वाह वाहकी धुन लग गयी। इस क़तेका एक शेर है :—

हैदरे कर्रारने वह ज़ोर बख़्शा है निसार,
एक दममें दो करूँ अज़दरके कल्ले चीरकर।

'मीर' साहबको बड़ा लज्जित होना पड़ा।

× × ×

पौने तीन शायर

लखनऊमे जब थे तो एक दिन किसीने पूछा—"क्यो जनाब! आपके विचारसे आज कल शायर कौन-कौन है?" मीर साहबने उत्तर दिया—एक तो सौदा और दूसरा यह खाकसार है।" कुछ ठहर कर कहा—"ख़्वाजा 'मीर दर्द' भी आधे शायर माने जा सकते है।" उस व्यक्तिने पूछा—"हजरत! और मीर सोज साहब?" झुँझलाकर बोले—"मीर सोज

---

* सआदतउल्लाके बेटे थे। यह और इनके पूर्वज भवन-निर्माण-कला (इजीनियरिंग) मे पारगत थे। जब दिल्ली आबाद थी तो वही रह कर अपनी विद्याके बलसे काल-क्षेप करते थे। दिल्लीके उजड जाने पर लखनऊ चले गये और वहाँ सुखपूर्वक रहे। शेर भी खूब कहते थे। शाह हातिमके नामी शागिर्दोंमेसे थे। रेखते खूब लिखे है। इनके दीवान दुर्लभ है। मीर साहबसे और इनसे प्राय. छेड़-छाड़ रहा करती थी।

साहब भी शायर है ?" उसने कहा—"नवाब (आसिफउद्दौला) के उस्ताद हैं।" मीर साहबने कहा—"खैर, यह है तो पौने तीन सही किन्तु सहृदय कवियोके ऐसे उपनाम मैने कभी नही सुने।"*

× × ×

एक दिन लखनऊके कुछ प्रतिष्ठित लोग भेंट करने तथा शेर सुननेके लिए मीर साहबके घर गये। दरवाजे पर पहुँच कर आवाज दी। लौंडी निकली, समाचार पूछ कर भीतर गयी, और एक टाट लाकर ड्योढीमे बिछा दिया। उसी पर लोगोको बिठाया और एक हुक्का ताज़ा करके उनके सामने रख गयी। थोड़ी देर बाद मीर साहब तशरीफ लाये। साहब सलामतके बाद लोगोने शेर सुनानेका अनुरोध किया। मीर साहबने पहिले कुछ टाल-मटोल की, फिर साफ जवाब दिया कि "जनाब, मेरे शेर आप लोगोकी समझमे नही आनेके।" यद्यपि लोगोको बात बुरी लगी किन्तु

---

* मीरसाहबसे कौन कहता कि बेचारे (मीर सोज) ने उपनाम तो 'मीर' ही रखा था जिसे हुजूरने छीन लिया। इसलिए विवश होकर यह उपनाम रखना पड़ा कि न आपको अच्छा लगे न आप उसपर अधिकार जमाये।

जिस व्यक्तिसे मीरसाहबने ये बाते कही थी उसने जाकर 'मीर सोज़' साहबसे कहा कि 'हजरत, एक आलिम आदमी आपके उपनामपर आज हँसते थे।' उन्होने कहनेवालेका नाम पूछा। बहुत हठके बाद सब हाल बताया गया। सोज़ साहबने कहा—"अच्छा, अगले मुशायरेमे सबके सामने यह सवाल करना।" उसने ऐसा ही किया। तब मीरसोज़ने उत्तर दिया—

"जनाब ! फकीरने पहिले तखल्लुस (उपनाम) तो मीर किया था मगर उसे मीर तकी साहबने पसन्द किया। मैने सोचा उनके सामने मेरा नाम न रोशन होगा इसलिए मजबूर होकर 'सोज' तखल्लुस किया।" बड़े क़हकहे लगे। मीरको लज्जित होना पड़ा।—'आबेहयात'

सभ्यताके विचारसे उन्होने पुनः अनुरोध किया। प्रस्ताव इस बार भी अस्वीकृत हुआ। निदान उन लोगोने पूछा—"हजरत! अनवरी व खाकानीके कलाम समझते है, आपका क्यो न समझेंगे?" मीर साहबने फर्माया—"यह दुरुस्त, मगर उनकी शरहे (टीकाएँ) मौजूद है, और मेरे क़लामके लिए फकत[1] "मुहाविर-ए-अहले उर्दू"[2] है या जामा-मस्जिदकी सीढ़ियाँ। इन दोनोसे आप महरूम[3] है" इतना कहकर निम्नलिखित शेर पढ़ा—

इश्क बुरे ही ख्याल पड़ा है, चैन गया आराम गया।
दिल का जाना ठहर गया है, सुबह गया या शाम गया॥

"अब आप अपने कायदेसे कहेगे 'ख्याल' के 'इये'[4] को जाहिर[5] करो, लेकिन यहाँ इसके सिवा कोई जवाब नही कि मुहाविरा ऐसा ही है।"

× × ×

मै लिख चुका हूँ कि आसिफउद्दौलाके दरबारमे 'मीर' की बडी इज्जत थी। नवाब इनको बहुत मानते थे पर यह उनसे भी टकरा जाते थे। 'आजाद' ने 'आबेहयात' मे लिखा है कि एक दिन नवाबने गजलकी फरमाइश की। दूसरे-तीसरे दिन जो फिर गये तो नवाबने पूछा कि मीर साहब, हमारी गजल लाये? मीर साहबने त्योरी बदल कर कहा—"जनाब आली! मजमून गुलामकी जेबमे तो भरे ही नही है कि कल आपने फरमाइश की और आज गजल

"मजमून गुलामकी जेबमें नहीं हैं!"

---

१. केवल। २ उर्दू बोलनेवाले लोगोके मुहाविरे। ३ वञ्चित। ४. एक उर्दू अक्षर। ५. प्रकट।

हाजिर कर दे।" सज्जनताकी मूर्ति नवावने सिर्फ इतना कहा—"खैर, मीरसाहव! जब तबीयत हाजिर होगी, कह दीजियेगा।"

× × ×

"मुतवज्जह हों तो पढ़ूँ!"

एक दिन नवावने बुला भेजा। जब पहुँचे तो देखा कि नवाव हौजके किनारे खड़े है। हाथमे छड़ी है। पानीमे लाल-हरी मछलियाँ तैरती फिरती है। आप तमाशा देख रहे है। 'मीर' साहवको देखकर बहुत खुश हुए और कहा—"मीर साहव, कुछ फर्माइए।" मीर साहवने गजल सुनानी शुरू की। नवाव साहव सुनते जाते थे और छडीके साथ मछलियोसे भी खेलते जाते थे। मीर साहव झुँझलाते और हर शेरपर ठहर जाते थे। नवाव साहव कहे जाते कि हाँ, पढिए। आखिरकार शेर पढकर मीर साहव ठहर गये और वोले कि 'पढ़ूँ क्या? आप तो मछलियोसे खेलते है, मुतवज्ज.[1] हो तो पढ़ूँ।' नवावने कहा कि 'जो शेर होगा, आप मुतवज्ज कर लेगा।' वात ठीक थी पर मीरको वहुत वुरी लगी। गजल जेवमे डालकर घरको चले आये और उनके पास जाना ही वन्द कर दिया। कुछ दिनोके वाद एक दिन वाजारमेसे चले जा रहे थे कि नवाव साहवकी सवारी सामनेसे आ गयी। वह देखते ही वडे प्रेमसे वोले—"मीर साहव! आपने हमे विल्कुल छोड ही दिया? कभी तशरीफ भी नही लाते।" मीर साहवने कहा—"वाजारमे वाते करना आदावे शुर्फा[2] नही। यह क्या गुफ्तगू[3] का मौका है?"

× × ×

अहदअली 'यकता' ने अपने ग्रन्थ 'दस्तूरुलफसाहत' (२५–२६) मे इसी प्रकारकी एक घटनाका वर्णन किया है। उसके अनुसार घटना निम्नलिखित है:—

---

१ ध्यान दे, २ सभ्योके आचरण, ३. वार्तालाप।

"एक रोज मीर साहब नया क़सीदा लिखकर नवाब वजीर[१] की खिदमतमे ले गये। इत्तिफाक़न[२] उस रोज मुल्ला मोहम्मद मोगली भी ईरानसे आया था और चाहता था कि नवाब वजीरुल्मुल्ककी मदह[३] मे कुछ पढ़े। किन्तु मीरका कसीदा इतना तूलानी[४] था कि वक्त बाकी नही रहा।

मुझे कब तहम्मुल है ?

मुल्ला मोहम्मदने जल कर कहा कि मीर साहब! कसीदा खूब है लेकिन तवील[४] है। अगर नवाब साहबको इतना तहम्मुल[५] न होता तो इसे कौन सुनता ? मीर साहबने गुस्सेमे आकर बयाज[६] फेंक दी और बदमजा[७] होकर कहा कि अगर नवाब साहबको इतना तहम्मुल नही तो मुझे कब है। नवाब साहब खल्के मुजस्सिम[८] थे। मुल्ला मोहम्मदकी बिल्कुल पर्वा न की और 'मीर' का वकीय[९] कसीदा कमाले मेह्रबानी[१०] से सुना और दाद[११] दी।"

× × ×

सआदत अली ख़ाँ 'नासिर'ने भी 'मीर'की नाजुकमिजाजीका जिक्र किया है :—

"जब सरकार आसफउद्दौला बहादुरमें मीर साहब सीगए शायरी[१२] मे नौकर हुए, एक दिन वह आसफजाह कुतुबखाना[१३] मे जल्वागर[१४] थे। और दवावीन जेरो बाला[१५] रक्खे थे। एक जिल्द नवाब नामदारके हाथसे दूर और मीर साहबके नजदीक थी। फर्माया—"मुझे उठा दीजिए।"

देखो, तुम्हारे आक़ा क्या फ़र्माते हैं ?

मीर साहबने एक खादिम[१६] से कहा—"सुनो, तुम्हारे आका[१७] क्या फर्माते है?" नवाबने रास्त[१८] हो कर उठा लिया मगर यह मीरजाई निहायत

१. आसफ़उद्दौला, २. सयोगवश, ३. प्रशसा, ४. लम्बा, ५ धैर्य, ६. कविताकी कापी, ७. खीझकर, ८ शिष्टताके मूर्तिमान रूप, ९. शेष, १०. अत्यन्त कृपा, ११. प्रशसा, १२. काव्य-विभाग, १३. पुस्तकालय, १४. सुशोभित, १५. ग्रन्थ ऊपर नीचे, १६. सेवक, १७. स्वामी, १८. सीधे।

नागवार गुजरी। वाद एक लमहेके फर्माया—क्यो मीर साहव, मिर्जा सौदा कैसा शायर मुसल्लमस्सवूत[1] था। मीर साहवने कहा—वजा[2]—'हर ऐव कि सुलतान वपसन्दद हुनर अस्त[3]। हुजूर पुरनूरने[4] फर्माया कि "हम ऐवपसन्द[5] है? एक न शुद दो शुद[6]।" इतनेमे मीर सोज कि उस्ताद हजरते आलीके थे, वास्ते मुजरे[7] के हाजिर हुए। हुजूरने फ़र्माया—"कुछ पढो।" हस्बुल्हुक्म[8] मीर सोजने दो तीन गज़ले पढी। नवावने तारीफमे उनकी मुवालगा[9] किया। दिलेरी[10] मीर सोज साहवकी और तारीफ नवावकी मीर साहवको वहुत नागवार गुजरी। मीर सोज़से कहा—"तुम्हे इस दिलेरी पर शर्म न आई?" मीर सोजने कहा—"साहव! वन्दा क्या है? मैं शाहजहानावादमे भाड झोकता था।" कहा—"वुजुर्गी और शराफत[11] मे तुम्हारी क्या ताम्मुल[12] है मगर शेरे मीरसे किसीको क्या हमसरी[13]? मौका और महल[14] तुम्हारी शेरखानी[15] का वह है जहाँ लड़कियाँ जमा हो और हुडकलियाँ पकती हो, न कि मीरतकीके सामने।" मीर सोजसे तो यह कहा और वह शक्का[16] कि मीरकी तलवको हुजूर पुरनूरने लिखा था, जेवसे निकाल कर हुजूरके आगे रख दिया और यह कह कर उठ खडे हुए—'खाना आवाद। दौलत जियादा।' नवावने फर्माया—"खुदा हाफिज़[17]।"

"दो महीनेके वाद तहसीनअलीखाँ खाजासराने जिक्र इनकी उसरत[18] और गरीवुलवतनी[19] का हुजूरमे गुजारिश किया। उस हातिमे जमाँ[20] ने

---

१. प्रामाणिक, उच्च, २. ठीक, ३. राजाको पसन्द आनेवाला प्रत्येक दुर्गुण भी गुण है, ४. प्रकाशमान, ५. दुर्गुणप्रिय, ६. एक न रही, दूसरी भी, ७. दर्शन, ८. आज्ञानुसार, ९. अत्युक्ति, १०. साहस, ११. वड़प्पन और शिष्टता; १२. सन्देह, १३. वरावरी, १४. अवसर एव स्थान, १५. काव्य पढनेका, १६. राजपत्र, १७. ईश्वर रक्षा करे। १७. गरीवी, तगी, १९. अपने वतनका छूट जाना, २०. युगके हातिम (परोपकारी)।

अव्वल शिकायत उसकी बेएतनाई[1] की बहुत- सी की। बादये शफ़ाअत[2] खाजासरा क़बूल फ़र्माई। खाजासरा खुश खुश मीर साहबके पास आया और वह जिक्र सुनाया। मीरसाहबने दरबारमे ख़ाजासराकी मार्फत[3] जाना नगेमर्दी[4] समझकर इन्कार किया।

यह अकड़

"एक दिन वह जौहरशनासे हुनरमन्दाँ[5] अकीकउल्लाके इमामबाड़ेकी तरफ आया और तहसीनको इशारेसे कहा कि मीरसाहबको ले आ। खाजासराने मीरसाहबसे कहा—"चलो, तुम्हारे लेनेको हुजूर आये है।" सुभान अल्लाह क्या कदरशनास[6] थे कि अपने नौकरकी रईसोकी-सी खातिर[7] थी।"*

× × ×

मौलवी मोहम्मद हुसेन 'आजाद' ने 'आबेहयात'मे लिखा है :—

"जब नवाब आसफउद्दौला मर गये, सआदतअलीख़ाँका दौर हुआ तो यह दरबार जाना छोड चुके थे। वहाँ किसीने तलब न किया। एक दिन नवाबकी सवारी जाती थी, यह तहसीनकी मस्जिद पर सरेराह बैठे थे। सवारी सामने आई। सब उठ खड़े हुए। मीरसाहब उसी तरह बैठेरहे। सय्यद इशा खवासीमे थे। नवाबने पूछा कि इशा, यह कौन शख्स है जिसकी तमकनत[8] ने उसे उठने भी न दिया। अर्ज की, जनाब-आली! यह वही गदाये मुतकब्बिर[9], है, जिसका जिक्र हुजूरमेअक्सर[10] आया है, गुजारेका वह हाल और मिजाजका यह आलम[11]। आज भी फाकासे

"मैं भी बादशाह हूँ!"

१. लापरवाही, उपेक्षा, २. सिफारिश, ३. जरिये, द्वारा, ४. अपमान, ५. गुणियोके पारखी, ६. गुणोके पारखी, ७. सम्मान, * तजकिरा खुशमार्कए जेवा, ८. अभिमान, ९. स्वाभिमानी फकीर, १०. प्राय., ११. अवस्था।

ही होगा। सआदतअलीखाँने खिलअत[1] बहाली और एक हजार रुपये दावत[2] का भेजवाया। जब चोबदार लेकर गया, मीर साहबने वापिस कर दिया, और कहा कि "मस्जिदमे भेजवाइए। यह गुनहगार[3] इतना मोहताज[4] नही।" सआदतअलीखाँ जवाब सुनकर मुतअज्जिब[5] हुए। मुसाहबोने फिर समझाया। गर्ज नवाबके हुक्मसे सय्यद इंशा खिलअत लेकर गये और अपनी तर्ज[6] पर समझाया कि न अपने हालपर बल्कि इयाल[7] पर रहम कीजिए और बादशाहे वक्तका हदिया[8] है, इसे कबूल[9] फर्माइए। मीर साहबने कहा कि साहब, वह अपने मुल्कके बादशाह है, मै अपने मुल्कका बादशाह हूँ। कोई नावाकिफ[10] इस तरह पेश आता तो मुझे शिकायत न थी। वह मुझसे वाकिफ, मेरे हालसे वाकिफ। इसपर इतने दिनो बाद एक दस रुपयेके खिदमतगारके हाथ खिलअत भेजा। मुझे अपना फुक्र[11] व फाका[12] कबूल है मगर यह जिल्लत नही उठाई जाती। सय्यद इंशाकी लस्सानी व लफ्फाजी[13] के सामने किसकी पेश जाती। मीर साहबने कबूल फर्माया और दरबारमे भी कभी-कभी जाने लगे।"

× × ×

सआदत अलीखाँ 'नासिर'ने अपने ग्रन्थ 'तजकिरा खुशमार्कए जेबा' मे लिखा है —

"मिर्जा मोगल 'सबकत' कहते थे, जब मीर साहब लखनऊमे तशरीफ लाये बन्दा उनकी तरफे मुलाजमत[14] को गया। खबर होनेके बाद देरमे

---

१ राजकी ओरसे उपहारमे दिया जानेवाला परिधान, २. निमत्रण, ३ अपराधी, पापी, ४ मुखापेक्षी, अकिंचन, ५ चकित, ६ ढग, ७. बाल-बच्चे। ८ भेट, ९ स्वीकार, १०. अज, ११. फकीरी, १२. उपवास, अनशन, अनाहार, १३ वाचालता व वाग्मिता, १४. सेवाका सौभाग्य।

तशरीफ़ लाये। मैंने दौलते क़दमबोसी[१] हासिल की और बाद कीलोकाल[२] के मुल्लतमिस[३] हुआ कि कुछ अपने कलामसे मुस्तफीद[४] फर्माइए। बेताम्मुल[५] फर्माया कि तुम्हारे वशरे शेरफ़हमी[६] मालूम नही होती, सखुन[७] को जाया[८] करनेसे क्या हासिल[९] ?"

सख़ुनको ज़ाया करनेसे क्या हासिल ?

× × ×

नासिरने एक और घटना लिखी है :—

"एक दिन शाह कुदरतउल्ला और मीर साहब किश्तीपर सवार थे। कुदरत उल्लाने चन्द गजलें अपने दीवानकी 'मीर' साहबके आगे पढी।

दरियामें डाल दो

'मीर' साहबने कुछ न कहा। वह मुलतमस हुआ कि "आपने कुछ न फर्माया।" मीरसाहबने कहा—"सवाबदीद[१०] यह है कि दीवानको अपने दरियामे डाल दो।"

× × ×

'नासिर' ही 'तजकिरा खुशमार्कए जेबा' मे एक और घटना लिखते है —

"इमादुलमुल्क नवाब गाजीउद्दीनखाँ★ लबेदरिया[११] बैठे हुए थे और

---

१. चरण-स्पर्श-धन, २. शिष्टाचार, ३ प्रार्थी, ४. लाभान्वित, ५. बेधड़क, ६. काव्य समझनेकी योग्यता, ७ काव्य, ८ नष्ट, ९ लाभ, १० पुण्यकारक, ११. नदीके तट पर।

★ शेफ्ताके बयानसे डा० फारूकीने अपनी पुस्तक 'मीरतक़ी मीर' (पृष्ठ २९१) मे निम्नलिखित सूचना उद्धृत की है :—

"निजाम तखल्लुस, नवाब इमादुलमुल्क गाजीउद्दीन खाँ बहादुर

मुर्गाबियाँ, आबी बत[१] और सुरखाब[२] वास्ते सैरोतमाशाके दरियामे छूटी हुई थी। इत्तिफाकन[३] मीर साहब उधरसे आ निकले। नवाब चन्द कसीदे अपने उनको पढकर दाद-तलब[४] हुए। मीर साहबने फर्माया—"मेरी तारीफकी क्या एहतियाज[५] है? हरबतको साहबके अशआर[६] पर हालते वज्द[७] व समाअ[८] है।" नवाब पर यह सखुन निहायत नागवार गुज़रा और दूसरे रोज मीर साहबको फिर तलब किया। आप कुर्सीपर बैठे, जमीन पर सिवाय खाक कुछ न बिछवाया। मीर साहबने लमहेके लमहे इन्तजार[९] मोढे चौकीका किया। बाद अजाँ[१०] दुपट्टा अपना दोतहा करके बिछाया और बैठ गये। नवाब साहबने फर्माया—"कुछ इर्शाद[११] कीजिए।" मीर साहबने यह कता पढा—

"देखकर चल राह बेखबर"—

वजीरस्त जलीलुलकदर, अमीरेस्त, आलीशान, हालिश मुस्तगनी अज शरह व बयाँ मिर्जा रफीअ सौदा औरा अज सना गुस्तरान अस्त।" (गुलशने बेख़ार पृष्ठ २३२)। पर 'तजकिरा करीमुद्दीन'मे बड़ी निन्दा की गयी है—"यह अमीर बहुत नमकहराम और बर्बाद करनेवाला खान्दान तैमूरियाका था। आलमगीर सानी भी इसीकी नमकहरामी की सबब मकतूल हुआ। मिर्जारफीअ सौदा उसकी मद्दाहीनमेसे है।" (पृ० १२३) इसका एक शेर यह है—

आया न कभी ख़ाबमें भी वस्ल मयस्सर,
क्या जानिये क़िस वक्त मेरी आँख लगी है।

इसकी स्त्री गन्ना बेगम 'शोख़' भी शेर कहती थी।

१ जल हस, २. चक्रवाक, ३. सयोग-वश, ४. प्रशसार्थी, ५ आवश्यकता, अपेक्षा, ६ शेरका बहुवचन, ७ मस्तीमे झूमना, ८ राग, ९. प्रतीक्षा, १०. इसके बाद, ११ कथन।

कल पाँव एक कासए[1] सर पर जो आ गया,
नागह वह उस्तखान[2] शिकस्तोंसे चूर था।
कहने लगा कि देखकर चल राह बेखबर,
मैं भी कभू किसूका सरे पुर गरूर[3] था।'

यह ठीक है कि स्वाभिमान उनमे मर्यादा उल्लघन कर गया था और तुनुकमिजाजी अहकारकी उस सीमापर पहुँच गयी थी जहाँ वह समाजका दूषण बन जाती है पर इसके कारण ही ससारके बडेसे बड़े प्रलोभनके लिए भी उनका सिर न झुका। स्वाभिमानके आगे राजसम्मान भी उनके लिए तुच्छ था। यह भी मानता हूँ कि यह उनके चरित्रकी विकृति थी क्योकि वास्तविक स्वाभिमानी वह है जो दूसरेके स्वाभिमानका भी उतना ही ख़्याल रखता है जितना अपना, इसलिए वह दूसरोको भी ऊपर उठाता है, उसपर प्रहार करके नही, उसे गले लगाकर।

मानसके अतलमें

कदाचित् मीरके पिता या चचा जीवित रहते और इनकी छाया बराबर उन्हे मिली होती, प्रेम एव स्नेहका वह स्रोत अकस्मात् टूट न गया होता तो मीरका निर्माण वैसा ही हुआ होता। तब वह दूसरोके प्रति गहरी सवेदनाओं और सहानुभूतियोसे भरे होते। पर जब वह उग रहे थे तभी उनके गिर्द एक तूफान, एक बवण्डर आया जिसने उनको अस्थिर कर दिया—विपत्तियोंकी ऐसी धारा, जिसका पाट बढता ही गया और जो जीवन भर कभी समाप्त न हुई। इसलिए जहाँ उनमे एकान्तप्रियता, दर्दमन्दी, गम्भीरता और प्रेम-प्रवणता आई, वहाँ चिड़चिडापन, तुनुकमिजाजी, जीवन एव जगत्से असन्तोष भी आया। अपनीसे भिन्न विचार-प्रणालियों, जीवन-विधियोसे समझौता करनेकी शक्ति एवं सामाजिकता देनेवाला प्रेम उनका न था।

१. सिर रूपी प्याला, २. हड्डियाँ, ३. स्वाभिमानी मस्तक।

स्नेही एव सन्तकी जगह, इसीलिए, वह आलोचक एवं उपदेशक बन गये, सशोधक हो गये, दूसरोसे सीखने और दूसरोको ग्रहण करनेकी जगह दूसरों के दोपो पर प्रहार कर उन्हे उठानेका आग्रह उनमे प्रवल होता गया। अतीतके प्रति, जो चला गया है या जा रहा है उसे भूलकर जो सामने है उसे ग्रहण करनेकी जगह अतीत और अतीतके मूल्योके प्रति प्रवल आसक्ति उनमे सदा रही। इसीलिए वह हरएकसे उलझ पडते थे, हरएकसे खीझ जाते थे।

उलझाव है ज़मीं से झगड़ा है आसमाँ से।

वह दिलसे नेक थे, कत्तई किसीका वुरा न चाहते थे पर किसीको ऐसी राह पर चलते देखते, जिसे वह हृदयसे गलत समझते थे, तो चुप न रह सकते थे। प्राचीन मूल्योके प्रति, दिल्लीकी शताब्दियोकी परम्पराके प्रति, उनमे जो मोह था, उसके कारण वह सचमुच अनुभव करते थे कि जमाना गलत राह पर जा रहा है, जवान ख़राव की जा रही है; शेरो सख़ुन नीचे पाये पर ले जाया जा रहा है। उनके निकट काव्य, या जवान एक आन्तरिक श्रेष्ठता, एक अन्त सौष्ठव, एक अन्त·सस्कृतिका चिह्न है, केवल रचना-चातुरी नही, केवल शव्द-चमत्कार नही। इसीलिए वह खीझते थे, अन्दर जमानेके प्रति जो खीझ थी, जरा भी अवाञ्छनीय दृश्य सामने आते ही निकल पडती थी। पर युग दूसरी ओर जा रहा था। लोग उनकी इज्जत करते थे, उनके महत्वको समझते थे, पर उसका अनुसरण न कर पाते थे। उसके गहरे प्रयोजन और तात्पर्यको समझ न पाते थे। मीर साहव इससे दुखी होते थे और हाय मार कर कहते थे—

काव्य केवल चमत्कार नहीं

समझा न कोई मेरी ज़बाँ इस दयार में

× × ×

इधर यह खीझ थी और उधर वह इश्क था जिसकी गहरी छाप इन पर इनके पिता और चचाने डाली थी। यौवन कालमे इन्होने किसी विधुवदनी को प्रेम किया। उसमे असफल हुए। पर असफलता केवल इस अर्थमे कि दोनोंका मिलन न हो सका। इससे प्रेमकी सवेदनाएँ व्यक्तिगत और गहरी होती गयी। विपत्तियोके साथ दर्दकी सम्पत्ति तो इन्हे बचपनसे मिली थी, प्रियतमाके आजीवन विरहने उसमे वह आग पैदा कर दी कि जिसमे जलना जीवनका सर्वोत्तम पुरस्कार है, उसने उनमे वे बूँदे भरी जिनमे समुद्र समा जाता है और जिसके लिए कहा गया है--

विरहका रस

य' वह क़तरा है जिसमें डूबना ही है उभर जाना

शायद है कि प्रियतमा इन्हे मिल गयी होती तो यह खो गये होते; जीवनकी रगीनियाँ इनके अन्त करणकी प्यासको ले डूबती, शायद है कि यह फिर उतना ऊँचा न उठ पाते; वह स्थायी, कभी स्थिर न होनेवाली वेदना इनमे न आती जो इनके जीवनको साधारण भोग-विलास, ऐशो-इशरतके स्तरसे ऊपर उठा सकी और इनके काव्यको वह प्रकाश दे सकी जो उर्दू जबानमे दूसरे किसीको नसीब न हुआ। इस प्रकार विरहका रस इनके जीवन और काव्यपर छा गया है। दु खोसे भरी अपनी जिन्दग़ीका सारा रास्ता वेदनापूर्ण सीनेके बल पार किया है और ससारके, समष्टिके दु खको प्रियतमके विरहमे इस तरह मिला दिया है कि दोनोको अलग करना मुश्किल है। उन्होने प्रेमको सर्वोच्च सभ्यताका स्रोत बना दिया है।

मीर अकबराबाद, दिल्ली, लखनऊ जहाँ भी गये, बीच-बीचमे उन्हे गहरी आर्थिक कठिनाइयोका सामना करना पडा। वह जमाना ही ऐसा था जब राजकुमार भी भूखो मरते थे। दिल्लीमे इनकी आर्थिक विपत्तियो का अनुमान मिर्जाअली लुत्फके निम्नलिखित बयानसे किया जा सकता है जो उन्होने 'गुलशने हिन्द' (पृ० २०९) मे दर्ज किया है :—

"मीर सा शायर जो कि सेहरकारिये सखुनमें तिलस्मसाज है ख्यालका, और जादूतराजिए बयानमें मानी परदाज़ है मक़ालका, वह नान शबीनाका मोहताज है, और बात कोई नहीं उसकी पूछता आज है।"

ऐसी कठिनाइयोमे भी वह उन्ही मूल्योसे ठहरे रहे जो अपने ऊपर उन्होने खुद लगाये थे—

मेरी क़द्र क्या इनके कुछ हाथ है,
जो रुतबा है मेरा मेरे साथ है।

इनका सबसे बडा गुण यही है कि इन कठिनाइयोंके आगे वह कभी झुकनेको तैयार नही हुए; अपने मार्ग पर चलते ही गये। ऐसा नही कि

ज़िन्दगी और बन्दगी साथ-साथ है

उनमे ससारका रस चखनेकी भावना न थी। उनमे जिन्दगीकी प्रेरणाएँ थी पर बन्दगी की, पूजाकी भावनाएँ भी थी। इसीलिए इनके जीवन और काव्यमे कभी एक तत्व की, कभी दूसरे तत्व की अधिकता हम पाते है। जैसे एक ही शरीरमे दो आत्माए हो। एक इश्ककी गहराईमे डूबी, समर्पणशील, दूसरी गर्वोन्नता, ससारके आगे न झुकनेवाली। खूबी यह है कि यह गिरते है, पर गिरकर उठते और आगे चलते है—कॉटोको रौंदते हुए, फूलोको आशीर्वाद देते हुए, कलेजा हथेली पर रखे, सिर ऊँचा किये, ऑखे तर किये चले जा रहे है और चले जा रहे है।



मीर : जीवन एवं काव्यकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि



मीर जिस जमानेमे हुए उस समय उत्तर भारत, विशेषत. दिल्लीके समीपवर्त्ती भागकी स्थिति बड़ी डॉवाडोल थी। रईसोंका तख़्ता उलट रहा था, गद्दियाँ जहाँ तहाँ लुडकी हुई फिरती थी। आज जो राजा है, कल उसका पता नही वह कहाँ गया; आज जो अहकारसे भरा, ऐश्वर्यके सिहासन पर है, कल अकिचन और परमुखापेक्षी होकर किसी गड्ढेमे पडा है। मतलब सब तरफ अँधेरगर्दी, अव्यवस्था, अनिश्चितता, लूट, झगड़े-लड़ाईका राज था। मुगल साम्राज्य विशृङ्खल होता जा रहा था; राजकोप पारस्परिक झगड़ोमे समाप्तप्राय था; कानूनका बन्धन ढीला पड़ गया था। मालगुजारी वसूल ही न हो पाती थी या अगर मुश्किलसे कुछ वसूल हो पाती थी तो वसूल करनेवालोकी जेबोमे चली जाती थी। राजपूत, सिख, जाट, मरहठे जिसे देखिए, विद्रोह और नये राज्य स्थापित करने को तैयार। सेनाको न समयपर वेतन मिलता था, न उसके जीवनकी कोई निश्चितता थी। इसलिए सैनिकोंकी दृढता और निष्ठा सदा डॉवाडोल रहती थी। हर आदमी अपनी बनानेके फेरमे था; साम्राज्य वा देशकी भलाईका भाव लोगोंमे बहुत ही कम रह गया था।

डाँवाडोल उत्तर भारत

दिल्लीकी शक्ति नाम मात्रको रह गयी थी। सबकी लोलुप आँखे उसी की ओर जाती थी। पतनमे भी दिल्लीमे गहरा आकर्षण था। केन्द्रीय-मुगल-साम्राज्यका चिराग टिमटिमा रहा था। मरहठे, रुहेले, जाट, पठान, सिख सब अपनी दौड़मे थे। मजा यह कि दिल्लीश्वरको इन उठती आँधियोसे कोई खास सरोकार न था, वह जब तक गुजरे चैनसे गुजरने दो, सिद्धान्तका अनुयायी था। मोहम्मदशाह दिल्लीके तख़्त पर था। उसे अपने ऐशोइशरतमे दीन दुनियाकी ख़बर न थी।

दिल्ली, निर्वीर्य, नि.शक्त दिल्ली, अफवाहकी तरह विदेशोमे धन-दौलत के लिए मशहूर दिल्लीकी तरफ इसी देशके फिरको, क्षत्रपो तथा छोटे-मोटे राजा-नवावोकी आँख नही लगी थी, विदेशो तक भी उसकी अव्यवस्थाकी खवर पहुँच चुकी थी। इसलिए दुस्साहसी विदेशी सरदारोके लिए यह अच्छा अवसर था। फलत नादिरशाहने हमला किया; पजावको सर करता दिल्ली पहुँचा और उसे लूटकर नगी-वुच्ची कर दिया। ५८ दिनतक यहाँ रहा, जिस तरह लूटते वना लूटा और हजारो ऊँटो पर हीरे जवाहिर, सोने-चाँदी तथा लूटका और सामान लादकर ईरान लौट गया। फ्रेजर नामक इतिहासकारने अपने नादिरशाह ग्रथमे इस लूटकाअन्दाज सत्तर करोड किया है पर मैं समझता हूँ वह इससे कही ज्यादा माल ले गया, फिर उसके सरदारो, सैनिकोके हाथ जो कुछ लगा होगा, उसकी तो वात ही न पूछिए। पीढियोकी दौलत, विशेषत. जवाहरात उसके हाथ लगे। अन्दाज है कि सिर्फ जवाहरात पचास करोड़से कमके नही रहे होगे। इसी लूटमे वह मशहूर तख्तेताऊस (मयूर सिहासन) तथा कोहेनूर भी था। तीन सौ हाथी, दस हज़ार घोडे, दस हजार ऊँट अलग थे। हजारो आदमी नादिरकी तलवारके घाट लगे। 'मीर'के ऊपर कृपा रखने और उन्हे सरक्षण प्रदान करनेवाले नवाव समसामउद्दौला भी इस हगामेमे १५ फरवरी १७३९ ई० को कत्ल कर दिये गये।

लुटेरोंका आकर्षण-केन्द्र दिल्ली

इस कत्लेआमसे दिल्लीमे त्राहि-त्राहि मची हुई थी। वह एक महा-श्मशान वनी हुई थी। ११ मार्चको जो कत्लेआम हुआ उसमे चाँदनी-चौक, दरीवा और पहाडगजकी वस्तियाँ विल्कुल साफ और वीरान हो गयी। स्वयं ईरानी इतिहासकारोका अन्दाज है कि इस अवसर पर तीस हजारसे कम आदमी कृपाणकी भेट न हुए होगे। जो मर गये वे फिर भी अच्छे रहे। जो वचे वे अपने मरे हुए गुरुजनो एव प्रियजनोके दु:खपर रोने भी न पाये,

नादिरशाही लूट

उनसे गहरा दण्ड और कर वसूल किया गया। अमीर-उमराओं पर बड़ी बेरहमी की गयी। किसीको धूपमे खडा किया गया, किसीके कान काट लिये गये। इस बेरहमी और अपमानके डरसे कितनी औरतोने आत्म-हत्या कर ली; कितने आदमी कुओमे डूब मरे। वजीर क़मरुद्दीनखॉको धूपमे खड़ा कराके एक करोड़ से ज्यादाके जवाहरात प्राप्त किये गये। उसके दीवान मजलिसरायका खुले दरबारमे कान काट लिया गया। उसे अपना ऐसा अपमान लगा कि उसने १८ अप्रैल १७३९ ई० को आत्महत्या करली। आदमियोको ही नही, औरतोको भी नही वख्शा गया। उनकी बुरी तरह बेइज्जती की गयी, उनकी आबरू छीन ली गयी। समसाम उद्दौलाके भाई मुजफ्फरखॉकी पत्नियो और बेटियोकी वह बेइज्जती हुई कि उनके शत्रु भी धिक्कारने लगे।

नादिरशाहकी इस लूट और हमलेके बाद दिल्ली बेपानी हो गयी। उसकी जडे उखड़ गयी; आर्थिक दुरवस्थाकी सीमा हो गयी और दिल्लीका रहा-सहा ऐश्वर्य भी समाप्त हो गया। नादिर ५ मई १७३९ ई० को दिल्लीसे विदा हुआ। दिल्लीको कमजोर पाकर उसने अफगानिस्तान और सिंध नदीके पारके इलाको पर कब्जा कर लिया। फिर पजाब भी मुगलोके हाथसे निकल गया। पजाबके हाथमे आजानेके कारण नादिरशाहके बाद उसका स्थान लेने वाले अहमदशाह अब्दालीके लिए दिल्ली पर आक्रमण करना और उसे लूटना सरल हो गया। उधर सिख उठे; दक्षिण तथा मध्यभारतमे मरहठे अपनी शक्ति बढाते जा रहे थे। कुछ दिनोमे पूर्वमे अवध तथा दक्षिणमे हैदराबाद स्वतन्त्र हो गये।

मधुपात्रोंमें डूबा मोहम्मदशाह

जैसा मै कह चुका हूँ, ऐसे भयानक समयमे मोहम्मदशाह जैसा दुर्बलमना व्यक्ति दिल्लीके सिंहासन पर था। आश्चय तो यह है कि इसका बचपन ७ सालके लम्बे अरसे तक कैदकी मुसीबतोमे बीता था तब भी इसने दुनियासे कुछ न सीखा। सत्रह वर्षकी आयमे सिंहासन पर

वैठा। कदाचित् उसने सोचा कि दिल्लीमे वादशाह रोज वनते-विगड़ते रहते है, जो जरा भी स्वतन्त्र वृत्ति ग्रहण करता है सरदार और वज़ीर उसे दवा देते है इसलिए अच्छा यही है कि शासनका काम उन्ही पर छोड कर अपने दु खोको मधुयामिनी और मधुपात्रोमे डुवा दिया जाय। इसने २८ वर्पके लम्बे समय तक राज्य किया किन्तु कदाचित् ही एक-दो वार वाहर निकला होगा। सारा समय राग-रगमे कटता था। वह शिथिल, सुस्त, विलासी और आरामतलव था। धीरे-धीरे शरीर दुर्वल पड़ गया। तव इसने फकीरो और जोगियोकी ओर मुँह फेरा। यहाँ तक कि दरवारमे दरवेशोका प्रभाव वहुत बढ गया।

ईरानी-तूरानी संघर्ष

चूँकि सरदारो और अमीरोके हाथमे शासन चला गया और कोई देखने वाला न था, इसलिए वे मनमानी करते थे। उनमे भी स्वार्थकी भावना इतनी प्रवल हुई कि एक-दूसरेको फूटी आँख देख नही सकते थे। ये सरदार प्रधानत. दो दलोमे विभाजित थे। एकका नेता था—कमरउद्दीन एतमादउद्दौला द्वितीय जो १७२४ ई०मे निजामुलमुल्कके वाद वजीर नियुक्त हुआ। इसमे प्रमुखत. तूरानी थे। दूसरा दल ईरानियोका था जिसका नेता अवुल मन्सूर ख़ाँ सफदरजग था। इसे १७३८मे अवधकी सूवेदारी मिली। सच पूछिए तो मुगल साम्राज्यके अन्तिम युगका इतिहास इन्ही दो गुटोके विरोध और सघर्पका इतिहास है। यह सघर्ष केवल राजनीति तक ही सीमित नही था, जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमे फैल गया था; यहाँ तक कि साहित्य भी इससे वच न सका। 'आरज़ू' और 'हज़ी' तथा कतील और गालिवके संघर्पमे इसीका प्रतिविम्व है। कभी एक दलके हाथमे शक्ति आती, कभी दूसरे के। १७३२ से १७३९ तक समसामउद्दौला और मुजफ्फर ख़ाँ की चली पर जव नादिरशाहके आक्रमणमे ये मारे गये तो अमीरख़ाँ प्रथम के लडके मीरमीरान अमीरख़ाँ अम्दतुलमुल्क द्वितीयकी चमकी। यह

बडा प्रत्युत्पन्नमति था। स्वय अच्छा कवि था, फिर उसकी मृदुभाषिता तथा विद्या एव कलाका सरक्षण प्रसिद्ध है।

इसके द्वारा मोहम्मद इसहाकखाँ प्रथमकी पहुँच बादशाह तक हुई। चूँकि दोनों ईरानी शिया थे इसलिए परस्पर बड़ी बनती थी। धीरे-धीरे इसहाकखाँका बादशाह मोहम्मदशाह पर ऐसा प्रभाव पडा कि वह उसे एक क्षणके लिए अलग न करता था। जब बादशाह नादिरशाहके विरुद्ध लडाईमे हार कर भागा तो इसहाकखाँ भी उसी हाथी पर सवार था और उसे बराबर हिम्मत दिलाता रहा। नादिरशाह भी उसकी तारीफ करता था। अतः उसकी जोरोसे उन्नति हुई और ऊँचे पद पर पहुँचा। १८ एप्रिल, १७४५ को उसकी मृत्यु हो गयी। उसके बाद उसका पुत्र मिर्जा मोहम्मद (नजमुद्दौला इसहाक द्वितीय) दीवान खालसा नियुक्त हुआ और कुछ दिनों तक, पिताकी भाँति ही, शाही दरबारमे उसकी प्रतिष्ठा रही। बादशाहके आदेशसे इसहाकखाँ प्रथमकी पुत्रीका विवाह सफदरजगके पुत्र शुजाउद्दौलासे हो गया। १७४५ ई० मे इन्ही से आसफ़उद्दौलाका जन्म हुआ। यह महिला इतिहासमे नवाब बहू बेगमके नामसे प्रसिद्ध हुई। बादमे इन्ही पर वारेन हेस्टिंग्सने अत्याचार किया था।

मीरने 'जिक्रमीर' मे एक और अमीर असदयारखाँका भी जिक्र किया है जिसकी मददसे वह नवाब बहादुर जावेदखाँके यहाँ नियुक्त हुए। यह ३५ वर्षकी उम्रमे अवधका सूबेदार बनाया गया था। धीरे-धीरे उसने एक अत्यन्त शक्तिमान सेनाका सघटन कर लिया। शियोंका तो नेता ही बन गया। इस जमानेमे लाहौरसे आग भडकी। १७२६ ई० मे जिक्रयार खाँ पजाबका गवर्नर नियुक्त हुआ। उसका विवाह वजीर एतमादुद्दौला प्रथमकी लड़कीसे हुआ था और उसके ज्येष्ठ पुत्रका, उसके लडके एतमादुद्दौला द्वितीयकी बेटीसे। इस प्रकार दरबारमे उसकी बडी पहुँच थी। जनतामे भी उसको पर्याप्त सम्मान मिला था। यहाँ तक कि पहली जुलाई १७४५ को जब उसकी मृत्यु हुई तो लाहौरको जनता उसके

शोकमे मग्न हो गयी। लोग ढाढे मारकर रोते थे, तीन दिनतक नगर मे चूल्हा और दिया नही जला। लाहौरमे एक भी समर्थ व्यक्ति ऐसा न था जो उसके जनाजेके साथ न गया हो।

पर दुनियाकी विचित्रता तो देखिए कि उसके मरनेके बाद उसके दोनो पुत्रो, यहियाखाँ और शाहनवाजखाँमे ही युद्ध हो गया। शाहनवाज ने यहियाखाँ सूबेदार पजाबके पूरे माल-असबाब पर कब्जा कर लिया। जब पजाबकी हालत इस प्रकार बिगड रही थी, नादिरशाह कत्ल कर दिया गया और अहमदशाह अब्दाली उसके स्थानपर गद्दीपर बैठा। जून ४७ मे वह हिन्दुस्थानपर आक्रमण करनेकी योजना बनाने लगा।

अब्दालीको निमंत्रण

चूँकि शाहनवाजखाँको भलीभाँति मालूम था कि दिल्लीश्वर मोहम्मदशाह उसे पजाबका गवर्नर न बनायेगा क्योकि अधिकार बडे भाईका है इसलिए उसने अहमदशाह अब्दालीको भारतपर अधिकार करनेके लिए निमन्त्रण दिया। उसे खुश करनेके लिए उसने 'शियाधर्म' भी अगीकार कर लिया और अपनी मुहरपर १२ इमामोके नाम खुदवाये। उसे आशा थी कि इन बातोसे अहमदशाह खुश हो जायगा और ईरानी सिपाही उसकी मदद करेगे।

८ जनवरी १७४८ ई० को अहमदशाह अब्दाली लाहौरके पास पहुँच गया। उसने अपने गुरु बाबा साबिरको शहरमे भेजा। उसकी माँ लाहौर मे थी और वह उससे मिलना चाहता था। किन्तु जन-साधारणमे यह प्रसिद्ध था कि बाबा साबिर जादूगर है। शाहनवाजने उसे गिर-फ्तार करवा लिया पर बिना उसकी आज्ञाके ही उसके किसी छोटे अधि-कारीने दूसरे दिन उसे कत्ल कर दिया। अब्दाली क्रुद्ध हो गया और बदला लेनेका हुक्म दिया। शाहनवाज रातो-रात शहरसे निकल भागा। उसकी देखा-देखी, और अफसर भी निकल गये। उनके भगनेसे कैदमे पडे जिक्रयारखाँके निष्ठावान् सेवक छूट गये। उन्होने अब्दालीसे कहा ३०

लाख रुपये ले लीजिए और शहरको चौपट न कीजिए। वह मान गया, फिर भी बहुत-सा माल उसके हाथ लगा। लाहौर पर अधिकार हो जाने से उसकी ताकत दुगुनी हो गयी और वह विश्वासपूर्वक १९ फ़रवरीको दिल्लीकी ओर रवाना हुआ।

अब्दाली दिल्लीके निकट आता जारहा था पर मोहम्मदशाहके विलासी दरबारी कुछ निश्चय नही कर पाते थे। ज्यादातर लोग मोहम्मदशाहसे यही कहते थे कि हुजूर लडाईमे शरीक न हों, अब्दाली ऐसा कहाँका रुस्तम है, बादशाहका कोई भी गुलाम जाकर उसे कैद कर लायेगा (देखिए मज्मुल तवारीख)। जो कुछ समझदार थे वे कहते थे कि बादशाह पानीपत या करनाल तक जरूर जायँ, इसका अच्छा प्रभाव पड़ेगा। मोहम्मदशाह भी इसे समझता था पर उसमे साहस न था।

अन्तमे तय हुआ कि वजीर क़मरुद्दीनखाँ सेनाकी कमान हाथमे लें और ईश्वरीसिह महाराज जयपुर तथा नासिरखाँ उनकी मददके लिए जायँ। ८ जनवरीको प्रयाणका निश्चय हुआ था किन्तु ४–५ दिन तोपखानेकी प्रतीक्षामे ही लग गये। उधर ईश्वरीसिह भी बादशाहसे खुश न था क्योकि उसने रणथभौरका क़िला माँगा था जिसे देनेसे बादशाहने इन्कार कर दिया था, इसलिए वह भी टालमटोल करता रहा। यह फ़ौज दिल्लीसे १६ मील, नरेला तक, पहुँची होगी कि समाचार मिला अब्दालीने लाहौर ले लिया। इस समाचारसे मुगल सरदारोके होश-हवास जाते रहे। ख़ैर, उनके कहनेसे शाहजादा अहमदशाहको उनके साथ भेजा गया। २५ जनवरीको ये लोग सरहिन्द पहुँचे पर वहाँके किले पर भी अफ़ग़ानोने सरलतापूर्वक अधिकार कर लिया। किलेदार मार दिये गये, स्त्रियाँ कैद कर ली गयी। अब दिल्लीका रास्ता साफ हो गया। दिल्लीवालोने नादिरशाहके अत्याचारोंकी याद करके अपनी स्त्रियोको वेश बदल कर शहरके बाहर भेज दिया।

११ मार्चको एक गोलेसे घायल होकर वजीर कमरुद्दीन मर गया।

उसके पुत्र मुईनुलमुल्कने सेनाको सँभाला और बडी बहादुरी दिखाई पर ईश्वरीसिह अपने नाईकी सलाहसे भाग निकला। इस समय सफदरजगने बड़े साहससे काम लिया। इसी समय, सयोग-वश अब्दालीके गोला-बारूदमे आग लग गयी जिसमे एक हजार अफगान सिपाही जलकर राख हो गये। इस घटनासे अब्दालियोके पाँव उखड़ गये। ये लोग लौट कर पानीपतके पास पहुँचे थे कि मोहम्मनशाहके देहावसानका समाचार मिला। इस प्रकार अहमदशाह शाहजादाको विजय एव सिहासन एक ही साथ प्राप्त हुआ। मीरने इन बातोंका वर्णन 'ज़िक्रेमीर'मे किया है।

अब अहमदशाह गद्दी पर बैठा। इस समय उसकी उम्र २२ सालकी थी पर उसे न शासनका ज्ञान था, न सैन्य-सचालनका। उसका

अहमदशाहका शासन

समय बेगमोके साथ गुजरा था। उसे अच्छी शिक्षा भी न मिली थी, बापने भी ज्यादा ध्यान न दिया था। बडी कठिनाईसे अबतककी जिन्दगी बीती थी। अब एकदम बन्धन हट गये; कोई रोकटोक करनेवाला न रहा। परिणाम यह हुआ कि बुरी सगतमे पड़ गया। साथी जान-बूझकर इसे गलत रास्ते पर डालते थे। विशेषत: वह जावेदखाँ खाजासराके हाथ की कठपुतली था। शराब और औरतके सिवा उसे किसी बातसे मतलब न था। उसके साथ कोई मर्द तो दिखाई ही न देता था, सदा परियोका काफला चारो ओर घेरे रहता था।

जो इसे सूझती करता था। १७५३ ई० की बात है कि एक दिन अपने ६ सालके बच्चे महमूदशाहको खेमेमे मसनद पर बिठा कर दरबार लगवाया; सब सरदार उस बच्चेके सामने खड़े हुए, नजरे दी गयी। नवम्बर ५३ मे इसी बच्चेको पजाबका गवर्नर नियुक्त किया। और मजेकी बात यह कि उसका नायब एक सालका दूध-पीता बच्चा नियुक्त हुआ। इसी तरह कश्मीरकी सूबेदारी १ बरसके एक बच्चेको दी। यह सब खेल उस समय हो रहा था जब अब्दाली पजाब और कश्मीरका दरवाज़ा खटखटा रहा था।

वह बड़ा डरपोक भी था। सिकन्दराबादमे उसे मराठोके विद्रोहका समाचार मिला; बस वह यों सर पर पैर रखकर भागा कि बेगमोको भी साथ न लिया। वे सब क़ैद हुई। अपने शासनके अन्तिम २-३ सालोमे उसने प्रबन्धकी ओर कुछ ध्यान दिया पर अनुभवहीनताके कारण उसे कोई सफलता न मिली। इसके दरबारमे खाजासराओं और औरतोंका राज था। इसके पिता मोहम्मदकी बेगमोमे एक नर्त्तकी ऊधमबाई भी थी। अहमदशाह उसके आदेश बिना कोई काम न करता था। इस औरतका चरित्र गिरा हुआ था। एक खाजासरा जावेदख़ाँसे उसका ऐसा लगाव था कि सब लोग थू-थू करते थे। वह रातको भी अन्त.पुरमे रहने लगा था। शाही दरबान उससे बड़े क्रुद्ध थे, इसलिए कि उन्हे महीनोसे वेतन न मिला था। एक दिन वे सब गधा और एक-एक कुतिया पकड़ लाये। जो अमीर आता उससे कहते (गधेको दिखाकर) यह नवाब बहादुर है, और यह (कुतियाको दिखाकर) हजरत कुदसिया है, पहले इनको सलाम कीजिए, फिर आगे बढिए।

जब बादशाहका यह हाल हो, राज्य क्या चलता ? आर्थिक स्थिति इतनी गिर गयी थी कि सिपाहियोको महीनोसे वेतन नही मिला था। वे रोज प्रदर्शन करते थे पर उनके लिए दो लाख रुपये भी एकत्र न हो सके। उधर ऊधमबाईने अपनी सालगिरहका समारोह मनाया जिसमे दो करोड़ खर्च किये गये।

अहमदशाहने सफदरजगको वजीर बनाना चाहा किन्तु निजामुल्मुल्क आसफजाहके भयसे तदनुकूल घोषणा न की जा सकी। वह काँटा भी शीघ्र ही दूर हो गया। २१ मई (१७४८) को बुढानपुरमे आसफजाहकी मृत्यु हो गयी। सफदरजगको मन्त्रित्वके सम्पूर्ण अधिकार मिल गये।

उधर राजपूतानेमे मारवाड़के राजा अभयसिंह और नागौरके बख्तसिह मे चल रही थी। १७४९ से १७५१ तक यह झगड़ा चलता रहा। दिल्ली

बख्तसिहके साथ थी। अन्तमे उसीकी विजय हुई और उसके अधिकारमे जोधपुर एव अजमेर दोनों आ गये।

दिल्ली बख्तसिहका साथ इसलिए दे रही थी कि उसके द्वारा राजपूतानेसे शेष कर मिलनेकी सभावना थी पर उसने कुछ नही दिया। दिल्लीने सैनिक अभियान भी किया पर कोई विशेष सफलता न हुई। १७५० मे मल्हार राव होल्करने जयपुर पर हमला किया। उस समय ईश्वरीसिह राजा था। उसमे होल्करका सामना करनेका साहस न था। उसने विषपान करके आत्महत्या करली। सब तरहकी कोशिशे हुई पर न मराठे, न दिल्लीवाले राजपूतानासे विशेष धन पा सके।

इन लडाइयोमे मीर भी रिआयतखाँके साथ थे। उन्होने इन लडाइयो का आँखो-देखा हाल लिखा है।

बहरहाल, विवश होकर मीरबख्शी दिल्ली वापस आगया। इस अभियानसे कुछ मिलना तो दूर रहा, उलटे कर्ज बढ गया। राजस्थानके अभियानमे ६० लाख खर्च हुए और मुश्किलसे पाँच लाख हाथ आया। फ़ौजमे १८ हजार सिपाही थे जिन्हे साल भरसे एक पैसा वेतन न मिला था। मीरबख्शी सादातखाँने रोजके तकाजोसे ऊबकर दरबारका आना-जाना छोड दिया। पूछने पर कहता, कोई बादशाह ही नही, किसके पास जाऊँ? उस ख़ाजासराके पास जाकर इज्जत न गँवाऊँगा।

ख़ाजासरा जावेदखाँने सुना तो आग-बबूला हो गया। झूठी-सच्ची गढकर बादशाहसे हुक्म निकलवा दिया कि सादातखाँको मीरबख्शीके पदसे हटाया जाता है। उसके घर पर पहरा बैठा दिया और तोपे लगवा दी तथा गाजीउद्दीनखाँको मीरबख्शी बनवाया और इन्तजामउद्दौलाको अजमेर का सूबेदार। इस तरह तूरानी पार्टीका जोर बढा दिया। सफदरजग और जावेदखाँके बीच राजनीतिकी बिसात पर शतरजकी चाले चली जा रही थी। इस समय मीर रिआयतख़ाँकी नौकरी छोडकर जावेदख़ाँकी नौकरीमे आ गये थे।

१५ सितम्बर १७४८ को रुहेला सरदार अली मोहम्मदका देहावसान हुआ। अफ़वाह थी कि उसने बडी दौलत छोडी है। सफदरजगने कायमखॉ बगशको रुपयेका लोभ देकर रुहेलखण्डका फौजदार बना दिया। फलत. क़ायमख़ॉ बगश तथा हाफ़िज अहमदखॉं रुहेलामे लडाई हुई और क़ायमखॉ मारा गया। पर आश्चर्य सफदरजगको उसकी मृत्यु पर दुःख नही हुआ, उलटे उसने उसकी सारी जायदाद पर अधिकार करना चाहा किन्तु क़ायमकी मॉ बीबी साहबाने अपने सौतेले बेटे अहमद बगशसे मदद माँगी और कहा कि 'अगर खुदा तुम्हे औरत पैदा करता तो मुझे सब्र आ जाता। तुम मर्द हो, बड़ा अफसोस है, मुझ पर यह वक्त पडे और तुम बैठे देखते रहो।' यही नही, उसने अफगान किसानोके पास अपनी चादर भेजी और अपनी बेकसी बताकर फरयाद की। इसका नतीजा यह हुआ कि सारे फर्रुखाबादमे आग लग गयी। सफदरजंगके आदमियोने वहाँ बडे अत्याचार किये थे। इससे सारे अफगान किसान भड़क उठे और सफ़दरजग का नायब नवलराय उनके हाथों मारा गया। सफदरजग स्वय सेना लेकर आया पर वह भी घायल होकर और हारकर भाग गया। वजीरकी हार कोई मामूली हार नही थी। इसका बड़ा असर पडा।

युगकी मकड़ीके जाले

बादमे सफदरजगने मल्हारराव होलकर और सूरजमल जाटसे मिलकर अफगानो पर आक्रमण किया और उनको बुरी तरह पराजित किया। मीरने लिखा है :—"वज़ीर बारे दोगर लश्कर कशीदद अफ़ग़ानाँरा मग़लूब साख्ता तसल्लुत तमाम दर हुजूरआमद।"

१७५२ ई० मे अब्दालीने फिर हमला किया। इसमे रुहेलोने अब्दाली का साथ दिया और रुहेलोके खोये अधिकार पुनः हाथ आये। उधर सफ़दरजंगने अब्दालीसे बचनेके लिए मराठोको ५० लाख रुपये और पेशवाको आगरा एव अजमेरकी सूबेदारी देनेके प्रलोभन पर मददके लिए बुलाया।

पर सफदरजगके पहुँचनेमे देर हुई और वादशाहने भयवश पजाव और सिधके सूवे अव्दालीको सुपुर्द कर दिये। जव २५ एप्रिलको सफदरजग ५० हजार मराठा सिपाहियोके साथ दिल्लीके समीप पहुँचा तो जावेदखाँने उसे वताया कि अव्दालीसे सुलह हो गयी है और अव इन मराठा सिपाहियो की आवश्यकता नही है। सफदरजग वडा क्रुद्व हुआ। सवसे वड़ा सवाल यह था कि मराठोको जो पचास लाख देनेका वादा किया गया था वह कैसे पूरा किया जाय ? रुपया न मिलनेपर मराठे दिल्लीके पहले ही रुक गये और लूट-मार शुरु कर दी। हजारो गाँव नष्ट हो गये। दिल्ली शहरके निवासी यह सव समाचार सुनकर भयसे काँपने लगे क्योकि न जाने कव मराठे आकर लूटने लगे। सफदरजग चुप था। जावेदखाँने स्वय मल्हारराव होलकरसे मिलकर वातचीत शुरू की। तय हुआ कि उन्हे कुछ लाख रुपये दे दिये जायँ और वे ४ मईको चले जायँ। इस तरह ९ दिनके त्रासके पश्चात् फिर दिल्लीने चैनकी साँस ली।

जावेदखाँ और सफदरजगके सम्वन्ध विगडते ही गये। मौका पाकर अगस्त १७५२मे सफदरजगने जावेदखाँको कत्ल करा दिया। उसका सिर वजीरके महलपर लटका दिया गया और धड यमुनाकी रेतीपर फेक दिया गया।

किन्तु जावेदखाँके कत्लसे सफदरजगका कोई लाभ नही हुआ। उसके सम्वन्ध वादशाह और ऊधमवाईसे और विगड गये। जावेदखाँमे वहुत-सी वुराइयाँ थी, सभी उसे वुरा कहते थे पर उसे पद और जागीरकी लालसा नही थी। उसकी मृत्युके वाद सव अधिकार इन्तजामउद्दौला और इयादुलमुल्कके हाथमे आ गये जो वड़े वशके थे पर जिनकी पद एव धन-सम्वन्धी लालसाकी सीमा नही थी।*

इन्तजामउद्दौला मोहम्मदशाहके मत्री कमरुद्दीनखाँका पुत्र था और

* सर यदुनाथ सरकार।

अपनी काहिली एवं कायरताके लिए प्रसिद्ध था। वह मार्च १७५३ ई०से मई १७५४ ई० तक मत्री रहा पर शासनमे स्थिरता एव सुधार लानेका कोई प्रयत्न नही किया। इयादुल्मुल्क आसफजाहका पोता था। उसका वास्तविक नाम शहाबुद्दीन था किन्तु धीरे-धीरे इमादुल्मुल्क, फीरोजजग मीर बख्शी और निजामुल्मुल्क आसफजाहको उपाधियोसे विभूषित हुआ, यहाँ तक कि जून १७५४ ई० मे प्रधानमत्री भी हो गया। यह वीर एव साहसी था तथा काव्यका प्रेमी किन्तु धन-सम्पत्तिके लोभने इसके इन गुणोपर परदा डाल दिया और निर्दयता तथा अत्याचारकी कहानी पीछे छोड गया।

जावेदख़ाँकी मृत्युके बाद 'मीर' बेकार हो गये। पर सौभाग्य-वश सफ़दरजंगके दीवान महानारायणने आदरपूर्वक इन्हे बुलाया और अपने पास रख लिया। यहाँ 'मीर' की खूब निभी। महानारायणके दीवानखानेके दारोग़ा मीर नजमुद्दीन अली 'सलाम'से इनकी खूब पटती थी। यह भी अकबराबाद (आगरा) के ही रहनेवाले थे। दोनो साथ बैठते, शेर कहते, दिल्लगीकी बाते करते। मीरने स्वय उनकी प्रशंसा की है :--

"यह आदमीयत, हुर्मत[1], अजमत[2] सब ही औसाफ[3] के जामअ[4] है और मुझमे और इनमे बड़ा इत्तिहाद[5] है।"

इस समय सफदरजंग निष्कण्टक था। वह पूरे अर्थमे प्रधान मन्त्री था। सात महीने तक बिल्कुल शान्ति रही। यदि वह दूरदर्शी होता तो इस शान्तिके कालको शासन एव सेनाके सुप्रबन्धमे लगाता पर लोभी आदमी दूरकी नही देखता। फलतः इसने कुछ नही किया बल्कि अपने अभिमानसे बादशाह तथा सरदारोको नाराज कर दिया।

उधर सरकारी ओहदेदारो, चोबदारों और तोपखानेके सिपाहियोको महीनोसे वेतन नही मिला था। सैनिकोका विद्रोह रोजकी बात हो गयी। वे लोग सड़कोपर शोर मचाते, अफ़सरोका रास्ता रोककर खड़े हो जाते

---

१. मर्यादा। २. महत्ता। ३. गुणों। ४. समष्टि। ५. ऐक्य।

और महलके दरवाजोको वन्द कर देते थे। इससे कई-कई दिन तक किले-वालोको न पानी मिलता, न खाना। उधर मराठे सदा दिल्लीके आस-पास चक्कर काटा करते थे और अवसर देखकर लूट लेते थे। जाटोंका भी यही हाल था—यहाँ तक कि जाटगर्दी शब्द ही उनकी जवर्दस्तीके लिए चल गया।

इस समय सम्राट्की सेना दुर्वल एव भूखकी मारी थी किन्तु स्वय सफदरजगके पास काफी वडी सेना थी। इसमे अधिकाश मध्य एशियाके तुर्क सिपाही थे जो 'कुलाहपोश' या 'मुगलिया' कहलाते थे। इन्ही दिनो मीर वख्शी गाजीउद्दीन फीरोजजगकी मृत्युका समाचार आया। १२ दिसम्वर ५२ को सफदरजगने इस पदपर शहावउद्दीन इमादुल्मुल्कको नियुक्त करवा दिया। इस समय वह केवल १५ सालका लड़का था और फौजका उसे जरा भी अनुभव न था।

सफदरजगने सोचा, यो तूरानी पार्टीका एक आदमी तोड कर अपने मे मिला लूंगा, वह आजन्म कृतज्ञता-वधनमे वँधा रहेगा। यही उसकी

आस्तीनका साँप

गलती थी। वह भूल गया कि उस ज़मानेमे कृतज्ञता की परवा किसीको न थी। फलत इमादुलमुल्क आस्तीनका साँप निकला। फिर सफदरजगके खर्च दिन-दिन वढते जा रहे थे। जव वादशाह अपने पहरेदारो और सैनिकोको वेतन नही दे पाते थे तव सफदरजगने अपने पुत्र शुजाउद्दौलाकी शादीमे पैतालीस लाख रुपये खर्च किये। इन कारणोसे तथा जावेदखाँके कत्लसे वादशाह वहुत दुखी रहते थे। जावेदखाँके कत्लके वाद ऊधमवाई (साहिवउज्जमानी) को तो इतना दु ख हुआ कि उसने अपने सव रत्न-आभूषण उतार फेके और विधवाओकी तरह सफेद कपडे पहिन लिये। सफदरजंगको भय हुआ कि कही वह वदला न ले इसलिए उसने अन्त पुरपर अपने आदमियोका पहरा रखा और अन्त पुर मे भी अपने विश्वासकी आठ स्त्रियोको रखवा दिया जो एक-एक वातपर

ध्यान रखती थी और एक-एक चिट्ठी-पत्री पढती थी। ऊधमबाईको यह बात और बुरी लगी। वह बिगड गयी और उसने तुरन्त इन जासूसोको बाहर किया। इसपर सफदरजगने नाराज होकर दरबारका आना-जाना छोड़ दिया। चूँकि शक्ति उसके हाथमे थी, बादशाह और ऊधमबाई दोनो को इस रूठे हुए वजीरको मनाने उसके घर जाना पड़ा। बादशाहने सम्पूर्ण अधिकार सफदरजगको देनेका वादा किया और यह प्रतिज्ञा भी की कि आगे कोई उपाधि या पद किसीको बिना उसकी इच्छाके नहीं दिया जायगा।

अब क्या था सफदरजगकी तूती बोलने लगी। उसने क़िलेमे आने-जानेबालोपर बंधन लगा दिये। इससे सरदारोने किलेमे जाना छोड दिया। १४ सितम्बर १७५३ को शुक्र (जुम्मे) की नमाजको बादशाह गये, तब सिर्फ एक आदमी उनके साथ था। १६–१७ सितम्बरको दरबार हुआ तो उसमे भी सफदरजगके चन्द आदमियोके सिवा कोई शामिल नही हुआ। इस समय बादशाहकी स्थिति एक कैदी-जैसी थी, पैसा पास नही; राजकीय सेवकोको दो सालसे वेतन नही मिला था। जब उनका तक़ाजा बहुत बढा तो राजकोष केवल ४ मासका वेतन चुका सका। बात यह थी कि सफदरजंग जो कुछ वसूल करता खुद रख लेता, सरकारी खजानेमे जमा ही नही करता था।

ऊधमबाई यह सब देखती थी और कुढ-कुढकर रह जाती थी। अन्तमे हारकर मार्च १७५३मे उसने षड्यन्त्र किया। किलेदार अबूतराबखॉ

जाटोंकी लूट

(जो सफदरजगका आदमी था) को निकाल बाहर किया। अब दोनोमे चलने लगी। यह झगड़ा ७ नवम्बर १७५३ तक चलता रहा। बादशाहने शुजाउद्दौलाको निकालकर समसामउद्दौलाके बेटे (समसाम द्वितीय) को रखा और अबूतराबखाँकी जगह अहमदअगाको किलेदार बनाया। सफदरजगने सूरजमल जाटको दिल्लीपर हमला करनेके लिए उकसाया।

जाटोने नगरप्राचीर तक खूब लूट-मार की और लाखों रुपये एकत्र किये। मुहल्लेके मुहल्ले तबाह होगये। पुरानी दिल्लीके लोगोका यह हाल था कि लोग जानके डरसे इस मुहल्लेसे उस मुहल्ले, उस मुहल्लेसे इस मुहल्ले भागते फिरते थे। विवश होकर बादशाहने सफदरजंगको पदसे हटा दिया और उसकी जगह एतमादउद्दौलाको मत्री बनाया तथा इमादुलमुल्क मीर बख्शीको निजाम एव आसफजाहकी उपाधियाँ प्रदान की। सफदरजंगने विद्रोह किया। उसने बादशाहके अधिकार एव आदेशको माननेसे इन्कार कर दिया। उसने शुजाउद्दौला द्वारा खरीदे हुए एक युवक ख्वाजासराको अकबर आदिलशाहकी उपाधिके साथ सिहासनपर बिठाया, स्वय उसका वजीर बना। इमादुलमुल्कने बडी चालाकीके साथ सफदरजगके तुर्क सिपाहियोंको तोड लिया और इस तरह २३ हजारकी सेना बना ली। उसने सफदरजगके साथी ईरानियोके मकानोको लूटनेका हुक्म दे दिया। हजारो घर लुट गये। २९ सितम्बरको खुलकर लडाई हुई। बादशाह एव इमादुलमुल्ककी सहायताके लिए नजीबखाँ रुहेला भी आ गया था। स्वभावतः बादशाह ज्यादा प्रबल हो गया पर इमादुलमुल्क एव वजीर इन्तजामउद्दौला की पारस्परिक प्रतियोगिता बीचमे आ पडी। उधर बादशाहकी आर्थिक स्थितिके कारण भी मामला बिगड गया। इस समय बादशाहके पास ८० हजार सिपाही थे जिनको वेतन देनेके लिए उसके पास धन नही था। उसने अपने रत्नादि बेच दिये, महलका सामान बेचा पर पूरा न पडा। भूखे सिपाही दिल्लीकी गलियोमे लूट-मार करते फिरते थे। दोनो पक्ष पस्त थे इसलिए जयपुर नरेश माधवसिहने बीचमे पडकर सुलह करा दी। सफदरजग अवध चला गया।

सफदरजगके अवध जानेके ६ मास तकका समय बड़ी अव्यवस्था और अशान्तिका समय था। उपर्युक्त दोनो प्रधान अधिकारियोकी पारस्परिक प्रतिद्वन्द्वितामे सब कुछ चौपट हो गया। ८० हजार सैनिकोका खर्च २४ लाख मासिक था। ७ मास युद्ध चला, इस तरह १ करोड़ ६८ लाख तो

सिर्फ़ वही देने थे। पुराने सिपाहियोको तो दो सालसे वेतन नही मिला था। रुहेले और मराठे अलग रुपये माँगते थे।

उधर जाटोने सफदरजंगके विद्रोहकालमे अपनी शक्ति खूब बढा ली थी। सूरजमलने महाराज जयपुरसे मैत्री कर ली थी। मराठोने सूरजमलसे

जाट-मराठा संघर्ष

दो करोड़ रुपये माँगे। उसने ४ लाखपर सौदा करना चाहा जो न हो सका। इसलिए मल्हार-राव होल्करने १६ जनवरी १७५४ को डीग, भरतपुर और खम्भीर पर आक्रमण कर दिया। सूरजमलने देखा, मराठोकी सेना अधिक है, इसलिए खम्भीरके किलेमे बन्द हो गया। मराठोके पास तोपें नही थी इसलिए उनका घेरा सफल नही हुआ। इस घेरेमे १५ मार्च १७५४ को खण्डेराव होल्कर मारा गया और उसकी नौ पत्नियाँ उसके साथ सती हो गयी।

पुत्र-शोकसे बूढा मल्हारराव पागल हो गया और उसने बदला लेनेका निश्चय् कर लिया। मजा यह कि उसके शोकमे शत्रु-मित्र सब सम्मिलित

बादशाहकी बेबसी

हुए। सूरजमल तकने शोक-वस्त्र धारण किये। लड़ाई चलती रही। खम्भीर गढकी दीवारे मिट्टीकी थी पर टससे मस न हुई। इसलिए चार मासके घेरेके बाद सन्धि हो गयी और तय पाया कि जाट मराठोको तीस लाख रुपये तीन क़िस्तमे देगे और वह दो करोड़ रुपये जो इमादुल्मुल्क और मरहठोने बादशाहकी तरफसे माँगे थे, सुविधानुसार मीरबख्शी और होलकरको दिये जायँगे। इस समय इमादुल्मुल्क ही सबसे शक्तिमान् सरदार था। उसीके कारण सफदरजगकी हार हुई थी, उसीने जाटोकी प्रबलताको रोक दिया था तथा होलकर उसीका सहायक था। किन्तु उसकी भी कठिनाई यही थी कि पैसा पास नही था। जो कुछ पूर्वजोकी कमाई थी वह भी सफदरजगसे सघर्षमे खर्च हो चुकी थी, राजकोष रिक्त था और प्रान्तोकी आय बन्द थी। विवश होकर उसने खालसा ज़मीनोसे

रुपया वसूल करना शुरू कर दिया और फरवरी १७५४ ई० मे कोल एव सिकन्दराबाद पर अधिकार कर लिया। उसने आकबतमहमूदको रिवाडी भेजा कि वहाँ पैसा एकत्र करे। यह बात बादशाहको बड़ी बुरी लगी क्योकि उसका अवलम्ब ये जमीने ही थी; वह द्वार बन्द हो जानेसे महल-वालोको उपवासपर उपवास होने लगे। उधर सिपाही वेतन माँगते थे। बादशाह वडा परीशान था। उसने बार-बार वख्शीको लिखा कि वह सिपाहियोका वेतन चुका दे किन्तु वह बरावर टालमटोल करता रहा। खम्भीरके घेरेके बाद यह सम्बन्ध और बिगड गया। क्योकि वहाँ तोपे भेजनेमे बादशाहके टालमटोल करनेपर इमादुलमुल्कने आकबतमहमूदको मराठी सेनाके साथ भेजा। महमूदने दिल्लीके धनियोको खूब लूटा। उधर सेनाके भूखे सिपाहियोने हर जगह लूट-मार शुरू कर दी। किले वालोको खाना भी न मिला। खारी बावली और लाहौरी दरवाजाके समीप हज़ारो घर वीरान और बेचिराग हो गये और लाशोके ढेरके ढेर लग गये। आकबतमहमूद वरावर सिकन्दरावाद पर छापे मारता रहता था। पूछनेपर कहता कि तुर्क सिपाही उसके नियत्रणमे नही है और अपनी तनख़ाहे वसूल करनेके लिए लूटमार करते है।

विवश हो बादशाह अहमदशाहने स्वय सिकन्दराबाद जानेका निश्चय किया। पर तोपचियोने विना वेतन लिये एक पग आगे रखनेसे इन्कार कर दिया। शाही हाथी भी चार दिनके भूखे थे और उनमे बोझ उठानेकी शक्ति ही न थी। एक तो सामान ही क्या था, दूसरे उसे ले जानेके लिए कोई गाडी भी सुलभ न थी क्योकि नकद दाम लिये बिना कोई इस सेवाके लिए तैयार नही था। किसी प्रकार २७ एप्रिलको यह दल रवाना हुआ। दो एक दिन बाद ऊधमबाई तथा दूसरी बेगमे भी पहुँच गयी और सिकन्दराबाद बादशाहके अधिकारमे आ गया।

पर इससे बादशाहको कोई विशेष लाभ नही हुआ। मराठों और जाटोने सुलह कर ली। समाचार मिला कि वे बादशाहपर आक्रमण

करेंगे। इससे बादशाह इतना घबड़ाथा कि रोने लगा और ईश्वरसे प्रार्थना की कि किसी तरह यह बला टल जाय पर बला टलनेवाली न थी। होलकर की सेनाएँ सिकन्दराबादके पास आती जा रही थी। बादशाह दिल्ली भाग गया और इस परीशानीमे भगा कि बेगमोंको भी साथ न ले जा सका और वे (ऊधमबाई ओर साहब महल इत्यादि) मराठोके हाथ वन्दिनी हुई। उनके आभूषण छीन लिये गये। होलकरने ऊधमबाईके साथ सद्-व्यवहार किया पर अन्य बेगमोको बड़े कष्ट उठाने पडे। कुछ तो पैदल और नगे सिर भागती-भागती, भूखी-प्यासी दिल्ली पहुँची। विवश हीकर बादशाहने इन्तजामउद्दौलाको हटा दिया और इमादुलमुल्कको वजीर बनाया। २ जून १७५४ को इमादुलमुल्क बादशाहकी सेवामे उपस्थित हुआ और कुरान शरीफपर हाथ रखकर बादशाहके प्रति वफादारीकी क़समे खाई और कहा कि मै अपना खून बहाकर आपकी रक्षा करूँगा।

पर जमाना ऐसा आ गया था कि लोगोके चरित्र गिर गये थे। किसी का भरोसा न था। क़ुरानको इन्सान धोके-धडीके लिए प्रयुक्त करने लगा था। इमादुमुल्कने उधर कसमे खाई इधर शाह आलम बहादुरशाहके बेटे आलमगीर द्वितीयको तख्तपर बैठा दिया और जिसकी निष्ठाकी कसमे खाई थी उसीके साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया कि मानवता शर्मसे पानी-पानी हो गयी। अहमदशाह डरके मारे रगमहलकी झुरमुटोमे छिप गया। जब पता लगा तबतक प्याससे उसका गला सूख गया था। उसने पानी माँगा तो आक़बत महमूदके भाई सैफुद्दौलाने वही पडे एक मिट्टीके ठीकरेमे पानी डालकर उसके मुँहमे लगा दिया।

इमादुलमुल्क भी चैनसे न बैठ सका। उसके हाथमे सब कुछ था पर शाही फौजको सन्तुष्ट करनेका कोई उपाय न था। उसे न जाने कबसे वेतन नही दिया जा सका था। सैनिक फाक़े कर रहे थे। वे रोज व्यापारियो और अमीरोके घर लूटते थे और कोई रोकनेवाला न था। २१ जून १७५४ को तोपखानेके सिपाहियोकी माँगोने इतना उग्र रूप धारण किया कि उन्होने

क्रोधमे आकवत महमूदके कपडे फाड डाले। इमादने भी सारा दोष आकवतपर डाल दिया और तीन दिन वाद उसे क़त्ल करके उसकी लाश यमुनाकी रेतीपर फेकवा दी। अहमदशाह वादशाह और उसकी माँ की आँखोमे सलाइयाँ फेरकर उन्हे अन्धा कर दिया गया। मीरने इन घटनाओका वड़ा दर्दनाक वर्णन किया है। उनका निम्नलिखित शेर भी इसी घटनाकी ओर इशारा करता है—

शहाँ कि कहले जवाहर थी ख़ाके पा जिनकी
उन्हीं की आँखों में फिरती सलाइयाँ देखीं।

आलमगीर द्वितीय ५५ सालकी उम्रमे तख्तपर वैठा। उसका जीवन कष्टोमे ही वीता था। इतिहास और साहित्यका दीवाना था। अधिकाश समय अध्ययनमे व्यतीत करता था। औरगजेवकी भाँति वह भी पाँचो समय नमाज पढ़ता और सरल जीवन विताता था। एक-एक सरकारी कागजको स्वय पढता। मतलव अपने कर्तव्यके प्रति जागरूक था पर उसे सैनिक एवं शासनसम्वन्धी अनुभव विलकुल न था, न दृढता थी। इसलिए अपनी सारी अच्छाइयोके होते हुए भी वह इमादुलमुल्कके हाथकी कठपुतली वन गया।

बूढे की विलासिता

फिर वह विलासी भी था। वुढौतीमे भी नई-नई शादियाँ करता था। फरवरी १७५६ मे जव उसकी उम्र साठके निकट पहुँच रही थी, उसने स्व० मुहम्मद शाहकी कन्या हजरत वेगमसे शादीका इरादा किया। हजरत वेगम अनिन्द्य सुन्दरी थी और केवल १६ सालकी थी। लड़कीने दृढतासे काम लिया और विवाहसे इन्कार कर दिया। यह भी कहा कि यदि मुझे अधिक तग किया गया तो मै जहर खा लूँगी। आलमगीर (द्वितीय) ने उसे एकान्त वन्दीगृहमे डाल दिया। १ सितम्बर १७५८ को वादशाहने

जीनत अफ़रोज बेगमसे शादी की—यह उस वक्तका हाल है जब जनाबको चक्कर पर चक्कर आते थे और साँस उखड़ी जाती थी।

अशिक्षित इमादुल्मुल्कके कष्ट भी बढते गये। रुहेलोंके हाथों उसकी बड़ी दुर्गति हुई। उसे पानीपतकी सड़कोपर घसीटा गया और उसकी बेगमोके साथ अनेक प्रकारके दुर्व्यवहार किये गये।

इन दिनो रुहेले जोरो पर थे। १७५७ के अब्दालीके भयकर आक्रमणके बाद नजीबुद्दौला तेजीसे उठ रहा था। अब्दालीने इमादुल्मुल्कको अलग कर दिया। इमाद मराठोसे मिल गया। सितम्बर ५७ मे मराठोने हमला करके नजीबको निकाल बाहर किया और अहमद खाँ बगशको मीरबख्शी बनाया। बंगश बराबर बीमार रहता था इसलिए उसकी आड़मे मरहठे ही कर्त्ता-धर्ता थे।

इस समय दिल्लीमें बादशाहका शासन नाम-भरको था। आर्थिक स्थिति अवर्णनीय रूपसे बिगड़ चुकी थी। बादशाहके नौकर-चाकर भूखों मर रहे थे। स्वय बादशाहके पास ईदगाह तक जानेके लिए सवारी न थी। १० मई १७५८ को वह महलसे पत्थरवाली मस्जिद तक पैदल गया। सिपाहियोंको ५-६ सालसे वेतन नहीं मिला था। उन्होने अपने घोडे और कपडे तक बेच दिये थे। शाही अस्तबलके जानवर भूखो मर रहे थे, उन्हे कई-कई दिनो तक फ़ाके होते थे। बेगमोको प्राय. उपवास ही करना पड़ता था। एक दिन शाकिरखाँ शाहजादा आलीगुहरके सामने ख़ैरातखाने का शोरबा ले गया। शाहजादेने कहा कि यह महलकी बेगमोको दे दो जिनके मुँहमे तीन दिनसे एक दाना नही गया है। 'तारीख आलमगीर सानी' मे लिखा है कि एक दिन किलेकी बेगमे भूखसे बिलबिला उठी और पर्देका कुछ ख्याल न कर महलसे शहरकी ओर जाने लगी। किन्तु किलेके द्वार बन्द थे इसलिए वही चुप होकर बैठ रही और एक रात तथा एक दिन इसी तरह बैठी रही। १७५७ मे दो बार अब्दालीने दिल्लीको लूटा; पाँच महीने नजीबुद्दौलाने लूट-खसोट जारी रखी। अनेक प्रकारकी

महामारियाँ फैल रही थी। चारो ओर दुर्भिक्षका राज था। खाद्य द्रव्यका बाजारोमे बडा अभाव था। मूगकी दाल दो रुपये सेर विकती थी और इमली सौ रुपये सेर। वेरोजगारी वरावर वढती जाती थी; चोरी-डाका आम वात थी। नवम्वर १७५८ मे भूकम्प भी आया जिसमें वहुतसे आदमी मर गये। इस समय मराठे पजाब तक पर छा गये थे। मार्च ५८ में उन्होने सर हिन्द तक ले लिया था। वे वढते ही गये और अटक तक पर उनका अधिकार हो गया। वहाँ अपना आदमी रखकर वे फिर दक्षिण चले गये।

२९ नवम्वर १७५९ को इमादुद्दौलाने वादशाह (आलमगीर द्वितीय) और अपने प्रतिद्वन्द्वी इन्तजाम दोनोको क़त्ल करवा दिया। इधर अहमद-शाह अव्दालीने पुन. आक्रमण कर दिया। १७६० मे वरारी घाट (दिल्लीसे दस मील उत्तर स्थित) पर मराठो एव अव्दालीमे घमासान लडाई हुई। इसमे दत्ताजी मारे गये, जनकोजी सिंधिया घायल हुए, मराठोकी वुरी हार हुई। 'मीर' ने 'जिक्रेमीर' मे लिखा है कि अव दिल्ली मे न कोई वादशाह था, न कोई वजीर। उसकी हालत विधवासे अधिक व्यथाजनक थी। अव्दालियोने उसे मन भर लूटा। इस लूट और वर्वादी का विस्तृत वर्णन मीरने लिखा है.—

दिल्ली की लाचारी

"......मै शहरमे ही रहा। शामके वाद मुनादी हुई कि शाह अव्दालीने सवको क्षमाप्रदान कर दी है, रिआयामे से कोई परीशान न हो; लेकिन थोडी-सी रात गुजरी थी कि दुर्रानियोने जुल्म शुरू कर दिया। शहरको आग लगा दी। घर जला दिये। अगली सुवह कयामतकी सुवह थी। अफगान और रुहेले हत्या और विध्वसमे लग गये। उन्होने मकान तोड़ डाले, लोगोकी मुश्के कस ली, अक्सरको जला दिया या उनके सिर काट लिये। एक आलम खाक और ख़ूनमे मिल गया। तीन रात और दिन यह जुल्म जारी रहा। दुर्रानियोने खाने-पीनेकी कोई चीज न

छोड़ी। उन्होने छतें और दीवारें तोड़ डाली और लोगोके सीने जख्मी कर दिये। राज्यके सरदार फ़क़ीर हो गये, वजीर और शरीफ़ नगे और बड़ी-बड़ी हवेलियोवाले गृहहीन।·······लोगोंके बीबी-बच्चे क़ैद थे। और क़त्ल व गारतका सिलसिला बिना रोक-टोक जारी था। अफगान जलील करते और गालियाँ देते थे और तरह-तरहके जुल्म करते थे। जो चीज मिली लूट ली। नई दिल्ली यानी शाहजहानाबाद ख़ाकके बराबर हो गयी। इसके बाद यह बेरहम पुरानी दिल्लीकी तरफ मुतवज्जह हुए और बेशुमार लोगोको हलाक कर डाला। सात आठ दिन तक यही हगामा गर्म रहा। किसीके घर पहननेके कपडे और एक दिनके खाने तकका सामान न रहा। मर्दोके सिरपर टोपी और औरतोके सिर पर दुपट्टा तक नही था। मुसीबतजदोकी फरियाद आसमान तक पहुँचती लेकिन अव्दालीके कान पर जूँ न रेगती। बहुत-से लोग दिल्ली छोड़कर लखनऊ चले गये और वहाँ मर गये।"

इस हगामेमे मीर साहबकी हालत, जो पहिले से ही खराब थी, बहुत बुरी हो गयी। उनका तकिया या निवासस्थान भी मिट्टीमे मिला दिया गया। यह दुखी हो, राजा जुगलकिशोरकी आज्ञा ले, शहरसे निकल गये। ८–९ मील चलनेके बाद रात एक पेडके नीचे बिताई। प्रातः राजा जुगलकिशोरकी पत्नी उधरसे गुजरी। वह इनको और इनके साथियोको वरसाना ले गयी। फिर वहाँसे जब कामान गयी तब यह भी गये। वहाँ लाला राधाकिशनके पुत्र बहादुरसिहने इनकी इज्जत की और अपने पास रखा। फिर राजाके छोटे लडकेने इन्हे अपने यहाँ बुला लिया और भली-भाँति रखा। इस प्रकार उस कठिनाईके समय अनेक सम्पन्न हिन्दुओने मीरकी सहायता की। वस्तुतः उस समय साम्प्रदायिक दृष्टिकोण उच्च वर्गोमे था ही नही।

मराठोकी हारको पेशवा भूले नही थे। जरा अवकाश पाते ही सदाशिवराव भाऊ को, एक बड़ी सेनाके साथ, उन्होने उत्तरकी ओर रवाना

किया। इस सेनाने २ अगस्त १७६० को दिल्लीपर अधिकार कर लिया। अवधके नवाव शुजाउद्दौला इस प्रयत्नमे थे कि पेशवा और अब्दालीमे किसी तरह सुलह हो जाय, शाह अलम द्वितीय, जो विहारकी ओर था और जिसकी अनुपस्थितिमे शाहे जहाँ द्वितीय गद्दी पर था, को दिल्लीकी गद्दी मिले एव उसके ज्येष्ठ पुत्र मिर्जा जवान वख्तको युवराज वनाया जाय तथा अब्दाली एव मराठे दोनो अपने-अपने देशको लौट जायँ। इस प्रस्ताव पर इमाद विगड गया तथा जाटराज सूरजमल आगववूला हो गये। दोनो विना भाऊ से पूछे वल्लभगढ़ लौट गये। इससे मराठोंको वड़ी हानि पहुँची। भाऊके स्वभावमे कठोरता थी। वह किसीकी कुछ सुनता न था। उसने सूरजमलसे कहा, "तुम तो निरे जमीदार हो, सैनिक अभियानका तुमको क्या ज्ञान?" वूढ़े होलकरके लिए कहा—"वह तो सठिया गया है, और उसकी कोई वात वुद्‌धिसगत नही होती।" इस प्रकार उसने सवको नाराज़ कर दिया। १७६१ मे अब्दाली और मराठोके बीच पानीपतकी मशहूर लड़ाई हुई। मराठोकी सवसे वड़ी कठिनाई रसद और रुपयेकी थी। सिपाही भूखे, घोडे भूखे। अन्तमे १३ जनवरीको भूखे सैनिक भाऊके पास पहुँचे और कहा—"आज दो दिनसे हममेसे किसीके मुँहमे एक दाना नहीं गया। हम यों एड़ियाँ रगड़-रगड़के मरना नहीं चाहते, आज्ञा दीजिए कि मर जाये या शत्रुको मार भगाये।" फलत: १४ जनवरीको भयानक घमासान मच गया। मराठे तथा उनकी ओरसे इब्राहीम गर्दी ऐसी वहादुरीसे लड़ा कि शत्रुओने भी उसकी प्रशंसा की पर भूखी असन्तुष्ट सेना कव तक लडती। फलत. मराठे हार गये। पर्याप्त धन, घोडे, ऊँट अफगानोके हाथ लगे। दक्षिण मे मातम छा गया। पेशवाका पुत्र विश्वासराव मारा गया, भाऊका सिर काट लिया गया और दो दिनके वाद उसकी लाश मिली; यशवंतराव, तिनकोजी सिंधिया, जनकोजी सिंधिया, इब्राहीम

भाऊ की तुनुकमिज़ाजी

वार-वार लुटी दिल्ली

खाँ, शमशेर बहादुर इत्यादि बडे-बडे सरदार एव नायक मारे गये; संता जी को चालीस घाव लगे और महादजी सिंधियाके पाँवमे वह चोट लगी कि उम्र भर ठीक न हुई। सदाशिव राव भाऊकी उच्चाशयता, आत्मत्याग, वीरता असंदिग्ध होते हुए भी उसके स्वभावने उसके पक्षको दुर्बल कर दिया। इस हारने भारतका इतिहास बदल दिया। कहाँ मराठे भारतीय राष्ट्रके नेता थे, कहाँ इस हारका ऐसा मनोवैज्ञानिक प्रभाव हुआ कि उनका साथ देना प्रत्येकने ख़तरनाक समझ लिया। वे इतने हतप्रभ हो गये कि उनकी भागती सेनाकी टुकडियोंको गाँवकी औरतोने लूट लिया।

२९ जनवरी १७६१ को अब्दाली, कोहेनूर लगाये और रत्नजटित वस्त्राभूषणोसे सज्जित, दिल्ली आया। उसने महलमे रहना शुरू किया। चाहता था कि कुछ महीने आरामसे गुजारे किन्तु उसके सैनिक घर जानेके लिए बेचैन थे इसलिए उसने २० मार्चको कूचका हुक्म दे दिया। इन सैनिकोने भी दिल्लीको खूब लूटा। मीर लिखते है:—

"···एक रोज शहरको निकला। चलते-चलते शहरके एक ताजे वीरानेमे पहुँचा। हर कदम पर आँसू बहाता···जैसे-जैसे आगे बढता गया, मेरी हैरत बढती गयी, मकान पहचाने नही जाते थे, मकानोंका कही पता नही था। मकान टूटे हुए, दीवारें बैठी हुई, खानकाहे बेसूफीके और खराबात बेमस्तके वीरान पड़े थे।····बाजार कहाँ जिनका जिक्र करूँ, तिफ्लां तहे बाजार कहाँ, हुस्न कहाँ जिसको पूछूँ, जवानाने रैना चल बसे, पीरांने पारसा गुजर गये, महले खराब कूचे बर्बाद, हर तरफ वहशत हवैदा और उन्स नापैदा।····नागाह उस मोहल्लेमे पहुँचा जहाँ मेरा घर था, दिन रात सोहबतें गर्म रहती थी, शेर पढता था और आशिकाना बसर करता था, रातोको रोता था और हसीनोसे इश्क करता था, वहाँ कोई शनासा तक न मिला कि दो घडी बाते कर लूँ। कुछ देर खडा हैरतसे तकता रहा। सख्त सदमा हुआ और अहद किया कि अब फिर न आऊँगा और जबतक जिन्दा हूँ शहरका कस्द न करूँगा।"

मीर लिखते है.—"चूँकि अफगानोंका गुरूर हदसे गुजर गया था इसलिए गैरते इलाहीने उन्हे सिखोके हाथो जलील किया...उन्होने इस क़दर दिक किया कि ये भागे-भागे फिरते थे और कही पनाह नही मिलती थी।....सिख इनका पीछा करते हुए दरियाए अटक तक पहुँचे और उस सूबे पर मुतसर्रिफ हो गये। चद दिनो वाद...उन्होने लाहौर भी ले लिया।"

उधर १२ जून १७६१ को सूरजमलने आगरा (अकवरावाद) पर कब्जा कर लिया। इस समय आगरा सबसे मालदार शहर था। दिल्लीकी बरवादीने इसे आगे बढाया और समृद्ध किया। सूरजमलके हाथ पचास लाखकी रकम आई। अस्त्र-शस्त्र, सामान, आभूषणका अनुमान करना कठिन है। सब सामान भरतपुर एव डीग भेज दिया गया।

२९ नवम्वर १७५९ को आलमगीर द्वितीय मारा गया था। तवसे उसका वडा बेटा शाह आलम मारा-मारा फिरता रहा था, उसे दिल्ली आनेकी आज्ञा न थी। १२ वर्ष वाद उसका निर्वासनकाल समाप्त हुआ और उसने वादशाहके रूपमे दिल्लीमे प्रवेश किया (१७७२)। वह दिल्ली के राजकुमारोमे सबसे योग्य था। वह अरवी, फारसी, तुर्की, सस्कृत तथा कई भारतीय भाषाएँ जानता था। वह उर्दू, फारसी तथा हिन्दीमे कविता करता था। उर्दू फारसीमे 'आफताव' के नामसे और हिन्दीमे शाहआलमके नामसे। शाहआलमके हिन्दी, फारसी, उर्दू और पंजावी शेरोका सग्रह 'नादिराते शाही' रामपुरसे प्रकाशित हो गया है।

किन्तु उस युगमे देश और जातिका चरित्र गिर गया था। हर आदमी देशकी जगह अपने लाभकी वात सोचता था और उसके लिए वुरासे वुरा काम करनेको तैयार हो जाता था। इमाद स्वय साहित्यिक व्यक्ति था, हर समय हाथमे तसवीह फेरता रहता था पर जरा-से लाभके लिए मित्रसे मित्रको कत्ल करवा देता था। वह स्वयं शाह आलमका शत्रु था।

१७६३ मे रुहेला सरदार नजीवुद्दौला तथा सूरजमलमे भी भिड़न्त

हो गयी। इसी लडाईमे सूरजमल मारे गये। उधर अवधके नवाब शुजाउद्दौला तथा मरहठोने मिलकर अंग्रेजोंसे लडाई की पर सफल न हुए। तब शुजा अवध चले गये; मराठे भाग कर ग्वालियर पहुँचे और फिर सूरजमलके पुत्र जवाहरसिह पर आक्रमण कर दिया। जवाहरसिहने आठ-दस हजार सिख सैनिकों एव अपने जाटोकी सहायतासे मराठोंको खदेड़ दिया। मल्हार रावको इतना दु.ख हुआ कि चन्द दिनो बाद मर गया।

सूरजमलका अन्त

इसके बाद मीरने जवाहरसिह एव जयसिहके पुत्र माधवसिह (जयपुर) के युद्धका वर्णन किया है। दक्षिणी राजपूतोसे और सिख जवाहरसिहसे मिल गये। इस प्रकार एक न एक युद्ध होता रहता था और देश बरबाद होता जा रहा था।

१७६८ मे किसीने अकबराबाद (आगरा) मे जवाहरसिहको कत्ल कर दिया और उसका भाई राव रतनसिह गद्दी पर बैठा किन्तु वह व्यभिचारी, मद्यप एव अत्याचारी था और किसीके द्वारा मार दिया गया। १७७० (३१ अक्तूबर) मे नजीबुद्दौला भी मर गया।

ऊपर लिखा जा चुका है कि शाह आलमका निर्वासन १२ वर्षमे समाप्त हुआ। १७७२ मे उसने दिल्लीमे प्रवेश किया। किन्तु सिंहासन मे वास्तविक शक्ति न रह गयी थी। न खजाना था, न कोई निष्ठावान साथी था। देशकी हालत यह कि कही मराठे उठते है, कही जाट लूटते है, कही अफगान अत्याचार कर रहे है, उधर अँग्रेज धीरे-धीरे एक ओर बिहार और दूसरी ओर मद्रासकी तरफ बढते चले जा रहे है।

१७७४ के आस-पास शुजाउद्दौलाकी तूती बोल रही थी। अँग्रेज भी उसके सहायक थे। वारेन हेस्टिंग्जकी सहायतासे उसने रुहेलो पर हमला कर दिया। रुहेला रहमतखाँ बडी बहादुरीसे लड़ा पर युद्धभूमिमे मारा गया।

यहाँसे लखनऊ लौटते ही शुजा बीमार हो गया और अच्छीसे अच्छी चिकित्सा भी उसे बचा न सकी। १७७५ मे उसकी मृत्यु हो गयी और आसफउद्दौला अवधकी गद्दीपर बैठा। इन्हीके निमन्त्रणपर मीर लखनऊ आकर रहे थे।

देशकी दशा इतनी अस्थिर थी कि कल क्या होगा और कौन किसके साथ होगा, कोई नही कह सकता था। पर इतना निश्चित था कि दिल्ली शक्तिहीन, बेबस थी और कोई न कोई उसपर हावी रहता था। सबसे ज्यादा भय उसपर मराठोका था। बीच-बीच मे वे भगा दिये जाते थे या चले जाते थे पर फिर आ जाते थे। इधर उनका ज़ोर फिर बढा। दिल्ली और बादशाहपर उनका प्रभुत्व-सा था। वे जहाँ चाहते बादशाहको ले जाते, जिस रूपमे चाहते उसका उपयोग करते।

उधर जाब्ताखाँके पुत्र रुहेला गुलाम कादिरका जोर सहारनपुरकी तरफ बढ रहा था। उसने सिखोकी सेनासे मिलकर दोआबेके बहुतेरे शाही क्षेत्रोपर कब्जा कर लिया। धीरे-धीरे वह इतना प्रचण्ड हो गया कि बादशाहसे भी माँगे करने लगा पर बादशाहने स्वीकार न किया। तब वह लडनेपर आमादा हो गया। एक मास तक छिट-पुट लडाई होती रही। फिर वह आगरेकी ओर चला गया। वहाँ मिर्जा इस्माइल बेग किलेमे घिरा हुआ था। दोनोके बीच मित्रताके वादे हुए। दोनो मिल गये और मराठोसे मिलनेका निश्चय किया पर अवसर आया तो सारा बोझ मिर्जा इस्माइल पर पड़ा। वह बड़ी बहादुरीसे लड़ा और मराठोको भगा दिया पर वे नई सेना लेकर फिर आ गये जिसमे मिर्जाकी गहरी पराजय हुई। गुलाम कादिर तमाशा देखता रहा। इससे मिर्जा निराश होकर अपने क्षेत्रमे लौट गया।

गुलाम क़ादिर के अकल्पनीय अत्याचार

गुलाम कादिर बादशाहके नाजिर मजूरअलीखाँके साथ मिलकर बादशाह पर अपना प्रभुत्व जमानेके षड्यन्त्र करने लगा। इसमे उसकी

दादी ऊधमबाई और साहिबा महल भी शामिल थीं। वह किलेमे पहुँचा और मिर्जा बेदारबख्तका हाथ पकडकर तख्तपर बैठा दिया। अब धीरे-धीरे उसने सारे क़िले और महलपर वह अधिकार जमाया कि बादशाह कैदी हो गया। गुलाम क़ादिरके भयकर अत्यांचारसे इतिहास लज्जित होता है। उसने शाहआलम एव उसके बेटोंपर अत्याचार करना आरम्भ किया। शरीरके कपडे तक उतार लिये; छोटे-छोटे बच्चों तकको खाने-पीनेसे वचित कर दिया। शाह आलम कहता—यदि अपराध किया है तो मैंने किया है; इन बच्चोका क्या अपराध है। पर गुलाम क़ादिर जरा भी ध्यान न देता; वह आदमी नही शैतान था। दो दिन-रात भूख-प्याससे तड़पकर बच्चे मर गये तब राजा मनबहार सिहने बड़ी खुशामद करके अट्ठाईस रोटियाँ और दो बहँगी पानी भेज दिया। बादशाहके सैकड़ों स्वजन थे इसलिए एक टुकड़ा रोटी और चार बूंद पानीका औसत भी नही पड़ा। मिर्जा मेढूने गुलामक़ादिरसे छिपाकर चौदह रोटियाँ और एक घड़ा पानी शाह आलमके पास भेजा। किसी तरह पता लग गया। आदमी बन्दी करके गुलाम क़ादिरके सामने लाया गया और उसे कुत्तोके सामने डाल दिया गया।

कादिरने महलोकी तलाशी ली। मिर्जा अकबरशाहके मकानमे चार हजार अशर्फ़ियाँ, चौदह हजार रुपये, एक मन सोनेके बर्तन, चार मन चाँदीके बर्तन, पैंतीस मन ताँबेके बर्तन, दस तख्ता दुशाले और पन्द्रह गठरियाँ किखाब की बरामद हुई। इसी प्रकार सबके यहाँसे कुछ न कुछ प्राप्त हुआ। उसने नवाब ताजमहल, नवाब शाहाबादी, मुबारक महल तथा रानी जयपुरका माल जब्त किया। नवाब शाहाबादीके मकानसे दो सन्दूक मुहरें, दस हजार अशर्फियाँ, चालीस हजार रुपये, एक छोटा सन्दूक जवाहरात, सोनेका एक, चाँदीके पाँच मन बर्तन, एक सन्दूक स्वर्णाभूषण तथा अन्य सामान बरामद हुए। बेलदारोने रानी जयपुरीके मकानकी एक-एक दीवारको तोडा तो दो हजार अशर्फियाँ और तीस हजार रुपये निकले। बेदारबख्तने सरफराज तथा तमकीन नामक खाजासरोको आदेश

दिया कि शाहआलमके महलोकी परिचारिकाओको लकडीसे वाँधकर कोडोसे मारा जाय। हर महलसे रोने-पीटनेकी आवाज आने लगी। जो कुछ उनसे मिला, ले लिया और उनको नगे सिर निकाल दिया। उसके वाद अपने वापकी छोकरियोको माल-असवावंका पता वतानेके लिए मारा-पीटा, उन्होने दो स्थान वताये। वहाँसे दो सन्दूक चाँदीके वर्तनो और जवाहरातके वरामद हुए।

चद दिन वाद गुलाम कादिर रगमहलमे गया और एक-एकको वुलाकर कहा कि रुपया लाओ नही तो तुम्हारे साथ भी यही वर्ताव होगा। उन्होने रोते-रोते जवाव दिया कि हमे रोटियोके लाले पड़ रहे है, हमारे पास रुपया कहाँ जो दे ? शाह आलमसे कहा कि नकदी वताओ वर्ना अकवर शाहको उलटा लटकाकर कोडे मारूँगा और गधीपर चढाकर शहर मे फिराऊँगा। शाह आलमने जवाव दिया कि जो कुछ है वह इन्ही मकानोमे है, मेरे पेटमे नही है। कादिरने जवाव दिया कि मकान की तलाशीके बाद तुम्हारे पेटकी भी तलाशी ली जायगी। वह हुक्का पीता जाता था और धुवाँ वादशाहकी तरफ छोडता जाता था। दो दिन वादशाह आलमकी वहिन करामतउन्निसा बेगमको उलटा लटकाकर तेल गरम उसपर डाला और कोडे मारकर असवावका पता पूछा। उसने चद गड़े खजानोका पता वताया। वहाँसे लाखो रुपयेका माल वरामद हुआ।

मोतीमहलमे शाह आलमको, शहजादो सहित, गर्म ईटोपर खड़ा किया और मिर्जा अकवर शाह और सुलेमान शिकोहको लकड़ीसे वाँधकर मारनेका हुक्म दिया। शाह आलम शुष्क ओठो एव आर्द्र नयनोसे धूपमें वैठा देखता और फरियाद करता था। गुलाम क़ादिरने हुक्म दिया कि इसे जमीन पर गिराकर इसकी आँखोमे सलाई भोक दी। लोग चिमट गये और वेचारेको ज़मीन पर गिराकर उनकी आँखोमे सलाइयाँ फेर दी ! वह जमीन पर तड़पने लगा। फिर उसे लकडियाँ मारकर विठा दिया। गुलाम कादिरने व्यग तथा उपहासपूर्वक पूछा कि क्या कुछ नजर आता

है ? शाह आलमने जवाब दिया कि उस कुरानके सिवा जो हमारे-तुम्हारे दरमियान था कुछ नजर नही आता। गुलाम कादिरने उठकर एक लात सीने पर मारी। वह चित गिर पड़ा। कादिर छाती पर चढ़ बैठा। कंदहारी खॉने शाह आलमके हाथ पकड लिये और दूसरोंने पाँव पकड़े। क़ादिरने छूरेसे एक ऑख और कंदहारी खॉने दूसरी ऑख निकाल ली। शाहआलम घायल पक्षीकी तरह तडपता था। कादिरने चित्रकारको बुलाकर हुक्म दिया कि तस्वीर इसी रूपमे कि मै शाह आलमके सीनेपर बैठा हुआ, छुरी हाथमे लिये ऑखे निकालता हूँ, खीच दे। आदमी नियुक्त कर दिये कि इसको और इसके बच्चोको न पानी दिया जाय, न खाना। रोने पीटनेकी आवाज सुनकर पूछा कि यह क्या गुल है ? लोगोने उत्तर दिया कि शाह आलम की दशापर स्त्रियॉ रोती है। हुक्म दिया कि जो भी रोयेगा वह, शाह आलमकी तरह, अन्धा कर दिया जायगा।

एक दिन एक ख़ाजासराने आकर सूचना दी कि शाह आलमकी दशवर्षीया लड़की भूक-प्याससे मर गयी। कादिरने हुक्म दिया कि जहॉ पड़ी है वही उन्ही कपडोमे दफन कर दो। एक दिन बेदारबख्तने कहला भेजा कि मोहम्मदशाहकी पटरानी मर गयी है उसके दफनकी क्या व्यवस्था हो ? कादिरने वहुत गालियॉ देकर कहा कि वही पड़ी रहने दो। जब लाश सड़ने लगी तो लोगोकी अनुनय पर तीसरे दिन दफनका हुक्म मिला।

माधवजी सिंधियाने जब ये दर्दनाक किस्से सुने तो मराठी सेना भेजी, गुलाम कादिरको घोर दण्ड देकर १७८८ मे मार डाला और शाह आलम द्वितीयको पुनः तख्त पर बैठाया तथा उसके व्ययके लिए नौलाख रुपये वार्षिक नियत कर दिये।

भारतीय इतिहासके ऐसे अस्थिर युगमे 'मीर' हुए थे और उन्होने इन व्यथाकारी घटनाओं तथा विस्मयकारी परिवर्तनोको स्वय देखा था। उन्होने अपनी जीवन-कथामे इनका विस्तृत वर्णन किया है। इन घटनाओने उनके प्रेमल एव भावुक मनपर गहरा असर डाला। ये अनुभूतियॉ ही

उनकी गजलोमे उतर आई है और उन्हे गहरी वेदनासे पूर्ण कर दिया है। डा० फारूकीने ठीक ही लिखा है कि "उन्होंने शेर नही कहे, दिल और दिल्लीके मर्सिये लिखे है।....जिस तरह 'शराब खिचकर तलवार' हो जाती है उसी तरह मीरका तारीखी माहौल उनकी गजलोमे ढल गया है।" जब उत्तर भारत और देहली राजनीतिक आँधियोमे अस्थिर थे तब मीर चट्टानकी तरह स्थिर रहे और तेजीसे बदलते जमानेके चित्र अपने दिल और उस दिलका अक्स अपनी गजलोमे उतारते रहे। वह भुक्तभोगी थे। उन्होंने धैर्यपूर्वक जमानेकी कठिनाइयो तथा प्रेमकी मुसीबतोको भोगा, सिर ऊपर किये इसीलिए 'उनमे जीवनका वह सौष्ठव है जो जीवन भर निराशाओ और असफलताओके उपयोगसे उत्पन्न होता है।' उनके दर्दमे निजी प्रेम-वेदना तथा युग-वेदनाका ऐसा अनोखा सम्मिलन है जो उर्दू काव्यमे अन्यत्र नही मिलता। उनकी वेदना केवल आत्मरोदन नही, वह एक सभ्यता, एक विशेष सामाजिक परम्पराकी असफलताका रोदन है। उनके रोदनमे उनके ही आँसू नही, समष्टिकी वेदनाके आँसू है। उनमे वह वेदना है, वह जलन है, वह तड़प है जिसके बिना मानव-जीवन मानव-जीवन नही, एक रेगिस्तान है। फिर तेजीसे बदलते हुए युगकी उथल-पुथलने उनके दु:खमे एक अजीब स्थिरता, एक सयम, एक आत्म-नियत्रण, एक अपनी जिम्मेदारीकी भावना पैदा कर दी है। उनके काव्यमे उनके युगकी चीख़ है, उसकी आशा-निराशाएँ है, यहाँ हम इतिहासके एक भग्न होते युग-स्तूपके दर्शन करते है; उसका रोदन सुनते है—ऐसा रोदन जिसमे कलेजा बोलता है; जिसमे हाड-मास बोलता है, जिसमे खूनकी गर्मी है, जिसमे जीवनकी उठान और मृत्युकी अनुभूति है; जिसमे इन्सानियतकी पुकार और युगके सस्कार है। शब्दके झरोखोमे युगकी व्यथासे प्रभावित प्रेममे डूबे एक सच्चे मानवके हृदयकी शत-शत भगिमाएँ झाँकती है।

मीरके काव्यकी विशेषता

काव्य-समीक्षा भाग

मीर-काव्यकी मानसिक पृष्ठभूमि

मै कही सकेत रूपमे लिख चुका हूँ कि मीरकी वेदनामे समष्टिकी सवेदनाएँ झाँक-झाँक उठती है। उनमे अपना दर्द भी है और जमानेका दर्द भी है। उनमे जिन्दगी है पर बन्दगीके आलिगनमे बँधी हुई; उनमे इश्क है पर साधना की गोदमे सोता हुआ; उनमे मस्ती है पर दुनियाके दुखोपर सौ-सौ आँसू बहानेवाली; उनमे कल्पना है जो आसमानको जमीनसे बाँधे हुए है; उनमे पागलपन है जो अपनेको ठहर-ठहरकर दिलके आईनेमे देख लेता है। एक विरह जिसमे मिलनकी बेहोशी है। मीर अनेक व्यक्तित्वोका व्यक्ति है। उसमे एक साथ कई-कई मानसिक भूमिकाएँ दिखाई पड जाती है।

उनमें समष्टिकी संवेदनाएँ झाँकती हैं !

मीर-काव्यकी मानसिक पृष्ठभूमिपर जो रेखाएँ गहरी है उनमे सबसे पहली रेखा है प्रेमकी। यह प्रेम, दिलमे उमडता प्रेम, अपने दिमाग और इर्द-गिर्दके वातावरणपर छा जानेवाला प्रेम, प्रेम जिसके बिना जीवन जीवन नही, उनमे पिता और चचासे आया; यजीद वगैरा दरवेशों ने उसे जलाकर रोशन किया, पर तबतक वह दूरागत था, रहस्यमय था, व्यापक था, अनुभूत था। बादमे यौवनके वशी रवने उसमे एक तस्वीर पैदा की; एक अबोला यौवन अपनी आँखोसे बोला, और एक दिलमे पूजा-की घण्टियाँ बजी। पर देवताको पुजारीके सामनेसे हटा लिया गया। मतलब दुनियाने उस विधुवदनीको इनसे अलग कर दिया जो इनके समस्त मानसिक वातावरणपर यो छाती जा रही थी जैसे चाँदका जादू देखते-देखते अँधेरी दुनिया पर छा जाता है।

अबोला यौवन जब बोल उठा

इस विरहमे वह रोये, पागल हुए पर वह रोना अमृत हो गया। क्योकि विरहकी करुणाने इन्हे इस प्रकार आलिगन किया कि जन्म भर न छोडा। इसी सवेदनाके कारण इनका काव्य उच्च भावभूमिपर प्रतिष्ठित हो सका। भवभूतिने जब 'करुण रस ही एक रस है', कहा था तो एक ऐसे सत्यकी अवतारणा की थी जो मानव-हृदयकी चेतनाओ और प्रेरणाओके द्वारा अनन्तकालसे पुष्ट होता आया है।

फिर बचपनमे बेघर-बार, विना माँ-बाप, अनाथ, दिल उजड़ा, चतुर्दिक्‌की बस्तियाँ उजड़ी, जिस दिल्लीमे आये रहने वह सनातन विधवा—

सनातन विधवा-सी दिल्लीकी तड़प

जिसकी माँगमे सिन्दूर वार-वार पड़ता और वार-बार पुँछता था, जो वार-वार प्रताड़ित, प्रवचित, पददलित की जाती थी पर जिसे मरने नही दिया जाता था,—एक बेवसी, एक सुनसानका आलम; हर तरफ भय, त्रास, निराशा। कोई किसीका नही। मजिल दूर; राह अँधेरी, दीपक कोई नही, उस दीपकके सिवा जो दिलमे जल रहा था। इस प्रकार एक निराशा और वेदना इनमे यो भर गयी जिसका जीवनभर अन्त नही हुआ। इन्होने देखा कि कल जिनकी पूजा होती थी, जिनकी पगधूलि लोग आँखोमे अजनकी भाँति लगाते थे, वे वेघर-बार, दाने-दानेको मोहताज है, जिन राजकुमारो पर सिहासन निछावर हो वे भूखसे सूखी रोटियोके लिए तडपते है। अपने और दूसरोके जीवनमे कालचक्रके इस परिवर्तनने उन्हे अन्त.स्थ कर दिया। भौतिक ऐश्वर्यकी असारता उनके दिलमे पैठ गयी। यह उनकी मानसिक पृष्ठभूमिकी दूसरी गहरी रेखा है।

मीर एक शरीफ, साधुमना, उच्च भावभूमि पर रहने वाले प्रेममार्गी

काव्यके लिए शिष्ट मनोभूमिका अनिवार्य है

सतके पुत्र थे। अच्छे ख़ान्दानके थे, एक आनुवशिक विरासत उन्हे मिली थी। उन्हे ऊँची दृष्टि मिली थी; उच्च सभ्यताके सस्कार प्राप्त हुए थे। इसलिए जीवनमे शिष्टाचारसे,

ऊँचाइयोंसे वह कभी न गिरे। तुच्छताकी भावनाको वह इन्सानका सबसे बड़ा दुर्गुण समझते रहे। उनके विचारमे काव्यके लिए शिष्ट जीवनकी भूमिका आवश्यक है। पहले आदमी बनो, शिष्टताकी ऊँचाइयों पर चढो, तब कविता करनेकी चेष्टा करो—कुछ इस प्रकारकी शिक्षा उनकी थी। उनके काव्यमे इस शिष्ट मानसिक भूमिकाके दर्शन होते है। यह उस तस्वीरकी तीसरी गहरी रेखा है।

चौथी बात यह कि गहरी एव अनुभूत प्रेम-वेदनाके कारण इनका काव्य उस आगके ऊपर एक पर्दा बनकर रह गया है जो इनमे जलती थी।

प्यास है पर गिरावट नहीं

इसलिए उसमे एक हलकी रहस्यात्मक चाँदनी सी है। एक ओर कयामतका-सा शोर, गहरा उत्ताप, बेचैनी है, दूसरी ओर उसपर नियन्त्रण का, बन्धनका, अनुशासनका स्वर है। प्यास है पर गिरावट नही है, नीद है पर मूर्च्छा नही है; असफलताका दंश है पर जीवनकी प्रेरणामे लिपटा हुआ।

सब मिलाकर वह आत्मानुभूति और भावनाके कवि है। उनका काव्य अनुभूतियोकी आर्द्रताका काव्य है। वह गहरे मनोमंथनका काव्य है।

इन रेखाओकी हम जरा विस्तारसे चर्चा करेगे क्योकि उनके बिना मीरकी उस मानसिक पृष्ठभूमिको ग्रहण करना कठिन है जिसपर उनका समस्त काव्य खड़ा है।

जैसा मैने कहा है, पहली और मूलभूत भावना-रेखा, जिसपर जीवन एव काव्यका समस्त आधार है, प्रेमकी, इश्ककी है। इनके पिता जब-तब

इश्क़की व्याप्ति

इनसे कहा करते थे—"बेटा! इश्क इख्तियार करो कि इश्क ही इस कारखाना पर मुसल्लत[1] है, अगर इश्क न होता तो यह तमाम निजाम[2] दरहम-बरहम[3] हो जाता। बेइश्ककी जिन्दगानी बवाल है और इश्कमे

१. आच्छादित। २. व्यवस्था। ३. छिन्न-भिन्न।

दिल खोना अस्लेकमाल है। इश्क ही बनाता है और इश्क ही विगाडता है।" कभी कहते—"आलम[1] मे जो कुछ है, इश्कका जहूर[2] है। आग सोजे[3] इश्क है, पानी रफ्तारे[4]-इश्क है, खाक[5] करारे[6]-इश्क है, हवा इजतरारे[7]-इश्क है, मौत इश्ककी मस्ती है, हयात[8] इश्ककी होशयारी है, रात इश्कका ख्वाब[9] है, दिन इश्ककी बेदारी[10] है।.......यहाँ तक कि आसमानोकी हरकत हरकते-इश्की[11] है।"

मीरने इसे गाँठ बाँध लिया था। यह शिक्षा उनके अन्तरमे प्रविष्ट हो गयी थी और समय पाकर पुष्ट होती गयी। प्रेमकी व्यापकताके वर्णनसे उनका काव्य भरा हुआ है और पिताकी उस वातकी छाप जगह-जगह दिखाई पडती है। देखिए:—

इश्क़ ही इश्क़ है जहाँ देखो,
सारे आलममें भर रहा है इश्क़।
इश्क़ माशूक़[12] इश्क़ आशिक़[13] है,
यानी अपना ही मुब्तला[14] है इश्क़।
कौन मक़सद[15] को इश्क़ बिन पहुँचा,
आर्ज़ू[16] इश्क़, मुद्दआ[17] है इश्क़।

"जहाँ देखो प्रेम ही प्रेम है। यह प्रेम सारे जगत्मे भर रहा है। वही प्रेमी है और वही प्रियतम है अर्थात् वह स्वय पर ही आसक्त है। विना प्रेमके लक्ष्य तक कौन पहुँच पाया है। प्रेम ही अभिलाषा है और प्रेम ही उद्देश्य है।"

---

१ जगत्। २ अभिव्यक्ति। ३. जलन। ४ गति। ५. मिट्टी। ६ स्थिरता। ७. व्याकुलता, आतुरता। ८ जीवन। ९. स्वप्न। १० जागरण। ११. प्रेमका चक्कर। १२ प्रियतम। १३. प्रेमी। १४. आसक्त। १५ प्रयोजन। १६ अभिलापा। १७. अभिप्राय।

आगे फिर कहते हैः—

दर्द ही ख़ुद है ख़ुद दवा है इश्क़,
शेख़ क्या जाने तू कि क्या है इश्क़।
तू न होवे तो नज़्म कुल उठ जाय,
सच्चे है शायरां ख़ुदा है इश्क़ ।

"प्रेम ही वेदना है और प्रेम ही उस वेदनाकी दवा भी है। ऐ उपदेशक ! तू क्या जाने कि प्रेम क्या है ? प्रेम न हो तो सारी व्यवस्था ही समाप्त हो जाय, कवियोंका कथन ठीक है कि प्रेम ही ईश्वर है ।"

अन्दर-बाहर ऊपर-नीचे प्रेम ही प्रेम दिखाई देता हैः—

ज़ाहिर[१] बातिन[२] अव्वल-आखिर[३], पाईं बाला[४] इश्क़ है सब,
नूरोज़ुल्मत[५], मानी व सूरत[६] सब कुछ आप हुआ है इश्क़ ।

आकाशके घूमनेके बारेमे भी पिताकी बात भूल नही पाये हैंः—

मक़सूद[७] गुम किया है तब ऐसा है इज़्तिराब[८]
चक्करमें वर्ना काहेको यूँ आसमाँ रहे ।

प्रियतमको छिपा दिया है, लक्ष्य ओझल कर दिया गया है तभी इतनी बेचैनी है नहीं तो आसमाँ यूँ चक्कर क्यों करता ?

---

१. प्रकट, बाह्य । २. आन्तरिक । ३. आदि-अन्त । ४. नीचे-ऊपर । ५. आकाश-अन्धकार । ६. रूप और अर्थ । ७. लक्ष्य, इष्ट । ८. व्याकुलता ।

बचपनमे जो छाप पड़ी, वह बराबर बनी रही। यौवनमे जब आकाश का वह प्रेम जमीनके चाँदपर उतरा तब भी मानवीय प्रेममे भी वही ऊँचाई, वही व्यापकता बनी रही। हाँ, इस निजी प्रेमानुभूतिने उसे चिन्मय कर दिया। पहले जो ख्याल दिमागमे थे वे दिलमे उतर आये, वे अपने हो गये। दर्द आया, जलन आई, अभिलापाओने करवट ली, प्यास उमड़ी, बेचैनी बढ़ी। 'मसनवी-ख़ाबोख़याल' काल्पनिक नही है; वह दिलकी पुकार है; यह उस वेदनाका चित्रण है जो पूजाकी देवीसे दूर कर दिये जानेपर इन्हे हुआ था। उससे भगते थे पर वह मूर्ति इनके दिलमे घर कर गयी थी, जागते-सोते, उठते-बैठते वही विधुवदन दिखाई पड़ता था। देखिए.—

आकाशका प्रेम ज़मीनके चाँद पर

चला अकबराबादसे जिस घड़ी,
दरोबाम[1] पर चश्मेहसरत[2] पड़ी ॥
कि तर्केवतन[3] पहले क्योंकर करूँ।
मगर हर क़दम दिलको पत्थर करूँ ॥

× ×

जिगर जौरे गर्दू[4] से खूँ हो गया।
मुझे रुकते-रुकते जुनूँ[5] हो गया ॥

× ×

वही जल्वा हर आनके साथ था।
तसव्वुर[6] मेरी जानके साथ था ॥

---

१. द्वार और छत। २. लालसापूर्ण नयन। ३. घरका त्याग। ४. आकाशके उत्पीड़न। ५. उन्माद। ६. प्रणिधान।

उसे देखूँ जिधर करूँ मैं निगह।
वही एक सूरत हज़ारों जगह॥
गुले ताज़ा[1] शर्मिन्दा उस रू[2] से हो।
खिजल[3] मुश्केनाब[4] उसके गेसू[5] से हो॥
सरापा[6] में जिस जा नज़र कीजिये।
वहीं उम्र अपनी बसर कीजिये॥

यह जुनून भी पिता-प्रदत्त इश्ककी बुनियाद पर ही खड़ा है। पिता, चचा और दरवेशोंकी शिक्षाने ही इस प्रेमको धर्मोन्माद पर, साम्प्रदायिक क्षुद्रताओंके ऊपर प्रतिष्ठित किया। उन्होंने, विशेषतः बायजीदने, देरोहरमसे ऊपर उठकर प्रेम-धर्म, हृदय-धर्म निभाने पर ज़ोर दिया था;

धार्मिक क्षुद्रताओं से परे

बायजीदने कहा था—"दिलहार कि दिलशिकनी कसे न कनी व संग-सितम बरशीशए न ज़नी। दिल रा कि अर्श मी गोयंद अज़ीं राह अस्त कि मंजिल खास आँ माह अस्त।" मीर कहते है:—

देरो-हरमसे गुज़रे अब दिल है घर हमारा।
है ख़त्म इस आबलेपर सैरो-सफ़र हमारा॥

सइए तोफ़ेहरम[7] न की हर्गिज़,
आसताँ[8] पर तेरे मुक़ाम किया।
तेरे कूचेके रहनेवालोंने,
यहींसे काबाको सलाम किया।

---

१. ताजा, नवीन, गुलाव। २. मुख। ३. लज्जित। ४. कस्तूरी-गध। ५. बाल। ६. नखशिख। ७. काबाकी ओर जानेका प्रयास। ८. स्थान, आश्रम।

इश्के ख़ूबाँको मीर मैं अपना,
क़िबला व काबा व इमाम किया।

इस प्रकार प्रेम ही उनकी पूजा, प्रेम ही उनका किबला व काबा है। मध्ययुगीन प्रेममार्गी सतोकी भाँति इनका उपासना-पथ भी प्रेमका पथ है। साफ कहा है—

मत रंज कर किसूका कि अपना तो एतक़ाद[1],
दिल ढायकर गो काबा बनाया तो क्या हुआ?

दिलको ढहाकर, मिटाकर काबा ही बना लिया तो क्या फ़ायदा?

इस प्रेमने ही इनमे मस्तीका एक आलम पैदा किया है, एक बेखुदी दी है। कभी ऐसी जगह पहुँच जाते है जहाँ अपनेको भूल जाते है; खुद ही अपनी प्रतीक्षा करते है; एक अजीब बेचैनीसे भर जाते है; कभी होशमे आते है तो कहते है, हम और ही आलममे थे। ऐसे समय किसीसे मिलना भी अच्छा नही लगता क्योकि पुजारी देवताके सानिध्यमे होता है; जगत् आँखोसे हट जाता है। कुछ शेरोमे मीरकी मस्तीकी यह छवि है :—

मिलनेवालो! फिर मिलिएगा हम है आलमे-दीगर[2] में,
मीर फ़क़ीरको सब्र है यानी मस्तीका आलम है अब।

× ×

बेखुदीमें न मीरके जाओ,
तुमने देखा है और आलममें।

× ×

१. विश्वास। २. दूसरी दुनिया।

बेख़ुदी ले गयी कहाँ हमको,
देरसे इन्तज़ार है अपना।

× ×

रहे हम आलमे मस्तीमें अक्सर,
रहा कुछ और ही आलम[1] हमारा।

जब ऐसी मस्तीका आलम होता है तब आनन्दका केन्द्र व्यक्ति स्वयं हो जाता है, फिर दूसरेकी नाज़बरदारीकी तमन्ना नही, शक्ति नही.—

गुलने बहुत कहा कि चमनसे न जाइए,
गुलगश्तको जो आइए, आँखों पै आइए।
मैं बेदिमाग़ करके तग़ाफुल[2] चला गया,
वह दिल कहाँ कि नाज़ किसूके उठाइए।

मस्तीका आलम जब होता था तब अपनेमे ऐसे डूबते थे कि कौन आया कौन गया इसकी ख़बर भी न होती थी। उस्ताद जौक एक अवस्था-

'ज़ौक' की आप बीती

प्राप्त व्यक्ति से कहते थे कि "एक दिन मीर साहबके पास मै गया। जाडेके अन्तिम दिन थे, वसन्तागमका जमाना। देखा कि वह टहल रहे है; उदास है और रह-रहकर यह मिसरा पढते है·—

"अबके दिन भी बहारके यों ही गुज़र गये।"

मै सलाम करके बैठ गया, थोड़ी देर बाद उठा और सलाम करके चला आया। मीर साहबको ख़बर भी न हुई, वह जिस ध्यानमे पहले निमग्न थे, उसीमे निमग्न रहे। उनकी भाव-भगीसे विदग्धता और वेदना फूटी पड़ती थी।"*

---

१. हाल। २. उपेक्षा।

* आबे हयात : मोहम्मद हुसेन 'आज़ाद'।

कभी ऐसा होता था कि महीनों बीत गये, अपनेमे ऐसे डूबते कि इर्द-गिर्द क्या है, क्या हो रहा है, इसकी भी कुछ खबर न लगती थी। एक

यह संलग्नता !

कथा है कि मीर साहबको बहुत कष्टमे देखकर लखनऊके एक नवाव इन्हे बाल-बच्चोके साथ अपने घर ले गये और महलका एक भाग रहनेके लिए दे दिया। वैठकमे एक तरफकी खिडकियाँ बन्द थी; उनके सामने ही एक सुरम्य उद्यान था। नवाबने वह हिस्सा इसलिए दिया था कि बागसे इनका दिल वहले, मनोरजन हो पर अर्सा बीत गया, खिड़कियाँ वैसे ही बन्द पडी रही। मीर साहवने कभी खोलकर बाटिकाकी ओर नही देखा। एक दिन उनके एक मित्र उनसे मिलने आये। उन्होने कहा कि "इधर बाग है, खिडकियाँ खोलकर क्यो नही बैठते ?" मीर साहब आश्चर्यान्वित होकर बोले—"इधर बाग भी है ?" उन्होने कहा—"इसीलिए नवाब साहव यहाँ लाये है कि जी बहलता रहे और मन प्रसन्न हो।" मीर साहबके फटे-पुराने मस्विदे गजलोके पडे थे, उनकी ओर सकेत करके कहा—"मै तो इस बागमे ऐसा लगा हूँ कि दूसरे बागकी मुझे खबर नही।"

क्या सलग्नता है ! बरसो बीत जायँ, सामने बाटिका हो किन्तु खिडकी तक न खुले !

× × ×

यौवनकालमे तो प्रेमकी अग्नि इनमे ऐसी प्रज्वलित हुई कि उसीमे जलते थे और मजे लेते थे। आँखोमे आँसू, बाल विखरे, आत्मविस्मृत, खोये-खोयेसे, घुलकर पीले पड रहे। ये चित्र भी इनके काव्यमे प्रायः मिल जाते है:—

क्या मीर है यही जो तेरे दर[1] पे था खड़ा
नमनाक चश्मो[2] खुश्क लब[3] व रंग ज़र्द[4] सा ?

---

१ द्वार। २ भीगी आँखे। ३. सूखे ओठ। ४. पीला रग।

या:—

हमेशा चश्म है नमनाक हाथ दिलपर है
ख़ुदा किसूको न हम-सा भी दर्दमन्द करे।

और यह नाजुकमिजाजी भी साथ लगी है:—

नाज़ुकमिज़ाज आप क़यामत हैं मीरजी,
जूँ शीशा मेरे मुँह न लगो मैं नशेमें हूँ।

× ×

इनका काव्य इनकी गहरी वेदनाकी अभिव्यक्ति मात्र है। वह काव्य क्या है, एक परदा है, जिसके पीछे सिसकते दिलकी आवाज है, जिसके पीछे आरज़ूओं और तमन्नाओंकी दुनिया है। खुद कहते हैं:—

किया था शेरको परदा सुख़नका
वही आख़िरको ठहरा फ़न हमारा।

× ×

इस परदेमें ग़मे दिल कहता है मीर अपना,
क्या शेरो-शायरी है यारो शुआरे आशिक़।

× ×

कब और ग़ज़ल कहता मैं इस ज़मींमें लेकिन,
परदेमें मुझे अपना अहवाल सुनाना था।

'परदेमें मुझे अपना अहवाल सुनाना था'—इसी बातको एक दूसरी जगह खुद ही हैरत करते हुए हजरत फर्माते हैं:—

एक आफ़ते ज़माँ है यह 'मीर' इश्क़पेशा,
परदेमें सारे मतलब अपने अदा करे है।

'मीर' जैसे लोगोके सामने स्फूर्तिके कोई साधन न रह गये थे; सब तरफ निराशाकी अवस्था थी; कोई ऐसी चीज न थी कि जीवनकी थकी रुदनशील शक्तियाँ उसका सहारा लेती। बस यही प्रेमकी वेदना थी जो उन्हे किसी तरह जिलाये हुए थी। जीवन कभी बेहोश होता, कभी बेहोशीमे ही आँखे खोल देता, दो शब्द रोगीके मुँहसे निकलते—पर प्रेम अपनी थपकियोसे उसे पोषण देता रहता।

प्रेमकी वेदना ही उनका संबल है

और यह प्रेम उच्च भूमिकाओ पर उठाने वाला प्रेम था। इसमे भोग उतना न था जितनी आराधना थी; आराधना जो मानवको उठाकर देवत्वके शीर्ष स्थानपर रख देती है। कहते है:—

परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सबोंकी ख़ुदा कर चले।

ऐ बुत, ऐ मूर्ति, तेरी इतनी उपासना की है कि सबकी नजरमे तुझे खुदा बना दिया है।

यह कल्पना नही, जीवनका सत्य है। मानव-प्रेमसे भी साधक सर्वोच्च ईश्वरीय प्रेम तक पहुँच सकता है। यदि इसका तात्त्विक विवेचन करे तो ज्ञात होगा कि दो व्यक्तियोमे जब जीव-साम्यके कारण आकर्षण होता है तब प्रेमोदय होता है। प्रेमारम्भमे प्रेमी एव प्रियतम दोनोको इस प्रेरणाका विशेष ज्ञान नही होता; पर भीतर ही भीतर एक आग सुलग उठती है। फिर एक अवस्था आती है जिसे पूर्वानुराग कहते है। धीरे-धीरे चित्तमे विदग्धता आने लगती है। किसीको देखनेकी, किसीकी बात सुननेकी इच्छा लगी रहती है। दिल बेचैन सा रहता है। छाती जलती है पर पता नही चलता कि यह क्या है? 'मीर' भी इस आगके शिकार है:—

साधना एवं सिद्धि

छाती जला करे है सोज़े दरूँ[1] बलासे
एक आग-सी लगी है, क्या जानिए कि क्या है ?

यह प्रेमका पूर्वाभास है। इसके लक्षणोंकी झलक 'मीर' के इस शेर मे भी है :—

हम तौरे इश्क़[2] से तो वाक़िफ़[3] नहीं हैं, लेकिन,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है।

एक दूसरे कवि 'शेफ्ता' ने भी कहा है :—

शायद इसीका नाम मुहब्बत है शेफ़्ता,
इक आग-सी है दिलमें हमारे लगी हुई।

पूर्वावस्थामे यही होता है। उस समय कोई 'सीनेमे दिलको मला करता है।' फिर प्रेम अधिकाधिक गम्भीर होता जाता है, यहाँ तक कि वह पूर्ण प्रणयमे परिवर्तित हो जाता है। इसके बाद प्रेमी प्रियतमके ध्यानमे इतनी तल्लीनता प्राप्त करता है कि आँख खोलनेपर इधर-उधर चारो ओर वह मिनटो तक उसकी छबि देखता है। यही अवस्था प्रेम-मार्गकी सच्ची सीढी है।

उपर्युक्त अवस्था जिस समय और भी विकसित होती है, उस समय मिनटोकी जगह घटो तक सब वस्तुएँ अपने प्यारेके रूपमे दीख पड़ने लगती है, किन्तु अभी तक उसकी इच्छा विशेष रूपसे प्रियतमको देखनेकी होती है। बहुत कुछ इसी भावनाकी झलक 'मीर' के इन शेरों मे है :—

---

१. आन्तरिक जलन। २. प्रेमके ढंग, तरीके। ३. अभिज्ञ।

यकजा अटकके रहता है दिल हमारा वर्ना
सबमें वही हक़ीकत[1] दिखलाई दे रही है।

× ×

रहते हो तुम आँखोंमें फिरते हो तुम्हीं दिलमें
मुद्दतसे अगर्चे याँ आते हो न जाते हो।

यही संलग्नता मुक्ति अथवा विश्व-प्रेमका प्रारम्भिक रूप है। इसके बाद वह अवस्था होती है जिसे कवि 'प्रसाद' 'प्रियतममय यह विश्व निरखना'—कहते है।

वेदनाकी ज्वलन्त अवस्थामे हृदयकी, अपनी, बेचैनीका मीरने जो जिक्र किया है, उसमे करुणाकी सीमा है। वह दुश्मनोसे भी प्रार्थना करते है कि वे मेरे प्रियतमसे मिलनेके लिए दुआ करें :—

यह इज़्तिराब[2] देख कि अब दुश्मनोंसे भी
कहता हूँ उसके मिलनेकी कुछ तुम दुआ करो।

वह बेचैनी है, वह दर्द है कि मरनेके बाद भी हसरते सिर पटकती है :—

हसरतें उसकी सिर पटकती हैं,
मर्गे फ़रहाद[3] क्या किया तूने?

दिलका हाल पूछनेपर वह कुछ कह नही पाता। वेदना उस सीमापर है जब वाणीका लोप हो जाता है। पूछनेपर उत्तर तो मिलता नही, रक्तकी एक बूंद टपक पड़ती है। क्या शेर है :—

---

१. सत्य, ईश्वरत्व। २. बेचैनी, व्याकुलता। ३ फरहादकी मृत्यु। फरहाद फारसका प्रसिद्ध प्रेमी था जिसने प्रियतमा शीरीके लिए सर्वस्वार्पण किया था।

आँखोंसे पूछा हाल दिलका
एक बूँद टपक पड़ी लहूकी।

वेदनाको छिपानेका भी ख्याल है। प्रेमकी बदनामी न हो इसलिए ऑखोंमे भरे आँसुओको रोक रखनेकी पूरी चेष्टा है। वेदना और दुःखमे भी कितना नियत्रण है :—

पासे नामूसे इश्क़[1] था वर्ना
कितने आँसू पलक तक आये थे।

मतलब उनका प्रेम बाजारू प्रेम नही है; वह मानवकी अन्त.संस्कृति से पूर्ण है। इसमे गिरावटपर एक रोक, एक ठहराव, एक नियन्त्रण है।

× × ×

अक्सर कवियो, शायरोमे चरित्रकी, आचरणकी बन्दिश नहीं होती; वे निर्बन्ध होनेमे अपना वैशिष्ट्य मानते है। 'मीर'की मानसिक पार्श्व-

मानवकी श्रेष्ठता के कवि

भूमिमे कविके लिए पहले इन्सानकी भूमिकाका निर्वाह करना आवश्यक है। उनके निकट मानवताकी ही श्रेष्ठ अभिव्यक्ति काव्य रूपमे सामने आती है, इसलिए 'मीर' इन्सानको बड़ा महत्त्व देते हैं। इन्सान देवतासे भी बड़ा है। महाभारतकार कहते है—'मनुष्य से बड़ा कुछ नही है।' मीर भी मानवीय श्रेष्ठताके सम्बन्धमे कहते है :—

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक[2] बरसों
तब ख़ाकके परदेसे इन्सान निकलते हैं।

फिर कहते है :—

मरता हूँ मैं तो आदमे ख़ाकीकी शान पर
अल्लाह रे दिमाग़ कि है आसमान पर।

---

१. प्रेमकी बदनामीका ख़्याल। २. आकाश।

वडी चुनौतीके साथ, आदमीके रुतवेको सवके ऊपर रखकर, कहते है.—

इलाही कैसे होते हैं जिन्हें है वंदगी ख़ाहिश
हमें तो शर्म दामनगीर होती है ख़ुदा होते ।

क्या खूब शेर है । वे न जाने कैसे होते है जिन्हे अभिलाषा है कि लोग हमारी वदगी करे—उपासना करे, हमारे सामने झुके । भई, यहाँ तो ख़ुदा होते लज्जा, आँचल, दामन पकड़ लेती है ।

ससारकी शोभा आदमीसे ही है.—

आदमे ख़ाकीसे आलमको जिला[1] है वर्ना
आईना था तो मगर क़ाबिले[2] दीदार न था ।

× × ×

वरसों लगी रही हैं जब मेहोमह[3] से आँखें
तब कोई हमसा साहब साहब नज़र[4] बने है ।

इधर इसान और जिन्दगीका यह वैभव, यह ऐश्वर्य, यह महत्ता उनकी दृष्टिमे है, उधर ससारकी असारता भी उनके दिलमे खुभी हुई है । यहाँ विश्राम नही, केवल चलना है । हिन्दीके अमर कवि 'प्रसाद'ने अपने 'प्रेमपथिक'मे कहा है—

इस पथका उद्देश्य नहीं है श्रान्त भवनमें टिक रहना
किन्तु पहुँचना उस सीमा पर जिसके आगे राह नहीं ।

पर मीरका कहना है कि यह दुनिया मजिल नही है, यहाँ टिकनेकी आशा या चेष्टा न कर, यह राह है, किसी और की । कुछ इसी जमीनपर, पर दूसरी कैफ़ियतमे, मैने अपनी एक गजलमे कहा है—

---

१ शोभा, आभा । २. देखने योग्य । ३. सूर्य-चन्द्र । ४. आँखवाला ।

वही पथ हूँ स्वयं चलने लगा जो मेरे चलने से
जो ख़ुद चलने लगी मंज़िल वही मैं एक मंज़िल हूँ।

मीर कहते हैं:—

य' मंज़िल नहीं, बेख़बर, राह है।

वह मृत्युको थकावटकी, विश्रामकी एक अवधि मात्र मानते है, मरकर फिर आगे चलना ही है, जैसे मुसाफिर जरा दम लेकर चलता है:—

मर्ग एक माँदगीका वक़्फ़ा है,
यानी आगे चलेंगे दम लेकर।

एक जगह और कहते है कि उम्र बिताते-बिताते हम थक गये है इसलिए मृत्युका अन्तर आ जाना अब जरूरी है।

× × ×

विशेषताएँ

मीरके काव्यकी मानसिक पृष्ठभूमिमे प्रेम मुख्य प्रवृत्ति है। इस प्रममे भी गहरी वेदनाशीलता, गहरी दर्दमन्दीका आलम है। इसीसे उनमे एक छटपटाहट, एक बेचैनी है, बेचैनी जो बँधे समुद्रकी तरह तड़पती है पर बाँधको तोड नही पाती। डा० फारूकीने बहुत ठीक लिखा है कि "वह तिश्नगी[1], वह बेचैनी, वह वालिहाना[2] सुपुर्दगी[3], वह जब्तोनज्म[4], वह कयामत[5] का-सा हगामा[6] और वह आगकी-सी लपट जो इनके कलाम[7] मे है उसके हकीकी असबाब[8] इनकी जिन्दगी और नफ्सयानी[9] हकायक़ मे ही मिल सकते है।"

---

१. प्यास। २. मुग्धतापूर्ण। ३. समर्पण। ४. नियत्रण और व्यवस्था। ५. प्रलय। ६. शोर। ७. काव्य। ८. वास्तविक कारण। ९. मानसिक।

उन्होने जिन्दगीमे कितनी कठिनाइयाँ झेली, कितने सकट उठाये, कितनी निराशाओका सामना किया, पर कभी पीठ न दिखाई। जब कोई मित्र नही, हितैपी नही तब भी इनकी यात्रा वन्द नही हुई। एक अजीब दृढता और अपना भरोसा उन्हे सदा रहा। उनमे जो आत्म-विश्वास, हम देखते है वह इसीलिए है। आँधियाँ चल रही है, विजलियाँ कड़कती है, वादल जल-थल एक करते है, अँधेरा दुनियाको निगल जानेको फैलता है कि फैलता है पर यह है कि अपना गर्वोन्नत मस्तक उठाये चले जा रहे है और चले जा रहे है। एक ओर ससारकी असारताका अनुभव, दूसरी ओर अपने पाँव पर खडे होनेका सकल्प, एक ओर निराशा दूसरी ओर विश्वास, एक ओर व्यथातुरता दूसरी ओर जिन्दगीको पूजा, एक ओर शोर दूसरी ओर एकान्त नीरवता, एक ओर लपट और दूसरी ओर वर्फानी आवरण,—और इन द्वन्द्वोके वीच अपनी ही शक्तिकी छायामे उनकी जीवन-यात्रा! क्या यह महत् नही है? वह कहते है :—

जीवनका महत् दृश्य

अपना ही हाथ सर पे रहा अपने याँ सदा
मुशफ़िक़[1] कोई नहीं है, कोई मेह्रबाँ[2] नहीं।

इन्होने प्रेमको समझा है, प्रेम किया है, प्रेमकी वेचैनी और तड़पके ऐसे चित्र दिये है कि दिल भर आता है, करुणा उमड़ती है, एक वेखुदी जिसका दिल दर्दसे चीख-चीख उठता है। खोये-खोये है, न जाने कहाँ है; न जाने कहाँ दिल है, न जाने कहाँ आँखे है, न जाने कहाँ ध्यान है। कहते है :—

गह आपमें नहीं हो, गह मुन्तज़िर[3] कहीं हो,
यह मीरजी तुम्हारा इन रोज़ों हाल क्या है?

१. मित्र। २. कृपालु। ३. प्रतीक्षामे।

अपनी बेज़ुबाँ दर्दमन्दी, अपनी अबोली व्यथाको किस करुण रूपमे व्यक्त करते है :—

आबलेकी सी तरह टीस लगी, फूट बही ,
दर्दमन्दीमें गयी सारी जवानी इसकी ।

और इस अबोली व्यथाकी गहराई देखिए :—

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे ,
इस ज़िन्दगी करनेको कहाँसे जिगर आवे ?

× ×

हमारे आगे तेरा जब किसीने नाम लिया ।
तो दिल सितमज़दाको मैंने थाम-थाम लिया ।।

और उधर शोख़ी और शरारतका यह हाल है कि तुम्हारा रोना सुननेको तैयार नही :—

एक शख़्स मुझी-सा था कि था तुझसे पै आशिक़ ,
वह उसकी वफ़ा[1] पेशगी वह उसकी जवानी ।
यह कहके जो रोया तो लगा कहने, न कह 'मीर' ,
सुनता नहीं मैं ज़ुल्मरसीदों[2] की कहानी ।।

इस प्रकार दिलमे अभिलाषाओका सागर है पर ओठ बन्द है । इनका प्रियतम एक नीरव-व्यथा बनकर इनके जीवनमे समा गया है । उसकी आरज़ू, उसकी उपस्थिति, उसका तसव्वुर ही इनके दिलका मरहम है । इस दर्दके स्वादके आगे सब कुछ निरर्थक है, तुच्छ है । तुम हो तो सब है, तुम्हारी कामना है तो सब सुख है :—

मौसिमे अब्र[3] हो सुबू[4] भी हो ।
गुल हो, गुलशन[5] हो और तू भी हो ।

१. निष्ठा । २. अत्याचार-पीड़ितों । ३. बादल । ४. मद्यभाण्ड । ५. उद्यान ।

दिल तमन्नाकदा[1] तो है पर 'मीर',
हो तो उसकी ही आर्ज़ू भी हो।

पर इन आर्जूओ पर भी वन्दिश है —

आर्ज़ूएँ हज़ार रखते हैं,
तिसपे हम दिलको मार रखते हैं।

इस प्रकार हम देखते है कि इनके काव्यकी पार्श्वभूमिमे प्रेमकी अनेक छायाएँ चल-फिर रही है। प्रेममे व्यापकता है, वह हर रंग और रूप मे प्रकट है। दिलोमे बाढका आलम भी है और भाटेकी, उतारकी शान्ति भी है, जिन विपत्तियोमे जिये और जिन कठिनाइयोमे पले-वढे उनकी झलक है। गहरी वेदनाओको कलेजेसे चिपटाये हुए है। यह वेदना उनके जीवनका आधार है, कोई विक्री या सौदेकी चीज नही। जिसको प्यार किया, खूव किया। इश्कमे हजार-हजार अभिलापाएँ उठती है पर वे अवोली, दर्दमे डूवी रह जाती है। सनातन विरहका वातावरण इनपर यो छा गया है कि मिलनमे भी विरहका रस भिद गया है। इसीलिए सव अभिलापाओके साथ भी प्रेम उपासना वन गया है और काव्य मानवता एव युगकी पीडाकी, सस्कृतिकी अभिव्यक्ति होकर रह गया है। उनकी निजी व्यथा युगकी व्यथाके साथ मिलकर एक हो गयी है। इसीलिए उनके काव्यमे जहाँ उनके हृदयका एकान्त सवेदन है वहाँ युगका चीत्कार भी है। उसमे सहस्र-सहस्र हृदयोकी धड़कने सुनाई पडती है, उसमे सैकडो प्राणोकी आशा, सैकडो नयनोकी निराशा, सैकड़ो ओठोकी प्यास और मिठास है, जिन्दगियाँ जादूसे उठती है,—रोती है और उठती है, तडपती है और उठती है,—एक नीरव, अवोली साधना अपनी खामोशीमे भी वोल-वोल उठती है, वे वोल जो दिलोमे अमृतकी गगा वहा देते है।



१ अभिलपित।

मीर काव्य : कला-पक्ष



उर्दू काव्यमे विभिन्न शायरोमे विभिन्न गुण मिलते है। किसीमें भापाका पाण्डित्य है, किसीमे कल्पनाकी तेज उड़ान है, किसीमे अर्थ-गाम्भीर्य है, किसीमे कहनेका ढग है, किसीमे प्रसादगुण है, किसीमे गहरी अनुभूति है, किसीमे अलकृत शैलीकी बहार है पर मीर है कि इनमे अनेक गुणो एव विशेषताओका भाण्डार है। निम्नलिखित मुख्य विशेषताएँ इनमे पाई जाती है:—

१. प्रसाद गुण; भाषाका जादू, सादगी। (जबानकी सेहरकारी)
२. कहनेका ढग (तर्जे बयाँ)।
३. विलक्षणता (नुदरत)।
४. व्यथातुरता।
५. चित्रकारी वा चित्रात्मकता।
६. व्यक्तिगत अनुभूतिका साधारणीकरण।
७. शिष्टता।
८. शब्द और धर्मका सन्तुलन (अलफाज व मानीका तवाजुन)
९. थोडेमे बहुत कहना : गागरमे सागर।
१०. रचनाकी क्रमबद्धता।
११. मुहाविरोका सुन्दर प्रयोग।
१२. व्य.य
१३. उपमाएँ और रूपक।
१४. संगीतात्मकता।
१५. फ़ारसी उक्तियोंका अनुकरण।

प्रसाद गुण :

मीरका काव्य सर्वत्र प्रसादगुणसे पूर्ण है। यह प्रसादगुण न केवल भावोको लेकर है बल्कि भाषामे भी है। भाषाकी सरलता तो कही-कही कमालकी है जैसे बाते करते हो। देखिए:—

कुछ करो फ़िक्र मुझ्फ दिवानेकी,
धूम है फिर बहार आनेकी
कहते हैं डूबते उछलते हैं।
डूबे ऐसे कोई निकलते हैं।

× ×

आह जो हमदर्मी[1] सी करती है।
अब तो वह भी कमी-सी करती है।

× ×

शामसे कुछ बुझा-सा रहता है,
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस[2] का।

× ×

फोड़ा-सा सारी रात जो पकता रहेगा दिल,
तो सुबह तक तो हाथ लगाया न जायगा।

× ×

---

१. साथ देना, सख्य। २. दीन।

हम फ़क़ीरोंसे बेअदाई क्या,
आन बैठे जो तुमने प्यार किया।

× ×

अश्क[1] आँखोंमें कब नहीं आता।
लहू आता है जब नहीं आता।
होश जाता नहीं रहा लेकिन,
जब वह आता है तब नहीं आता।

× ×

दिल मुझे उस गलीमें ले जाकर,
और भी ख़ाक में मिला लाया।
इब्तिदा[2] ही में मर गये सब यार,
इश्क़की कौन इन्तिहा[3] लाया।

× ×

बेख़ुदी ले गयी कहाँ हमको,
देरसे इन्तज़ार है अपना।
रोते-फिरते हैं सारी-सारी रात,
अब यही रोज़गार है अपना।
देके दिल हम जो हो गये मजबूर,
इसमें क्या इख्तियार है अपना।
जिसको तुम आसमान कहते हो,
सो दिलोंका गुबार है अपना।

× ×

१. आँसू। २. आरम्भ। ३. अन्त।

हमने अपनी-सी की बहुत लेकिन,
मर्ज़े - इश्क़का इलाज नहीं।

× ×

क्या है देखो हो जो उधर हरदम,
और चितवनसें प्यार-सा है कुछ।

इस प्रकारकी सीधी-सादी बातोसे उनका काव्य भरा हुआ है।

कहनेका ढंग (तर्ज़ेबयाँ):

पर केवल भाषाकी सादगीसे कोई विशेषता नही आती। ऐसी सादगी मीरके समकालिक अनेक शायरोमे थोडी-बहुत पाई जाती है। असल चीज है कहनेका ढग तथा उसकी नवीनता। मीरमे दोनो बाते है। जैसी इनकी भाषा सरल और सुलझी हुई है वैसा ही इनके कहनेका ढग खूब है। जैसे देखने-देखनेमे एक बात पैदा हो जाती है, वैसे ही कहने-कहनेमे भी अजब असर हो जाता है। हाफिजकी भाँति इनकी गजले जो दिलमे चुभती है उसका एक कारण यह भी है कि यह शायर बनकर नही, प्रेमी बनकर बोलते है। इससे उसमे अपने-आप एक असर पैदा हो जाता है और बिना प्रयत्नके ही काव्यका कला-पक्ष निखर उठता है। वैसे अलग-अलग देखने पर कोई विशेष बात मालूम नही होती फिर भी—

क्या जानूँ दिलको खींचे है क्यों शेर मीरके!

उर्दू काव्यका प्रेमी विरहमे पागल होता है तब कपडे फाडता है, गला फाडता है। यह ऐसी बात है जिसे अनेक प्रकारसे अनेक कवियोने कहा है। एक पिटा-पिटाया मजमून है जिसे लोग बराबर कहते आये और आज भी कहते जा रहे है। ऐसी जमीनपर मीरको चलना है। वह कहते है—

अब के जुनूँसें फासला शायद न कुछ रहे,
दामनके चाक और गरेबाँके चाकमें।

मतलब इतना ही है कि अबके पागलपनका जो दौरा होगा उसमे शायद दामन (आँचल-छोर) के चाक और गलेके चाकमे कोई फासला न रह जाय यानी पूरा पागलपनका दृश्य दिखाई देगा। कोई खास बात नही पर कहनेका ढंग ऐसा है कि उसने बातमे बात पैदा कर दी है। मौलाना हालीने अपने 'दीवान'[1] के मुकदमेमे[2] इस शेरका जिक्र करते हुए एक घटनाका वर्णन किया है जिससे मीरके काव्यकी विशेपताओं पर प्रकाश पडता है। वह लिखते है :—

"मौलाना 'आजुर्दा' के मकानपर, उनके चन्द अहबाब,[3] जिनमे 'मोमिन' और 'शेफ्ता' भी थे, एक रोज जमा थे। मीरका यह शेर पढा गया। शेरकी बेइन्तिहाँ[4] तारीफ[5] हुई और सबको यह ख्याल हुआ कि इस काफियेको हर शख्स अपने-अपने सलीके[6] और फिक्र[7] के मुआफिक[8] बाँधकर दिखाये। सब क़लम, दावात और कागज लेकर अलग-अलग बैठ गये और फिक्र करने लगे। इसी वक्त एक और दोस्त वारिद[9] हुए। मौलानासे पूछा कि हजरत किस फिक्रमे बैठे है ? मौलानाने कहा—"कुल-हो-अल्ला-हो अहदका[10] जवाब लिख रहा हूँ।"

इसके बाद मौलाना हाली खुद अपनी राय प्रकट करते है —

"जाहिर[11] है कि जोशेजनूँ[12] मे गरेबाँ या दामन या दोनोको चाक करना एक निहायत मुबतजिल[13] और पामाल[14] मजमून[15] है जिसको क़दीम[16] जमानेसे लोग बराबर बाँधते चले आये है। ऐसे चिथेडे हुए मजमूनको मीरने बावजूद गायत[17] दर्जेकी सादगीके एक ऐसे अछूते, निराले

---

१ गजलोका सकलन, २ भूमिका, प्रस्तावना। ३. मित्र (बहुवचन)। ४. असीम। ५. प्रशसा। ६ ढग। ७. कल्पना। ८. अनुकूल। ९. प्रविष्ट। १०. कुरानकी सूरत 'कह कि अल्लाह एक है'। ११ प्रकट है। १२. पागलपनकी तेजी। १३ अधम, निम्न। १४ पददलित। १५. विषय। १६ प्राचीन। १७ हद।

और दिलकश[1] असलूब[2] मे बयान किया है कि इससे बेहतर असलूब तसव्वुरमे नही आ सकता। इस असलूबमे बडी खूबी यही है कि सीधा-सादा है, नेचुरल[3] है और बावजूद इसके बिलकुल अनोखा है।"

हैरते - रूए - गुलसे मुर्ग़-चमन
चुप है यों, बेज़बान है गोया।

फूलके, गुलावके मुखपर व्यक्त हैरतसे, आश्चर्यसे चमनका पक्षी यो चुप है जैसे बेजबान हो।

कहा मैंने कितना है गुलका सबात[4]
कली ने यह सुनकर तबस्सुम[5] किया।
जिगरमें ही एक क़तरा[6] खूँ है सरश्क[7],
पलक तक गया तो तलातम[8] किया।

× ×

दावा किया था गुलने तेरे रुख़से बाग़में,
सेली[9] लगी सबाकी सो मुँह लाल हो गया।

गुल (गुलाव) लाल होता है उससे प्रियतमाके कपोल या चेहरेकी उपमा दी जाती है उसी गुलके लाल रंगपर 'मीर' मजमून बाँधते है। क्यो है यह लाल रग ? कहते है कि उद्यानमे गुलाबने तेरे मुँहसे बराबरीका दावा किया था। इसपर प्रभातीने ऐसा तमाचा मारा कि उसका मुँह लाल हो गया।

---

१ चित्ताकर्षक। २ अभिव्यक्ति, प्रकट करनेका ढग। ३. स्वाभाविक। ४ स्थिरता। ५. मुसकराहट। ६ बिन्दु। ७ अश्रुबिन्दु। ८. बाढ। ९ तमाचा।

विलक्षणता :

काव्यके कला-सौन्दर्यमे विलक्षणताका स्थान बहुत ऊँचा है। जिन बातों को हम रोज देखते-सुनते है उन्हीको कवि एक विलक्षण रूपमे हमारे सामने उपस्थित करता है। मीरके काव्यमे ऐसे शेरोका बाहुल्य है जो यूँ साधारण है पर अपनी विलक्षणताके कारण श्रेष्ठ काव्य-भूमि पर उठ गये है।

कहते हो, इत्तिहाद[1] है हमको,
हाँ, कहो एतमाद[2] है हमको।

× ×

बेकली, बेख़ुदी कुछ आज नहीं,
एक मुद्दतसे वह मिज़ाज नहीं।

विरहमे सब रोते है; आँसू गिराते है पर यह नियत्रण, यह ठहराव देखिए :—

पासे नामूसे इश्क़[3] था वर्ना
कितने आँसू पलक तक आये थे।

× ×

दिल किस क़दर शिकस्ता हुआ था कि रात मीर,
जो बात लबपै आई वह फरियाद हो गयी।

× ×

एक समय हम आग थे, तप रहे थे। अब ख़ाक है; मिट्टीमे मिल गये है। वह आरभ था, यह अन्त है। (याद रहे कि हर आग अन्तमे राख—

---

१. मैत्री, लगाव। २. भरोसा, विश्वास। ३. प्रेमकी बदनामीका ख़्याल।

ख़ाक—हो जाती है)। इस प्रकार प्रेममे अपने मिटनेके गौरवको, अत्यन्त दर्द भरे ढगपर, प्रदर्शित किया है :—

आग थे इब्तिदाए इश्क़में हम,
अब जो है ख़ाक इन्तिहा है यह।

पतगने, प्रेमीने, न जाने क्या निवेदन किया कि शमा, सुवह तक सिर धुनती रही। निवेदनका विलक्षण प्रभाव है :—

सुवह तक शमा सिरको धुनती रही,
क्या पतंगेने इल्तिमास किया।

प्रेमकी चोटको छिपानेकी विवशताका वर्णन करते हैं :—

हाय उस ज़ख़्मिए शमशीरे मुहब्बत[1]का जिगर,
दर्दको अपने जो नाचार छिपा रखता हो।

उस प्रेमकी तलवारके घायल हृदयकी क्या कहे जो विवश होकर अपनी वेदनाको छिपा ले।

व्यथातुरता :

मै पहिले भी लिख चुका हूँ कि व्यथातुरतासे तो इनका सम्पूर्ण काव्य ही ओत-प्रोत है। कुछ ऐसे दर्दके साथ यह अपनी बात कहते है कि कलेजा मुँहको आता है। इनके दयारसे ऐसी व्यथातुर आवाज आती है मानो हजारो हसरते गले मिलकर रो रही हो; एक दिलोको छूने वाली आवाज, दिमागको वेचैन कर देने वाली आवाज, वह आवाज जो उठती है तो सब पर छा जाती है, जैसे आँसुओकी घटा हो जो मनके आकाश पर सदाके लिए छा गयी हो। वेचैनीका यह हाल है कि दुश्मनोसे कहते

---

१ प्रेमकी तलवारका घायल।

फिरते है कि अब तुम लोग उससे मिलनके लिए आशीर्वाद दो, प्रार्थना करो।

यह इज़्तिराब[1] देख कि अब दुश्मनोंसे भी,
कहता हूँ, उससे मिलनेकी अब तुम दुआ करो।

फरहाद, शीरीके प्रेममे अपना काम करता ही रहा कि मौतने उसे दुनियाके परदेसे उठा दिया। अब उसकी अधूरी लालसाएँ, उसके बाद, अपने सिर धुन रही है।

हसरतें उसकी सिर पटकती हैं,
मर्गे फ़रहाद[2] क्या किया तूने ?

मुँहसे तो वह बोलते नही, पर आँखोंके इशारेसे दिलका हाल पूछ लिया करते है। व्यथा अन्तरको यों कुरेद रही है कि इस बार जो आँखोसे दिलका हाल पूछा तो रक्तकी एक बूँद टपक पडी!

कही भी तुम्हारा नाम आ जाता है, या मुझे ही याद आ जाती है, तब आँखे भर आती है। इतनी व्यथा अब कब तक सहूँगा, जीनेके लिए कहाँसे पत्थरका कलेजा लाऊँ ? जब कोई तुम्हारा नाम लेता है तो दिलको थाम-थाम लेता हूँ।

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म[3] भर आवे
इस ज़िन्दगी करनेको कहाँसे जिगर आवे ?
हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया।
तो दिल सितमज़दहको हमने थाम-थाम लिया॥

---

१. बेचैनी। २. फरहादकी मृत्यु। ३. आँख।

कभी-कभी हम निराशाभरी दृष्टि तुमपर डाल लेते थे; उतना ही हमारा सुख था पर अब देखता हूँ कि तुम मुझसे मुँह भी छिपाकर चले जा रहे हो, यह क्या बात है ?

कोई नाउमीदाना करते निगाह,
सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले ।

बहार आई है । कलियाँ मुसकराई है; फूल खिले है; डालियाँ सिजदेमे झुक गयी है, सुरभित वायु दिलोको गुदगुदाती है पर उस गरीब पंखीका क्या, जो कफसमे, पिंजरेमे पड़ा, तड़प रहा है । कभी उम्मीद थी कि छूटकर अपने घोसले तक पहुँचेंगे किन्तु अब तो पख भी गिर गये, रिहाईकी कोई उम्मीद नही रह गयी .—

बालो पर भी गये बहारके साथ,
अब तवक्का[1] नहीं रिहाई की ।

× × ×

प्रेमकी बेचैनीमे आँसू निकल ही आते है । ऐ उपदेशक ! तू रोनेको मना करता है पर हमारी विवशताको नही देखता ?

आजकल बेक़रार हैं हम भी,
बैठ जा चलनेहार है हम भी ।
मना गिरिया[2] न कर तू ऐ नासेह[3] ।
इसमें बेइख़्तियार[4] हैं हम भी ।

कहते है, मनकी अभिलाषा है कि चाहूँ तो सिर्फ तुमको चाहूँ, देखूँ तो सिर्फ तुम्हे देखूँ । तुम्ही मेरे दिलकी आकाक्षा हो, तुम्ही मेरी आँखोकी अभिलाषा हो :—

---

१ आशा । २ रोदन । ३. उपदेशक । ४ लाचार ।

चाहें तो तुमको चाहें देखें तो तुमको देखें,
ख्वाहिश दिलोंकी तुम हो, आँखोंकी आरज़ू तुम।

चित्रकारी :

स्वभावतः प्रेममे लज्जा होती है। इसका एक चित्र है :—

मीरसे पूछा जो मैं आशिक़ हो तुम
होके कुछ चुपकेसे शरमाये बहुत।

प्रेमके दीवानेपनका एक चित्र है :—

कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह,
कल मीर खड़ा था याँ सच है कि दिवाना था।

जब सौन्दर्य खीझता है, क्रुद्ध होता है तो उसका आकर्पण बढ जाता है। वह गुस्सेसे ओठोमे कुछ कह रहे है :—

ज़ुल्म है क़हर है क़यामत है,
ग़ुस्सेमें उसके ज़ेरे लबकी बात।

बज्म—महफ़िलमे आमने-सामने पड़ गये है। न देखा जाता है, न आँखे ही नीची किये रहा जाता है। इसी अवस्थाका चित्र है —

बज़्ममें मुँह उधर करें क्योंकर,
और नीची नज़र करें क्योंकर ?
यों भी मुश्किल है वों भी मुश्किल है
सर झुकाये गुज़र करें क्यों कर ?

शोख़ी और शरारतका एक चित्र है —

मैं कहा देखो इधर टुक तुम तो मैं भी जान दूँ
हँसके बोले यह तेरी बातें हैं फिर देखेंगे हम।

क्या सही तस्वीर है —

उससे घबराके जो कुछ कहनेपै आ जाता हूँ।
दिलकी फिर दिलमें लिये चुपका चला जाता हूँ।

अनुभूतियोंका साधारणीकरण :

मीरने बहुत सहा है, वहुत कठिनाइयाँ झेली है पर अपनी अनुभूतियो को दूसरोकी अनुभूतियोसे मिला दिया है। वे उनकी अनुभूतियाँ तो है ही पर परिधिसे निकल कर वे सवकी अनुभूतियाँ हो गयी है। उनकी वेदना युग-वेदनामे समा गयी है या यह कहे तो ज्यादा ठीक होगा कि युग-वेदना उनकी वेदनामे समा गयी है। उन्होने वडो-वडोको मिटते देखा है, आँखोके सामने सिहासन उलटते देखे है, इसलिए वह खुद अपनेको समझते है —

ज़ेरे फ़लक[1] भला तू रोये है आपको मीर,
किस-किस तरहका आलम याँ खाक हो गया है।
सर मारना पत्थरसे या टुकड़े जिगर करना,
इस इश्क़की वादीमें हर नूअ[2] बसर करना।
हम तौर इश्क़से तो वाक़िफ़ नहीं है लेकिन,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है।
तकलीफ़ दर्दे-दिलकी अबस हमनशींने ली,
दर्दे सखुनने मेरे सभोंको रुला दिया।
यारब! कोई तो वास्ता सरगश्तगीका है,
एक इश्क़ भर रहा है ज़मीं-आसमानमें।

---

१ आकाशके नीचे। २ प्रकार।

शहाँ कि कहले जवाहर[1] थी ख़ाके पा[2] जिनकी,
उन्हींकी आँखोंमें फिरते सलाइयाँ देखीं।

× ×

शिकवा[3] करूँ हूँ बख़्त[4] का इतने ग़ज़ब न हो बुताँ,
मुझको ख़ुदा नख़ास्ता तुमसे तो कुछ गिला[5] नहीं।
चश्म सफ़ेद व अश्क सुर्ख़[6] आह दिले हज़ीं[7] है याँ,
शीशा[8] नहीं है, मय[9] नही, अब्र[10] नहीं, हवा नहीं।

× ×

शिष्टता और मानवता :

मीरपर शिष्टताके सस्कार ऐसे पडे है कि शायद ही कभी उनके काव्यमे ओछेपनकी झलक आई हो। वह इसानको, मनुष्यको बहुत ऊँचा स्थान देते है, इसलिए कभी नीचेकी सतह पर होनेमे उन्हे खुशी नही। वह अपने प्रियतमके दोषोको बहुत सँभाल कर कहते है। शब्दोके चयनमे भी बड़ा ख्याल रखते है। मानवकी उच्चताके सम्बन्धमे वह कहते है:—

मरता हूँ मैं तो आदमे खाकी[11] की शान पर,
अल्लाह रे दिमाग़ कि है आसमान पर।

× ×

वह लोग तुमने एक ही शोख़ीमें खो दिये,
पैदा किये थे चर्ख़ने[12] जो ख़ाक छान कर।

---

१. रत्नांजन २. चरण-धूलि। ३. उपालम्भ। ४. भाग्य। ५. शिकायत। ६. लाल आँसू, रक्ताश्रु ७. दुखी दिल। ८. आईना, मद्यकी सुराही, दिल। ९. मद्य। १०. बादल। ११. मिट्टीका पुतला आदमी। १२. आसमाँ।

आदमे ख़ाकीसे आलमको जिला[१] है वर्ना,
आईना था तो मगर क़ाबिले दीदार[२] न था।

शब्द और अर्थका सन्तुलन :

उर्दू शायरीमे यह गुण बहुत कम पाया जाता है। इसमे शब्दोका चुनाव गर्भित अर्थके वातावरणके अनुकूल होता है। काव्य-कलाका यह बड़ा दुष्कर पक्ष है। इसमे समानार्थकवाची दूसरे शब्द रख देनेसे वह सौन्दर्य, वह मजा नही रह जाता। पैनी दृष्टि और शब्दोके ध्वन्यात्मक ज्ञानसे कविमे यह गुण आता है। नवाब मिर्जा जाफर अली खाँ 'असर' अपनी पुस्तक 'मजामीर' मे इस विपयमे मीरकी विशेषताओकी चर्चा करते हुए लिखते है—"मगरबी शायरी[३] मे यह सनअत[४] सिर्फ़ हवास ज़ाहरी[५] के मुशाहदात[६] के फर्ज[७] को पूरा करती है; मस्लन्[८] दरियाकी रवानी,...यह वात नहीं कि सौत[९] या नशस्ते अलफ़ाज़[१०] किसी जज्बे[११] या कलबी वारदात[१२] की पेशखानी[१३] करे। यह मीरके कमालेफन[१४] का मोजिज़ा[१५] है कि उसने उर्दू शायरीमे, जिसपर सख़्त कयूद[१६] आयद[१७] है... 'वह खूवियाँ पैदा कर दी है जो मगरबी शायरीमे, इतनी आज़ादी पर भी मादूम[१८] है।"

उदाहरण लीजिए:—

कुछ करो फ़िक्र मुझ दिवानेकी।
धूम है फिर बहार आनेकी॥

---

१. दीप्ति, शोभा। २. देखने योग्य। ३. पाश्चात्य काव्य। ४. शिल्प। ५. वाह्य भाव। ६ निरीक्षण। ७. कर्तव्य। ८. जैसे, उदाहरणत.। ९. ध्वनि। १०. शब्द विठाना, शब्द-योजना। ११. मनोभाव। १२ हार्दिक घटना। १३. पूर्वाभास। १४. श्रेष्ठ शिल्प। १५. चमत्कार। १६. नियम, वन्धन। १७. लागू। १८ अप्राप्य, अस्तित्वहीन।

असर साहब लिखते है.—"पहले मिसरेसे कितनी घबराहट जाहिर होती है ! अलफाज[1] और उनकी तरतीब[2] ऐसी है कि आदमी जल्द पढ़ने पर मजबूर है जिससे पता चलता है कि इस शख्सको अपनेमे वह तगय्युरात[3] महसूस[4] होना शुरू हो गये जो एक मर्तबा पहिले दीवानगीका पेशखेमा[5] बन चुके है···दूसरे मिसरेमे लफ्ज धूम ऐसी जगह वाकअ[6] है कि मालूम होता है, ढोल-ताशे, बाजे बज रहे है, बहारका लश्कर जूक दर जूक[7] उमड़ा चला आ रहा है और इस गरीबका खिरमने-सब्रो-होश[8] ताराज[9] किये देता है।"

कुछ और उदाहरण ले.—

यारो मुझे मुआफ़ करो, मैं नशेमें हूँ,
अब दो तो जाम[10] ख़ाली ही दो, मैं नशेमें हूँ।

शेर पढनेसे ऐसा मालूम होता है कि ठीक नशेकी हालत है। नशेका वातावरण ही बन गया है।

आलम आलम इश्क़ो जूनूँ है दुनिया दुनिया तहमत है।
दरिया दरिया रोता हूँ मैं सेहरा सेहरा[11] वहशत[12] है॥

और भी —

आँखोंमें जी मेरा है, उधर देखता नहीं,
मरता हूँ मैं तो हाय रे सर्फ़ा[13] निगाहका।

---

१ लफ़्ज (शब्द) का बहुवचन। २ क्रम। ३ परिवर्तन। ४ अनुभव। ५ पूर्व लक्षण। ६ स्थित। ७. भीड़ पर भीड। ८ धीरज और चेतनाके खलिहान पर। ९. विनष्ट। १० प्याला। ११ जगल, रेगिस्तान। १२ पागलपन। १३. गुजारना, व्यय होना।

गागरमें सागर :

यह मीरकी अपनी विशेषता है। हिन्दीमे जैसे बिहारी अपने छोटे दोहोंमे एक दुनिया चित्रित कर जाते है, दोहे—'जो देखनको छोटे लगे घाव करें गम्भीर', उसी प्रकार मीरके छोटे-छोटे शेरोमे एक दुनिया छिपी हुई है। शब्द थोडे और भाव अधिक। जैसे उसके दिलमे एक बेकरार समुद्र लहरें मार रहा है वैसे ही उसके शेरोमे भी भावोका एक घनीभूत सागर है। इनकी इस विशेषताकी चर्चा करते हुए अल्लामा तबातबाई लिखते है :—

"चन्द लफ़्ज़ोंमे मानिए कसीर[1]का अदा करना ईजाज[2] नही, ऐजाज़[3] समझिए,—दानेकी गिरहमे खिरमन[4], गुंचे[5]की मुट्ठीमे गुलशनका[6] समा जाना तो देखिए।"

सचमुच ही मीरने एक दानामे अन्न-भाण्डार और एक मुकुलमे पुष्पोद्यान भर लिया है। कुछ उदाहरण लीजिए :—

लुत्फ़[8]पर उसके हमनशीं[7] मत जा,
कभू हमपर भी मेह्रबानी थी।

या

मर्गे मजनूँसे अक्ल गुम है मीर
क्या दिवानेने मौत पाई है!

× ×

मेरे तग़य्युरे हाल[8] पर मत जा
इत्तिफ़ाक़ात है ज़मानेके।

× ×

---

१ [illegible]। २. [illegible]। ३ चमत्कार। ४ खलिहान। ५ [illegible]। ६ [illegible]। ६ कृपा। ७. साथी। ८. अवस्यान्तर।

कहा मैंने कितना है गुलका सबात[1],
कलीने यह सुनकर तबस्सुम[2] किया।

× ×

मत तुरबते[3] मीरको मिटाओ,
रहने दो ग़रीबका निशाँ तो।

रचनाकी क्रमबद्धता :

फिर मीर रचनाके विभिन्न अगोंमे जो क्रमबद्धता और सामञ्जस्य रखते है वह भी उनकी बड़ी विशेषता है। इसके सिवा जिस रचनामे कर्ता, कर्म, सम्बन्ध, क्रिया इत्यादि क्रमसे आवे, जिस क्रमसे प्राय. हम उन्हे बोलते है, वह रचना विशेपतः गजलमे श्रेष्ठ है। क्योकि गजल, वस्तुत. दो प्रेमियो, प्रेमी और प्रियतम, का वार्तालाप है। जो उसमे वार्तालाप की यह स्वाभाविकता जितना ही रख सकता हे वह उतना ही बड़ा ग़जलगो है। देखिए :—

मीर इन नीमबाज़ आँखोंमें,
सारी मस्ती शराबकी-सी है।

× ×

मीर साहब रुला गये सबको
कल वह तशरीफ़ याँ भी लाये थे।

× ×

सिरहाने मीरके आहिस्ता बोलो,
अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

---

१. अस्तित्व। २. मुसकान। ३. कब्र, समाधि।

बिल्कुल यह मालूम होता है जैसे वातचीत हो रही है। रोजके वही थोडेसे शब्द है जिन्हे हम वोलते है पर उनमे क्या असर पैदा हो जाता है। बातोका यह वातावरण, सदा, अपनी गजलोमे रखनेकी चेष्टा वह करते है, वल्कि उन्होने प्राय अपनी गजलोको "बाते" ही कहा है —

बातें हमारी याद रहें फिर बातें ऐसी न सुनिएगा।
पढ़ते किसूको सुनिएगा तो देर तलक सिर धुनिएगा।
पढ़ते फिरेंगे गलियोंमें इन रेख़्तोंको लोग,
मुद्दत रहेंगी याद यह बातें हमारियाँ।

वार्तालापका वास्तविक वातावरण उत्पन्न करनेके लिए यह वातचीतमे प्रयुक्त सम्वोधनोका भी उपयोग खूब करते है, जैसे मियाँ, भाई, साहव, मीरजी, जालिम, प्यारे इत्यादि।

मुहाविरोंका प्रयोग :

मुहाविरोके प्रयोगमे 'मीर' की सफलताको कोई न पासका। बस—थोडा वहुत गालिब सफल हुए है। 'दाग'ने अन्तिम युगमे मुहाविरोको काव्यमे बिठाया पर उनमे कृत्रिमताका वातावरण है। मीरकी खूबी यह है कि वह मुहाविरेके लिए मुहाविरेका प्रयोग नही करते वल्कि आपसकी बातचीतको प्रभावोत्पादक बनानेके लिए उनका प्रयोग करते है—यहाँ तक कि यह मालूम ही नही पडता कि वह मुहाविरेका प्रयोग कर रहे है। मौलाना मोहम्मद हुसेन 'आजाद' ने ठीक ही लिखा है —

"वह दिलके ख़्यालातको, जो कि सबकी तबीयतोके मुताबिक है, मुहाविरेका रग देकर बातो-बातोमे अदा कर जाते है।"

देखिए —

अब तो जाते हैं बुतक़देसे मीर,
फिर मिलेंगे अगर खुदा लाया।

× ×

दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके,
पछताओगे, सुनो-हो, यह बस्ती उजाड़कर ।

× ×

बेहोशी सी आती है तुझे उसकी गलीमें
गर हो सके ऐ मीर ! तो इस राह न जा तू ।

× ×

क्या हाल हो गया है तेरे ग़ममें मीरका,
देखा गया न हमसे तो टुक इस जवाँकी ओर ।

× ×

वाइज़े नाक़िसकी बातोंपर कोई जाता है मीर,
आओ मैख़ाने चलो तुम किसके कहने पर गये ।

व्यंग्य :

व्यग्य काव्य-कलाका श्रेष्ठ अग है। मीरका व्यग्य भी एक विशेप प्रकारका है। उसमे बड़ी स्वाभाविकता है और उनके कहनेमे जो गहरा दर्द होता है उसीमे से प्रच्छन्न व्यग्यकी किरणें अपने-आप फूट पडती है। डा० फारुकीने लिखा है.—

"उर्दू गज़लमे तज[1] की मिसाले[2] 'गालिब' और 'मोमिन'के यहाँ भी मिलती है। गालिबके तजमे शोखी है, दिल बरश्तगी[3] नही। मोमिनके यहाँ वह जख्मे तेग[4] है '' 'मीरके तज़मे धीमापन है, हलकी-हलकी टीस है। इसकी मिसाल उस नश्तरकी-सी है जिसकी धार निहायत बारीक और तेज़ हो।"

---

१ व्यग्य। २. उदाहरण। ३ दिलकी जलन। ४. तलवारका घाव।

उसकी ईफ़ाए-अहद[1] तक न जिये,
उम्रने हमसे बेवफ़ाई की।

यह नही कहते कि उसने अपने वादेको पूरा नही किया। या बेवफाई की। कहते है —"उम्रने हमारे साथ वेवफाई की कि उसके वादेकी पूर्ति तक हम जी ही न पाये।" कैसा छिपा गहरा, व्यग्य है।

दिल कि दीदारका क़ातिलके बहुत भूका था,
इस सितमकुश्तासे एक ज़ख़्म भी खाया न गया।

मेरा दिल कातिलके दर्शनोका बहुत भूखा था पर अत्याचार-पीडित इस बेचारेसे एक जख्म भी खाया न गया।

यहाँ दिलकी दुर्बलता, उसकी भूख और खानेको लेकर कैसा व्यग्य है। 'जख्म खाना' मुहाविरेको भी खूब निभाया है।

शिकवए आबला[2] अभीसे मीर,
है पियारे हनोज़[3] दिल्ली दूर।

अरे मीर, तुझे अभीसे छाले पडनेकी शिकायत है। प्यारे! अभी तो दिल्ली दूर है।

इसमे भी व्यग्यके साथ 'दिल्ली दूर' है मुहाविरेको किस खूबीके साथ निवाहा है।

एक शेर देखिए—

होगा किसी दीवारके सायेके तले मीर,
क्या काम मोहब्बतसे है उस आरामतलबको।

डॉ० मौलवी अब्दुल हक इस शेरपर मुग्ध है। लिखते है :—"इस शेरका हुस्न[4] शरह[5] और बयानसे बाहर है। 'आरामतलब' का लफ्ज

१ प्रण-पालन। २. छाले पडनेकी शिकायत। ३. अब भी। ४ सौन्दर्य। ५ व्याख्या।

इसकी जान है।......एक शख्स जो मोहब्बतके कारन ऐशो-आरामपर लात मारके और घरबार छोडकर, बेयार व बेखानुमा, आवारा व सरगरदाँ, महबूब[1] की दीवारके नीचे पडा है उसे ताना दिया जाता है कि आरामतलव है और ऐसे आरामतलबको मोहब्बतसे क्या काम ? जब यह आरामतलबी है तो क़यास[2] करना चाहिए कि मोहब्बतकी मुसीबत क्या होगी ?"

उपमाएँ और रूपक :

मीर अलकारवादी नही है। वह अलंकारोका प्रयोग कम ही करते है। वह उन लोगोमे से है जो सौन्दर्यको कृत्रिम उपकरणोसे सजाये बिना, उसके स्वाभाविक सम्मोहनके भक्त है। जहाँ वे अलंकारो—मुख्यत: उपमा रूपक उत्प्रेक्षा आदि—का प्रयोग करते है वहाँ यो करते है कि निगाह स्वाभाविक सौन्दर्यकी तरफ, खुदादाद हुस्नकी ओर, जाती है, इन गहनोकी तरफ नही। ये अलकार उनके यहाँ, सौन्दर्यका अग बनकर रह जाते है। फिर ये अलकार अपनेमे भी बहुत सीधे-सादे है जैसे फूलपर ओसकी बूँदे होती हैं। इन अलकारोके कारण शेरोमे कोई उलझाव पैदा नही होता बलिक वे और चमक उठते है।

उसके गये पे दिलकी ख़राबी न पूछिए,
जैसे किसीका कोई नगर हो लुटा हुआ।

सीधी-सादी उपमा है पर कितनी ठीक बैठती है।

शामहीसे कुछ बुझा-सा रहता है
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिसका।

दुखिया दिलको गरीबका टिमटिमाता दीपक कहकर मीरने कहनेके ढगकी सादगीमे इस रूपकको ऐसा जड़ दिया है जैसे, अँगूठीमे नगीना हो।

---

१. प्रियतम। २ अनुमान।

इनके छोटे सीधे-सादे शेर तो गजबके है —

खिलना कम-कम कलीने सीखा है,
उसकी आँखोंकी नीमखाबीसे।

× ×

नाज़की उसके लबकी क्या कहिए,
पंखड़ी एक गुलाब की-सी है।

बिना अलकारके भी शब्दोकी योजनासे चित्रकारी या अलकरणका उदाहरण देखिए —

जिन्दांमें भी शोरिश[1] न गयी अपने जुनूँकी,
अब संग[2] मुदावा[3] है इस अशुफ्तासरी[4] का।

'असर' लखनवी इस शेर पर मुग्ध होकर लिखते है —"इस शेरमे लफ्ज सग ऐसी जगह वाकअ[5] है कि मालूम होता है एक पाबजजीर[6] दीवानेने, जो हाथमे पत्थर लिये हुए है, पहिला मिसरा पढा और दाँत भीचके आँखे बन्द करके पत्थरसे सिर फोड लिया और लहूमे नहा गया, हालाँकि शेरमे इन अमूर[7] का जिक्र नही।"

संगीतात्मकता :

काव्य और सगीतका सम्बन्ध गहरा है। जिस काव्यमे जितनी ही संगीतमयता होती है उसका प्रभाव उतना ही ज्यादा होता है। चूँकि गजल भी एक प्रकारका गीति-काव्य (लीरिक) है इसलिए उसमे सगीतात्मकता बहुत आवश्यक है। मीरमे काफी सगीतात्मकता है। इसके अनेक स्रोत है जैसे कभी उपयुक्त ध्वन्यात्मक शब्दोको गूँथकर, कभी

---

१ हंगामा। २ पत्थर (जिससे दीवाना अपनेको या दूसरोको मारता है) ३ चिकित्सा, इलाज। ४ पागल दिमागी। ५. स्थित। ६ शृंखलाबद्ध (पाँवमे)। ७. कार्यो, बातो, विषयो।

प्रवाह एवं तीव्रगति-प्रधान छन्दोका प्रयोग करके, कभी तुकान्तकी पुनरुक्ति द्वारा।

नमूने देखिए:—

कुछ मौज़ हवा पेचाँ ऐ मीर नज़र आई।
शायद कि बहार आई, जंजीर नज़र आई।

छन्द-विधान द्वारा सगीतात्मकताके उदाहरण लीजिए.—

सब्र कहाँ जो तुमको कहिए लगके गलेसे सो जाओ।
बोलो न बोलो बैठो न बैठो खड़े-खड़े टुक हो जाओ।

× ×

जब मिलनेका सवाल करूँ हूँ ज़ुल्फोरुख़ दिखलाते हो।
बरसों मुझको यूँ ही गुज़रे सुबह व शाम बताते हो।

× ×

तू भी रवाते कुहनसे सूफ़ी सैरको चल टुक सब्ज़ोकी,
अब्रे सियह[1] क़िबला[2] से आकर झूम पड़ा मैख़ानों पर

× ×

करो तवक्कुल[3] कि आशक़ीमें न यों करोगे तो क्या करोगे ?
अलम[4] जो यह है तो दर्दमन्दो कहाँ तलक तुम दवा करोगे ?

यह छोटी बहरकी गजल देखिए, मालूम होता है, दिल टुकडे-टुकड़े हो रहा है:—

फ़क़ीराना आये सदा कर चले।
मियाँ, खुश रहो हम दुआ कर चले।

---

१. काला बादल। २ काबा। ३. भगवान्के भरोसे अपनेको छोड़ देना। ४. दुख।

कोई नाउमीदाना करते निगाह,
सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले,
परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सबोंकी ख़ुदा कर चले।

× ×

इस अहद[1] में इलाही मुहब्बतको क्या हुआ,
छोड़ा वफ़ाको उनने मुहब्बतको क्या हुआ ?
उम्मीदवार वादए दीदार मर चले,
आते ही आते यारो क़यामतको क्या हुआ ?

× ×

तुकोकी पुनरुक्ति द्वारा संगीतात्मकताका एक उदाहरण नीचे देता हूँ:—

मौसिम है निकले शाखोंसे पत्ते हरे-हरे।
पौधे चमनमें फूलोंसे देखे भरे-भरे।
आगे किसूके क्या करें दस्ते तमअ[2] दराज़[3],
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे।
गुलशनमें आग लग रही थी रँगे गुलसे मीर,
बुलबुल पुकारी देखके साहब परे-परे।

फ़ारसी उक्तियोंका उपयोग :

इन्होंने फारसी उक्तियोंका जगह-जगह प्रयोग करके उर्दू भाषाके प्रयोग-क्षेत्रको विस्तृत किया है। इनके पहले इनके गुरु 'आरज़ू' ने फारसी

१. युग। २ लोभपूर्ण हाथ। ३ फैलाना।

तरकीबों और शब्दोंका काफी प्रयोग किया था। मीरने बचपनमे उनके ससर्गका खूब लाभ उठाया था, इसलिए इनकी भाषा और प्रारम्भिक रचना-प्रणालीपर उनका बहुत असर दिखाई पडता है। वैसे फ़ारसी उक्तियोका थोड़ा-बहुत प्रयोग पुराने उर्दू कवियोंमे से अधिकाशने किया है। मोमिन और गालिबने इस ओर काफी ध्यान दिया है पर मीरकी विशेषता यही है कि उन्होने केवल उन्ही उक्तियोको लिया है जो उर्दूके रचना-विधानमे फिट हो जाती है। फारसी शब्दों एव तरकीबोके प्रयोगमे यह निश्चित रूपसे अपने गुरु, जिनसे बादमे दिल खट्टा हो गया, खाॅ आरजू के ऋणी है क्योकि इन्होने ऐसे अनेक शब्दोका प्रयोग किया है जिनका चलन उठ गया है पर खाॅ आरजूके कोश 'चिरागे हिदायत'मे वे ज्योके त्यो मिलते है, (जब अन्य कोशोमे अप्राप्य है)।

बहर-हाल फारसी तरकीबोका अच्छा प्रयोग मीरमे मिलता है—

सरनशीने रहे मैखाना हूँ, मैं क्या जानूँ,
रस्मे मस्जिदके तईं शेख कि आया न गया।

× ×

हंगामा गर्मकुन जो दिले नासबूर।
पैदा हरएक नालासे शोरे नशूर था।

फारसी मुहाविरों पर उर्दू बन्द लगाकर इन्होने नया आविष्कार किया है। फ़ारसी मुहाविरोके अनुवाद भी इनकी रचनामे पाये जाते है। कुछ उदाहरण लीजिए।

'खुशमनमे आयद' यह फारसीका एक मुहाविरा है। इसका अर्थ होता है, 'मुझे भला नहीं लगता।' मीर साहब इसी मुहाविरेको उर्दूके साॅचेमे यो ढालते है —

नाकामी[1] सदहसरत[2] ख़ुश लगती नहीं वर्ना,
अब जीसे गुज़र जाना कुछ काम नहीं रखता ।

इसी प्रकार 'नमूद करदन' फारसीका एक फिकरा है। इसका अर्थ है 'प्रकट करना'। मीर लिखते है —

नमूद[3] करके वहीं वहरेग़म[4] में बैठ गया,
कहो तो मीर भी एक बुलबुला था पानीका ।

अनेक स्थानो पर इनमे फारसी कवियोके काव्यकी छाया भी दिखाई पडती है। कही-कही तो दोनो एकदम टकरा गये है। उदाहरण लीजिए —

किसी कविका फारसी शेर है —

बगिर्दे तुरवतम अमश्व हुजूम बुलबुल बूद ।
मगर चिराग़े मज़ारम ज़रोग़ने गुल बूद ।

मीर साहबने भी वही बात कही है मगर खूब कही है —

जाय रोग़न दिया करे है इश्क,
ख़ूने बुलबुल चिराग़में गुलके ।

वेदिलका एक फारसी शेर है —

ज़िन्दगी बरगर्दनम उफ़्ताद वेदिल चारानेस्त,
शाद-बायद ज़ीस्तन नाशाद बायद ज़ीस्तन ।

मीर साहब कहते है —

गोशागीरी अपने बसमें है न है आवारगी,
क्या करें यों मीर साहब, बन्दगी बेचारगी ।

---

१. असफलता । २. बहुत (सौ) अफसोस है। ३. प्रकट । ४. दु ख-सागर ।

'सादी' का शेर है.—

दोस्तां मनअ कुनिन्दम कि चरा दिल बुतो दादम,
बायद अव्वल बतू गुफ़्तन कि चुनीं ख़ूब चराई।

मीर कहते है —

चाहनेका हम पै यह खूबाँ जो धरते हैं गुनाह,
इनसे भी पूछो कोई तुम इतने क्यों प्यारे हुए।

इन्होने इस क्षेत्रमे भी अपने ऊपर कुछ नियम और बन्धन बना लिये है, ऐसा नही कि गालिबकी भाँति जो मनमे आया लिख मारा।

भारतीय वातावरण और देशज शब्दोंका प्रयोग :

खुद फारसीके कवि और लेखक होकर भी 'मीर'ने खुल कर देशज शब्दोका प्रयोग किया है जिससे भारतीयताका स्पर्श और वातावरण इनके काव्यमे मिलता है। साँझ, समय, विश्राम, योगी, बिस्तार, निदान, अन्धा-धुध, राम-कहानी, गूदड, चोट्टे, स्वभाव, ठिठुरा गयी, अच्छर (अक्षर) इत्यादि अनेकानेक शब्द ऐसे मजेसे इनकी जुबानमे खप गये है कि क्या कहे। दु.ख यही है कि बादमे यह प्रवृत्ति उर्दू काव्यमे कम होती गयी; फारसी और अरबीका प्रभाव बढता गया जिससे उर्दूमे एक विदेशी वाता-वरण पैदा हुआ और वह अन्य भारतीय भाषाओसे दूर होती गयी। पिछले २५–३० वर्षोमे गीत लिखने वाले कवियो तथा फिराक जैसे उर्दू शायरों ने इसे फिर भारतीय वातावरणमे लानेका प्रयत्न किया है। मीरके प्रयोग देखिए·—

दिन आजका भी साँझ हुआ इन्तज़ारमें।

× ×

इस समयमें देखने हमको बहुत आया करो।

× ×

क्या बात थी कि जिसका यह विस्तार हो गया।

× ×

सुबहे पीरी शाम होने आई मीर,

तू न चेता यां बहुत दिन कम रहा।

अँधाधुन्ध रोते है आँखोंसे ख़ूँ।

× ×

अच्छर हैं तो इश्क़के दो ही लेकिन है विस्तार बहुत।

यह सिर्फ कुछ शब्दोके प्रयोगकी ही बात नही है। इनकी दृष्टिमे भी गहराई एव विशालता थी। हिन्दू-मुसलमानके भेदसे वह परे थे। उनमे सूफियो और सतोका रंग था। वह दैरो-हरमकी पाबन्दियोसे परे प्रेममे डूबे हुए थे और अकबराबाद और दिल्लीकी जमीनके प्रति उनकी गहरी निष्ठा थी। इन चीजोने उनके काव्यको भारतीय रूप दे दिया है।

काव्य-दृष्टि :

मै बार-बार लिख चुका हूँ कि व्यथानुभूति इनके समस्त काव्यकी जान है। वह शायरीको कोई पेशा नही मानते थे वर एक 'संस्कृत-कला' मानते थे और उनका कहना था कि जब तक इसानमे दिलका दर्द पैदा नही होता तब तक उसका इधर निगाह करना भी जुर्म है। उर्दू काव्यको यह दर्दसे भरी दृष्टि देकर 'मीर'ने उसे निहाल कर दिया है। पर इतना ही बस नही है, उन्होने भाषाकी स्वाभाविक गति और उसकी प्राकृतिक प्रेरणाओको भी ग्रहण किया है। इसीलिए वे ऐसे ही शब्द चुनते है जिनपर तैरते हुए उनके भाव दिलोमे प्रवेश कर जायँ। फारूकीके शब्दोमे "यह अशआर नही, शर्बतके घूँट है, गजले नही, मीठी-मीठी बाते है। वह लफ्जको बेजान और बेरूह चीज नही समझते थे।" उनका ऐसा प्रयोग करते है जैसे शब्द वहीके लिए बनाया गया हो।

तसव्वुफ़का रंग :

इन्हे हम सूफी तो नही कह सकते पर इनपर इनके पिता, चचा एवं दूसरे दरवेशोके सत्सगसे तसव्वुफका गहरा प्रभाव पडा है। दर अस्ल यह प्रेमके कवि है। जो सस्कार इन्हे पिता, चचा इत्यादिसे मिले उसके कारण यह विलासिताके रूपमे बिकनेवाले बाजारू प्रेमसे दूर रहे पर यह भी सच है कि इनका प्रेम ईश्वरीय प्रेम उतना नही जितना मानवीय है। बल्कि इनका मानवीय प्रेम ही ईश्वरीय प्रेमकी कोटि तक पहुँच गया है। जैसे :—

परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सबोंकी ख़ुदा कर चले।

तुम्हारी इतनी उपासना की है कि सबकी दृष्टिमे तुम्हे ही ईश्वर बना दिया है।

प्रेमका रंग इनपर इतना गहरा है कि हर जगह उसे ही देखते है :—

इश्क़ ही इश्क़ है जहाँ देखो,
सारे आलममें भर रहा है इश्क़।
इश्क़ माशूक़ इश्क़ आशिक़ है,
यानी अपना ही मुब्तला है इश्क़।

× ×

कहीं बन्दा कहीं ख़ुदा है इश्क़।

× ×

आरज़ू इश्क़ मुद्दआ है इश्क़।

× ×

मुहब्बत ही इस कारख़ानेमें है।
मुहब्बत ही सब कुछ ज़मानेमें है।

तसव्वुफका मूलाधार सर्वग्राही प्रेम ही है—वह प्रेम जिसमे द्वन्द्व (दुईका भाव) उठ जाता है, शत्रु-मित्रका भेद-भाव दूर हो जाता है। उर्फीका यह कथन कि उसकी निगाहमे 'परवाना चिराग हरमोदेर नदानद' (शलभ और दीपक, मन्दिर, मस्जिदमे भेद नही) मीरमे इसका हलका रग है :—

मज़हबसे मेरे क्या तुझे, मेरा दयार और।
मैं और, यार और, मेरा कारबार और।

× ×

किसको कहते है नहीं मैं जानता इस्लामो कुफ़्र,
देर हो या काबा मतलब मुझको तेरे दरसे है।

इसके अतिरिक्त इनके काव्यमे तसव्वुफकी गहराईके भी अनेक रग मिलते हैं। यह 'लाहूत' (आराध्यमे विलीन होनेकी अवस्था) का रंग देखिए :—

बेख़ुदी. ले गयी कहाँ हमको
देरसे इन्तज़ार है अपना।

× ×

ख़बर कुछ तो आई है उस बेखबर तक।

हृदयकी पूजा चल रही है। इसमे ज्ञात होता है कि सब खजाना इसी दिलमे छिपा है। इस दिलकी आग अगर प्रज्वलित कर दी जाय तो इस विद्युत्का एक कण सौ कोहे तूरके वरावर हो सकता है। कहते है :—

गाफ़िल थे हम अहवाले दिले खस्तासे अपने,
वह गंज[1] इसी कुंजे ख़राबामें निहाँ[2] था।

---

१. खजाना। २. छिपा।

आतिश[1] बुलन्द[2] दिलकी न थी वर्ना ऐ कलीम[3] !
यक शोला[4] बर्क़[5] खिरमने सद[6] कोहे तूर[7] था।

× ×

तरीक़े इश्क़में है रहनुमा[8] दिल।
पयम्बर[9] दिल है क़िबला[10] दिल ख़ुदा दिल।

इस रहस्यात्मकताको देखिए :—

अपने ख़याल हीमें गुज़रती है अपनी उम्र
पर कुछ न पूछो समझे नहीं जाते हमसे हम।

उनके और हमारे बीच यह जीवन ही एक परदा है। 'हम' न हो तो फिर इस लज्ज़ावरणकी क्या जरूरत ?

हस्ती[11] अपनी है बीचमें पर्दा,
हम न होवें तो फिर हिजाब[12] कहाँ ?

× ×

तत्त्व-ज्ञान और जीवन-दृष्टि :

मीरने तेजीसे दुनियामे होने वाले परिवर्तनोंको देखा। इससे जीवनकी अस्थिरता एव ससारकी असारता उनके दिल पर जम गयी। वह समझते

---

१. आग। २. ऊँची। ३. ईश्वरसे बाते करनेवाला (हजरत मूसा)। ४ लपट। ५ विद्युत्। ६ सौ। ७. शाम देशका एक पर्वत जहाँ हजरत मूसाको ईश्वरीय ज्योति दिखाई पड़ी थी। ८ मार्गदर्शक। ९ सदेशवाहक। १० काबा। ११. अस्तित्व। १२ परदा, आड, लज्जा।

है कि दुनियामे चल-चलाव लगा है; यहाँ थोडा विश्राम है,—चद दिन रहना है। यह जीवन मजिल नही, राह है।

यह मंजिल नहीं, बेख़बर ! राह है।

फूलकी कली जैसे क्षण भरके लिए मुसकराती है, एक बिजली चमक कर रह जाती है, वैसे ही यह जीवन क्षणस्थायी है—जल बुद्‌बुदके समान। यह विलासिताकी दुनिया मृगतृष्णा है।

सैरकी हमने हर कहीं प्यारे।
फिर जो देखा तो कुछ नहीं प्यारे।

अभिलाषाओकी भूमि कभी हरी नही होती, इसलिए उनके बीज बोना बन्द कर .

सब्ज़[1] होती ही नहीं यह सरजमीं[2],
तुख्मे ख़ाहिश[3] दिलमें तू बोता है क्या ?

मृत्युके बारेमे कहते है —

मर्ग एक माँदगीका वक़्फ़ा है,
यानी आगे चलेगे दम लेकर।

विविध विशेषताएँ :—

मीरके जीवन एव काव्यमे अनेक प्रकारकी विशेषताएँ है।

१ यह धर्मसे फकीर या दरवेश नही थे पर दिलकी रुझानसे फकीर ही थे। २ फकीर होते हुए भी मस्त रहते थे और किसीके आगे हाथ फैलाना पाप समझते थे। कहते है .—

---

१. हरी। २. भूमिखण्ड। ३. अभिलाषाके बीज।

आगे किसीके क्या करें दस्ते तमअ दराज़,
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे।

अत्यन्त स्वाभिमानी थे, किसीके आगे सिर न झुकाते थे। खुद फाका-मस्त थे पर साहस यह कि बडीसे बड़ी चीजको सहज भावसे ठुकरा सकते थे। आबेहयात (अमृत) के लिए तिरस्कारपूर्वक कहते है :—

आबेहयात[1] वही न जिसपर खिज्रो[2] सिकन्दर मरते थे।
ख़ाकसे हमने भरा वह चश्मा[3], यह भी हमारी हिम्मत थी।

३ वह नियतिवादी थे। यह मानते थे कि नियति अपने पूर्वनिर्दिष्ट पथ पर हमे चलाती है, इसलिए दु.ख-सुखको अनासक्त होकर ग्रहण करना चाहिए। ४ फिर उनका कथन यह भी है कि हम दु खी हों या सुखी, हमे किसीका दिल न दुखाना चाहिए और ऐसा काम कर जाना चाहिए कि लोग याद करे। किसीके दिलमे जगह करनेको यह मानवका महान् गौरव मानते थे। कहते है '—

काबा पहुँचा तो क्या हुआ ऐ शेख़ !
सई[4] कर टुक पहुँच किसी दिलको।

५ वह विशालहृदय, विशाल सहानुभूतियोके प्राणी थे। साम्प्रदायिक वन्धनोको तुच्छताकी दृष्टिसे देखते थे। ६ किसीके बुराई करने पर भी भलाई करनेकी ही आकाक्षा रखनी चाहिए :—

कोई गाली भी दे तो कह भला भाई भला होगा।

---

१ अमृत। २ खिज्र = एक पैगम्बर जिनके बारेमे प्रसिद्ध है कि इन्होने अमृत पिया है और अमर है। भूले-भटकोको राह दिखाया करते है। ३ स्रोत। ४. श्रम।

७ मनुष्यको सर्वोपरि मानते थे। ८ खुदा और बन्देमें थोड़ा ही अन्तर मानते थे :—

सरापा[1] आरज़ू होनेने बन्दा कर दिया हमको,
वगर्ना हम ख़ुदा थे गर दिले बेमुद्दआ होते।

ऊपरसे नीचे तक अभिलाषाकी मूर्ति होनेके कारण ही हम बन्दा हो गये। अगर हमारा हृदय अनासक्त, निरभिलाष होता तो हमी खुदा होते।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उनका जीवन और उनका काव्य एक ही स्रोतसे निकलकर बहा है।



१. ऊपरसे नीचे तक।

मीर-काव्यके सिद्धान्त एवं विषय



मीरके काव्य-सम्बन्धी कुछ सिद्धान्त थे। वह मानते थे कि एक उच्चकोटिके कविका अपने लिए कुछ ऐसे नियम और सिद्धान्त बाँध लेना आवश्यक है जिनके द्वारा उसका काव्य दूसरे कवियोके काव्यसे भिन्न पडे। इस सम्बन्धमे वह निम्नलिखित विचारोके समर्थक थे।

१. काव्य-रचना शिष्ट एवं संस्कारी व्यक्तियोंका कार्य है। मीर मानते थे कि काव्य-रचनाके लिए मनुष्यके अन्दर उच्च सस्कार होने चाहिएँ। उनकी दृष्टिसे यह काम शरीफोका है, ओछी तबीयत वालोको इस रास्ते चलना ही न चाहिए। अपनी एक मस्नवीमे कहते हैं —

सोहबतें जब थीं तो यह फ़न्ने शरीफ़।
कस्ब[1] करते जिनकी तबई थीं लतीफ़।
थे ममीज़[2] वो दरमियाँ इंसाफ़ था।
ख़ारो खस[3] से क्या यह उर्स[4] साफ़ था।
दख़्ल इस फ़नमें न था इजलाफ़[5] को।
कुछ बताते भी थे सो अशराफ़[6] को।
थे जो उस अध्यायमें उस्तादे फ़न[7]।
नाक़िसों[8] से वे न करते थे सख़ुन[9]।

---

१ पेशा। २ विवेचक, विवेकवान्। ३ कुश-कर्कट। ४. मैदान, क्षेत्र। ५ निम्न कोटि। ६ शिष्ट। ७. काव्यगुरु। ८ तुच्छ। ९. बात।

हम तलक भी थी वही रस्मे क़दीम[1] ।
यानी जिनके होते थे ज़ेहने सलीम[2] ।
प्यार करते थे उन्हें उस्तादे फ़न ।
उनके होते रहबरे राहे सखुन[3] ।
जुल्फ़ वाँ ज़िनहार पाते थे न बार ।
शायरी काहे का था उनका शुआर[4] ।
नुक्ता परदाज़ी[5] से इजलाफोंको क्या ?
शेरसे बज़्ज़ाजों नद्दाफ़ों[6] को क्या ?

साफ कहते है कि जव सभा-सगत होती थी तव यह शिष्ट लोगोकी कला थी । इस पेशेमे वही आते थे जिनकी तवीयत हाज़िर होती थी । वे लोग विवेकी थे, उनके वीच न्याय था । उस समय यह मैदान, यह क्षेत्र कुश-काँटे से साफ था । निम्नकोटिके लोगोका इसमे प्रवेश ही न हो पाता था । गुरु-जन बताते भी थे तो शिष्ट-सभ्य लोगोको ही बताते थे। उस ज़मानेमे इस कलाके आचार्य तुच्छ लोगोसे बात न करते थे। हमारे जमाने तक भी वह प्राचीन परम्परा चली आ रही थी । अर्थात् जिनकी प्रज्ञा परिष्कृत होती थी उन्हे ही काव्य-कलाके आचार्य प्यार करते थे और उनके काव्य-मार्गके पथ-दर्शक वनते थे। तुच्छ लोगोकी इस ओर गुजर न थी । काव्य-एव उच्चकल्पनासे वजाजो एव धुनियोको क्या मतलव ?"

स्पष्ट ही वह अपने समयकी रुद्ध होकर भी लोगोके हृदयमे घुसी सामन्ती विचारधाराके प्रतिनिधि थे। आजके युगमे ऐसे विचार आश्चर्य-जनक और प्रतिगामी प्रतीत होते है पर यह भी सच है कि काव्य-रचना को कारखानोकी तरह जो भी उसमे आवे उसका कार्यक्षेत्र नही बनाया जा

---

१ प्राचीन परम्परा। २ परिष्कृत प्रज्ञा। ३, काव्य-मार्गके पथदर्शक। ४ कार्य। ५. अर्थगाभीर्य। ६. धुनियो।

सकता। इसके लिए कल्पनाकी उड़ान, गहरी सूझ, सतहके अन्दर देखने वाली आँखों और दर्दभरे दिलकी जरूरत पड़ती है।

२. **बौद्धिक योग्यताकी आवश्यकता**—दूसरी चीज, जो उनके विचारसे काव्य-रचनाके लिए आवश्यक है बौद्धिक योग्यता है। बौद्धिक योग्यतासे मीरका अभिप्राय ज्ञान, सूझबूझ और कला-सम्बन्धी जानकारीसे है। जब तक एक ओर विशद जानकारी और दूसरी ओर उसको कल्पनाके पखोपर उड़ानेकी तैयारी न होगी तब तक श्रेष्ठ काव्यका जन्म ही नही हो सकता।

३. **भाषा**—मीर मानते है कि शेरमे भाषा और रोजमर्रा बिल्कुल स्पष्ट एवं सरल होना चाहिए। प्रवाह, रवानी, धारामे किसी भी मूल्यपर कमी न आने देनी चाहिए। मँजी साफ जबान हो। अपनी जबानको वह प्रमाण मानते थे और इसके सम्बन्धमे जगह-जगह गर्व-पूर्वक जिक्र किया है.—

गुफ़्तगू[1] रेख़तेमें हमसे न कर।
यह हमारी ज़बान है प्यारे।

उपदेश देते है, सलाह देते है.—

हुस्न[2] तो है ही करो लुत्फ़े ज़बाँ भी पैदा,
मीरको देखो कि सब लोग भला कहते हैं।

× ×

देखो तो किस रवानी[3] से कहते हैं शेर मीर,
दुर[4] से हज़ार चन्द है उनके सखुनमें आब[5]।

अर्थात् प्यारे, यह हमारी जबान है। इसमे हमसे क्या बात करता

---

१. बात-चीत। २. सौन्दर्य। ३. प्रवाह, गति। ४. मोती। ५ पानी, चमक।

है ? तुझमे सौन्दर्य तो है पर भापाका आनन्द, भापाकी सुषमा भी तो पैदा कर, उसीके कारण तो सब लोग 'मीर' को भला कहते हैं । जरा देखो, किस गति और प्रवाहके साथ मीर शेर कहते है । उनके काव्यमे मोतीसे भी ज्यादा 'पानी' है ।

४. **वैलक्षण्य**—काव्यमे कहनेका कोई विशेप ढग—अन्दाजे बयाँ—और कोई विलक्षणता होनी चाहिए ।

ज़ुल्फ़-सा पेचदार है हर शेर,
है सखुन मीरका अजब ढबका ।

× ×

शेर मेरे हैं सब ख़वास पसन्द[1],
पर मुझे गुफ़्तगू अवाम[2] से है ।

५. **फ़ारसी तरक़ीबोंकी सीमा**—उनके विचारसे शेरमे वही तरकीबे लाना जायज[3] है जो ज़बान पर बार[4] न हो ।' यानी विजातीय फ़ारसी उक्तियोको, जो हमारी भापामे खप न सके और उसपर बोझ बन कर रह जायँ, प्रयुक्त न करना चाहिए । उनका यह भी कहना है कि इसका मर्म विवेकी कवि ही समझ सकते है ।

६. **ऐहामके प्रति अरुचि**—उस समयकी शायरीमे ऐहाम[5] का बड़ा जोर था पर मीर उसे अधिक महत्त्व न देते थे । अपने काव्यके विपयमे कहते हुए प्रकारान्तरसे व्यंग करते हैं.—

---

१ विशेप लोगोको प्रिय । २. जन-साधारणके प्रति वार्ता । ३ उचित, विहित । ४. बोझ । ५. ऐहाम—काव्य-शिल्पका वह रूप है जिसमे कवि श्लिष्ट शब्दोका प्रयोग करता है—एक निकट अर्थबोधक, एक दूरागत अर्थवोधक । लगता है निकटकी बात कह रहा है पर दरअस्ल दूरकी बात होती है ।

क्या जाने दिलको खींचे हैं क्यों शेर मीरके,
कुछ तर्ज़ ऐसी भी नहीं ऐहाम भी नहीं।

७. घृणाकी भावनाका त्याग--काव्यमे घृणाकी भावना कही न आनी चाहिए।

८. मुहाविरोंका उचित प्रयोग--मुहाविरोका उचित प्रयोग तो करना ही चाहिए, साथ ही उनमे परिवर्तन भी नही करना चाहिए—यह कविकी असमर्थताका सूचक है। इसका उदाहरण देते हुए मीर सज्जाद के निम्नलिखित शेर पर उन्होने आपत्ति की है:—

मेरा जला हुआ दिल मिज़गां[1] के कब है लायक़,
इस आबलेको क्यों तुम काँटोंमें ऐंचते हो?

मुहाविरा है तुम काँटोमे क्यो घसीटते हो, मीर साहबने उसे बदल दिया है। वह कहते हैं कि मेरा जला हुआ दिल दृगचल, पलकों, बरौनियों के लायक कहाँ है। इस फफोलेको तुम काँटोमे क्यो घसीटते हो पर मुहा-विरा छदके चौकठेमे फिट नही होता था इसलिए उन्होने उसे बदल दिया। यही उनका, काव्यका दोष है।

९. काव्यकी बाह्य सज्जा--मीरने काव्यकी बाह्य सज्जा पर एक सीमा तक ही जोर दिया है। बहुत ज्यादा अलकरणसे जैसे नारी बनी हुई-सी लगती है वैसे ही काव्य भी उससे बोझिल हो जाता है, चल नही पाता, उसकी गति रुकती है और स्वाभाविक सौन्दर्यमे शिथिलता आती है।

१०. भावार्द्रता--शेर जजबाते दिल—हृदयके भावो—का आईना होना चाहिए। जो कुछ कहा जाय वह श्रोताके दिलमे पैठ जाना चाहिए जैसे आत्मा और शरीर एकमे गुँथे हुए है वैसे ही शेरमे भावार्द्रता होनी

---

१ दृगंचल, बरौनी।

चाहिए। वही आत्मा है। अन्दरका रस, अन्दरकी बात, प्राणोका स्वर काव्यमे होना चाहिए। काव्य अन्त वेदनाका पर्दा मात्र है —

क्रिया था रेखता पर्दा सखुनका,
सो ठहरा है यही अब फ़न हमारा।

× ×

इस परदेमें ग़मे दिल कहता है मीर अपना,
क्या शेरो शायरी है यारो शुआरे आशिक़ ?

× ×

मुझको शायर न कहो मीर कि साहब मैंने,
दर्दोग़म कितने किये जमा तो दीवान किया ?

× ×

बे सोज़े दिल किन्होंने कहा रेख़ता तो क्या ?

११. गुलो बुलबुलकी सीमा तोड़ो--उनका विचार है कि शायरीको सिर्फ गुल व वुलवुलके अफसानो[1] तक महदूद[2] न होना चाहिए वल्कि वह उससे वहुत वसीअ[3] चीज है। इसी बिना पर उन्होने 'नकातुश्शुअरा' मे यह कहकर आपत्ति की है—"हरचंद उर्सए सखुन ओ हमीं दर लफ्ज़हाए गुल व बुलबुल तमाम अस्त। बिसियार अमा बरंगीनी मी गुफ़्त।"[4]

काव्य-विषय

मीरका काव्य प्रमुखत हार्दिक वेदना, विरह और रोदनका काव्य है पर इसके साथ ही उसमे जिन्दगीकी उच्चताका राग भी है। वेदना उन्हे

---

१. किस्सो, कथाओ। २ सीमित। ३. विस्तृत। ४. 'आसी' कुल्लियातके भूमिका भागमे।

नष्ट नही करती, जीवन-मार्ग पर चलनेकी शक्ति देती है। उनके चित्रोका क्षेत्र बहुत व्यापक है। प्रमुखतः उनके काव्यमे निम्नलिखित विपयोंका वर्णन है:—

१. सौन्दर्य एवं प्रेमकी विविध अवस्थाएँ तथा मानवी एवं ईश्वरीय प्रेमकी घटनाएँ।
२. कामनाएँ और उनका तत्त्वचिन्तन।
३ वचन-वैलक्षण्य।
४. कष्टों-दु:खोकी तीव्र अनुभूतियाँ और उनकी अभिव्यक्ति।
५. प्रेमल व्यग।
६ उच्च कल्पनाशील उडान।
७. हास्य।
८. संसारकी अस्थिरता।

काव्यकी विशेषताओका वर्णन पहिले ही किया जा चुका है। पर निम्नलिखित वाते उसमे विशेप रूपसे पाई जाती है —

१. भाषाकी सरलता एवं स्वच्छता।
२. रोजमर्रा और मुहाविरोकी सफाई।
३. शब्दोमे सगीतात्मकता और गति।
४ व्यापक ज्ञान।
५ फारसी उक्तियोक़ा सुन्दर प्रयोग।
६. सूक्ष्म रूपक उपमाएँ एव उत्प्रेक्षाएँ।
७ स्पष्टता।
८. छन्दोंकी विविधता।

मीर-काव्य : कुछ विशेषताएँ

●

उर्दू काव्यमे एकसे एक शायर हुए है पर 'मीर' का स्थान आज तक किसीको प्राप्त नही हुआ। उर्दू साहित्यका कोई इतिहास, कोई सग्रह, कोई आलोचना ऐसी नही है जो 'मीर' की कविताके प्रति गहरी प्रगसासे रिक्त हो। काव्यानुरागियोने उन्हे "खुदाये सखुन" (काव्यके ईश्वर) कहा और छोटे-बडे सबने उनके चरणोमे श्रद्धान्जलि दी। उस्ताद 'जौक' ने लिखा —

बहुप्रशंसित मीर-काव्य

न हुआ, पर न हुआ 'मीर'का अन्दाज़ नसीब,
'ज़ौक' यारोंने बहुत ज़ोर ग़ज़लमें मारा।

और उर्दूके महाकवि 'गालिब'ने कहा —

अपना भी यह अक़ीदा[1] है बक़ौले नासिख़,
आप बेबहरा[2] है जो मोतक़िदे[3] मीर नही।

अर्थात् नासिखकी तरह मेरा भी विश्वास है कि जो मीरकी प्रतिभाका कायल नही वह अज्ञान है, अशिक्षित है, मूर्ख है।

आधुनिक उर्दू कवियोने भी, इसी प्रकार, 'मीर' की प्रशसा की है। देखिए —

---

१ विश्वास। २. अज्ञान। ३ श्रद्धालु।

शेर मेरे भी हैं पुर-दर्द वलेकिन 'हसरत',
'मीर' का शेवए-गुफ़्तार कहाँसे लाऊँ ?

—हसरत मोहानी

मैं हूँ क्या चीज़ जो इस तर्ज़ पे जाऊँ 'अकबर',
नासिख़ो ज़ौक़ भी जब चल न सके 'मीर' के साथ ।

—अकबर

बड़ी मुश्किलसे तक़लीदे जनाबे मीर होती है ।

—नूह नारवी

इनकी कविताकी इतनी धूम थी कि लोग उसे उपहारकी भाँति एक शहरसे दूसरे शहर, अपने यार-दोस्तों और सम्बन्धियोको भेजते थे। मुहम्मद हुसेन 'आजाद' ने 'आबेहयात'मे लिखा है:—"क़द्रदानीने इनके कलामको जवाहिर और मोतियोकी निगाहो देखा और नामको फूलोंकी महक बनाकर उड़ाया । हिन्दुस्तानमे यह बात इन्हीको नसीब हुई है कि मुसाफिर गजलोको तोहफेके तौरपर शहर-से-शहरमे ले जाते थे ।" न केवल उत्तर भारत बल्कि दक्षिण तक इनकी कविता पहुँच गयी थी ।

स्वभावतः उन्हे अपनी जबान और अपनी कवितापर अभिमान था । ये उनके जीवनका अग बन गयी थी । अपनी जवानीमे वह अफवाहकी तरह

प्रसिद्धि

प्रसिद्ध हो गये थे । जिधरसे निकलते लोग उनका अनुसरण करते थे । वह खुद लिखते है.—

यह 'मीर' सितमकुश्ता[1] किसू वक़्त जवाँ था,
अन्दाज़े सखुनका सबबे-शोरो-फ़ुग़ाँ था ।

---

१. अन्यायसे कटा हुआ ।

जादूकी पुड़ी परचये अबयात[1] था उसका,
मुँह तकते ग़ज़ल पढते अजब सेहरे बयाँ[2] था।
जिस राहसे वह दि़लज़द़ह दि़ल्लीमें निकलता,
साथ उसके क़यामतका सा हंगामा रवाँ[3] था।

वडे जोगसे पढते थे, दिलमे दर्द था, उसके कारण तवीयतमे एक अजव रवानी थी —

मीर दरिया है, सुने शेर ज़बानी उसकी,
अल्ला अल्ला रे तबीयतकी रवानी उसकी।
एक है अहदमें अपने वह परागन्दा मिज़ाज[4],
अपनी ऑखोंमें न आया कोई सानी[5] उसकी।
मर्सिये दिलके कई कहके दिये लोगोंको,
शहर दिल्लीमें है सब पास निशानी उसकी।

फिर दिल्ली ही क्यो दक्षिणमे भी इनके काव्यकी धूम थी.—

सरसब्ज़ मुल्के हिन्दमें ऐसा हुआ कि 'मीर',
यह रेखता लिखा हुआ तेरा दकन गया।

× ×

कुछ हिन्द ही में मीर नहीं लोग जेवचाक,
है मेरे रेखतोंका दिवाना दकन तुमाम।

इनकी गजले महफिलोमे सुनकर लोग झूमते थे और फ़कीरोकी कुटियोमे वे प्रतिध्वनित होती थी —

---

१. शेरोका पर्चा। २. जिसके बयानमे जादू हो। ३ जारी। ४ अस्तव्यस्तमना। ५ जोड़।

मतरिब[1] से ग़ज़ल मीरकी कल मैंने पढ़ाई,
अल्ला रे असर सबके तईं रफ़्तगी[2] आई।
जिस शेरपर समाअ था कल खानक़ाह[3] में,
वह आज मैं सुना तो है मेरा कहा हुआ।

इन बातोंके कारण इनका स्वाभिमान बढता गया। संस्कृत कवियोकी भाँति इनकी गर्वोक्तियाँ भी प्रसिद्ध हैं —

रेखता रुतबेका पहुँचाया हुआ उसका है,
मोतक़िद कौन नहीं 'मीर'की उस्तादीका।

× ×

जो देखो मेरे शेरे तरकी तरफ़,
तो मायल[4] न हो फिर गुहर[5] की तरफ़।

× ×

पढ़ते फिरेंगे गलियोंमें इन रेख़तोंको लोग,
मुद्दत रहेंगी याद ये बातें हमारियाँ।
रेख़ता ख़ूब ही कहता है जो इन्साफ़ करो,
चाहिए अहले सखुन 'मीर'को उस्ताद करें।
न रक्खो कान नज़्मे शायराने हाल[6] पर इतने
चलो टुक मीरको सुनने कि मोतीसे पिरोता है।

× ×

१. गायक। २ बेहोशी। ३. फ़कीरो, दरवेशोंका आश्रम। ४. आकर्षित। ५. मोती। ६. आजके कवियोकी कविता न सुनो।

दिल किस तरह न खींचें अशआर[1] रेख़तेके,
बेहतर किया है मैंने इस ऐबको हुनरसे।

रेख़ताके निर्माणमे इनका बड़ा हाथ है.—

रेख़ता काहे को था इस रुतबए आला[2] में मीर,
जो ज़मीं निकली उसे ता आस्मां मैं ले गया।

काव्य-रचनाको वह मानवका श्रेष्ठ गुण मानते थे। कहते हैं—

ऐ मीर शेर कहना क्या है कमाले इंसाँ,
यह भी ख़याल-सा कुछ ख़ातिरमें आ गया है।

अपनी जबान पर इनको नाज था, उसे यह प्रमाण मानते थे.—

अव्वल तो मैं सनद हूँ फिर यह मेरी ज़ुबाँ है।

× ×

यह हमारी ज़ुबान है प्यारे।

इस प्रकार हम देखते है कि अपने ही समयमे यह इतने प्रसिद्ध हो गये थे कि समाजके हर वर्गके लोग इनकी कविता सुननेको उत्सुक रहते थे।

क्या कारण है, इस लोकप्रियताका? इनके समयमे भी बड़े-बड़े उर्दू शायर थे, खूब कहते थे, रूपक और अतिशयोक्तिसे भरी सूक्तियाँ कहनेवालोकी कमी न थी। पर मीरकी जबान किसीको नसीब न हुई। कोई ऐसी अद्भुत बात भी नही कहते थे फिर भी लोग सुनते थे और सिर धुनते थे। लोग भी कहते थे और ख़ुद मीर भी कहते है कि पता नही मीरके शेर क्यो दिलको खीचते है.—

भाषाकी जादूगरी

---

१. शेरका बहुवचन। २ उच्चपद।

क्या जानूँ दिलको खींचे हैं क्यों शेर मीरके ,
कुछ ऐसी तर्ज़ भी नहीं ऐहाम भी नहीं ।

सबसे पहिली बात जो इनके काव्यमे है, इनकी भाषाकी सादगी है। यों कहते है, मानों बात कर रहे है। और यही चीज है जो गजलको गजल रखती है। फिर-भाषा भावोके सर्वथा अनुरूप है। जबान और उससे अदा होनेवाली दर्दभरी भावना यो मिल गयी है जैसे रग और पानी एकमे मिला दिये गये हो कि फिर उनको अलग करना मुश्किल हो। इस तरह यह सीधे-सादे शब्दोमे गहरी, दिलको हिला देनेवाली, गजलकी बातें कर जाते है --

यह जो चश्मे पुरआब हैं दोनों ।
एक ख़ाना ख़राब हैं दोनों ।

× ×

मैं जो बोला तो बोले यह आवाज़
उसी ख़ानाख़राब की-सी है ।

दोनो शेर दिलसे टकराते है। सुननेवालेके मुँहसे एक आह निकल जाती है। मन करुणासे आर्द्र हो जाता है। पर विश्लेषण करनेपर इनमे कोई विचित्रता नही मालूम पडती। न इनमे विपयकी नवीनता है, न कोई अद्भुत कल्पना है, न कोई विशिष्ट जीवन-दर्शन है, फिर भी सब मिलाकर इनका एक अद्भुत प्रभाव पडता है। दिल तिलमिला उठते है।

इनकी जबान इनकी अपनी है। इन्होने उसमे भारतीय वातावरणको ऐसा मिला दिया है कि शब्दोका प्रभाव दुगुना हो गया है। इसीलिए वह सलाह भी देते है.—

हुस्न तो है ही करो लुत्फ़े ज़बाँ भी पैदा ,
मीरको देखो कि सब लोग भला कहते है ।

भाषाकी सादगी तो गजबकी है, इसलिए उसमें एक कुमारीत्वका सौन्दर्य और पवित्र आकर्पण है —

शामसे कुछ बुझा-सा रहता है,
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस[1] का।

× ×

करो फिक्र मुझ दिवाने की।
धूम है फिर वहार[2] आनेकी।

× ×

कहते हो इत्तिहाद[3] है हमको ?
हाँ, कहो एतमाद[4] है हमको।
आह किस तरह रोइए कम कम,
शौक़ हदसे जियाद है हमको।

× ×

अबके जुनूँ[5] में फ़ासला शायद न कुछ रहे,
दामनके चाक और गरेबाँ[6] के चाकमें।

× ×

दिल किस क़दर शिकस्ता[7] हुआ था कि रात मीर,
आई जो बात लब[8] पे सो फरियाद हो गयी।

× ×

कहते तो हो यूँ कहते यूँ कहते जो वह आता,
यह कहनेकी बातें है ? कुछ भी न कहा जाता।

---

१ गरीब, अकिञ्चन। २. वसन्त। ३ मेलजोल, मैत्री। ४ विश्वास। ५ उन्माद। ६ गले। ७. टूटा हुआ, भग्न, खडित। ८. ओठ।

इस प्रकार इनकी सादी अलकार-विहीन भाषामे वही आकर्षण है जो किशोरिकामे होती है—उस किशोरीमे जिसमे बचपनकी सादगी है और उस सादगीमे रह-रहकर झाँकती एक शोखी, जो चुप है पर न जाने कितनी अभिव्यक्तियाँ उसकी चुप्पीपर निछावर है।

× × ×

भावानुभूतिकी गहराइयोंसे उठनेवाली आवाज़

इनके काव्यकी दूसरी विशेषता इनकी दर्दमन्दी है। मतलब यह कि जो कुछ इन्होने लिखा है वह कल्पनाकी वस्तु नही है, इनका बार-बार का भुगता हुआ है। प्रेम लिखा है तो प्रेम किया भी है और प्रेम किया है तो इस सीमा तक किया है कि उसपर अपनेको लुटा दिया है, एक समर्पणकी गहराई जो उर्दू शायरोमे मुश्किलसे मिलती है। वह कविता लिखते बादमे है, अनुभव पहिले करते है। उनका सम्पूर्ण जीवन, जीवनव्यापी वेदना ही उनके काव्यकी भूमिका है। इसीलिए उन लोगोंको जो बिना दर्दका स्वाद चखे काव्य-रचनाकी ओर प्रवृत्त होते है, वह महत्त्व नही देते। 'बेसोजे दिल किन्होने कहा रेख़ता तो क्या ?' बिना दिल जलाये रेख़ता लिखना बेकार है। उन्होने कहा भी है—

जब ज़मज़मा[1] करती है सदा[2] चुभती है दिलमें,
बुलबुलसे कोई सीख ले अन्दाज़ सख़ुनका।

जब बुलबुल बिंध जाती है, वह तड़पकर गा उठती है तभी उसकी आवाज दिलमे चुभती है। यह कविताका ढग उसीसे सीखना चाहिए। कविता लिखनेके पूर्व 'मीर'ने दु'खोसे भरा लम्बा रास्ता तय किया है; उम्र ही बिता दी है। कहते है :—

१. गान। २. बोली, आवाज।

किस-किस तरहसे मीरने काटा है उम्रको,
अब आखिर-आखिर आनके यह रेख़ता कहा।

दफ़्तर लिखे हैं मीरने दिलके अलम[1] के यह,
यां अपने तौरो तर्ज़[2] में वह फर्द[3] हो गया।

× ×

मुझको शायर न कहो मीर कि साहब मैने,
दर्दो-ग़म कितने किये जमा सो दीवान किया।

मतलब यह कि सच्चे काव्यके लिए आत्मानुभूति जरूरी शर्त्त है। मीरका सारा काव्य ही एक दर्दकी तस्वीर बन गया है क्योंकि यह वेदना-रस उनके जीवनकी पोर-पोरमे भिदा हुआ है। यही रस जब काव्यमे उतरता है तो मानो दिलकी चीख़ ही उसमे उतर आती है :—

हर वरक़ हर सफ़हामें इक शेर शोर अंगेज़ है।

यह दर्द उनके काव्यमे सर्वत्र है पर उनकी गजलोमे तो जैसे वही वह है। इसलिए इस मैदानमे आज तक कोई इनकी बराबरी न कर सका। उर्दूमे तो इतना दर्द और इतना सोज और कही देखनेको नही मिलता। इस वेदनाने उर्दू गजलको अनुभूतिकी वह गहराई दी जो उसे दोबारा नसीब नही हुई। काव्य क्या है हृदय-व्यथाकी एक ऐसी अग्निशाला है जिसकी आग कभी बुझने वाली नही। यही दर्द है जो सुननेवालोको रुला देता है :—'दर्दे सखुनने मेरे सभोको रुला दिया।' इनका प्रत्येक शेर एक आँसू है; हर मिसरा एक रक्त-बिन्दु है, हर शब्द एक आह है।

---

१ दुख। २ रंग-ढग। ३. यकता, अद्वितीय।

अपने जीवनमे मीर अपनी ही वेदनाके साधक नही है; उन्होने भयकर स्वप्नकी भाँति वदलते हुए जमानेकी बरवादी देखी है। राजाको रक और रंकको राजा होते देखा है; शराफत-को पनाह माँगते और कमीनापन और गुण्डा-गीरीको सिहासन पर बैठते देखा है, उन्होने भूखसे तड़पते बच्चे देखे है; प्यासमे दम तोडती कलियोंको देखा है। डरे, सहमे बच्चे, जिनकी कच्चे दूध-सी आँखोंमे मौत और भयकी छाया है, उन्होने देखे है; इसानको दोस्त बनकर छुरा भोंकते उन्होने देखा है; तड़पती, रोती, प्यासी, त्रस्त, चीख़ती दिल्लीको उन्होंने देखा है; इस तरह सम्पूर्ण युगको व्यथाके भयानक होलिका-दाहमे जलते देखकर उसकी व्यथानुभूतिको भी इन्होने अपने दामनमे बाँध लिया है। इस प्रकार युग-वेदना और आत्म-वेदना दोनो मिलकर एक हो गयी है। जग-बीती और आप-बीतीके तूफानमे इनका दिल उमड़कर शेरमे उँडेल दिया गया है। देखिए :—

युग-वेदना और आत्म-वेदनाका मिलन

दिल न बाहम मिले तो हिजराँ[1] है,
हम वे रहते हैं गो कि पास ही पास।
मीर वहशी[2] का दिल है बेताक़त,
चलता-फिरता है पर उदास-उदास।
नाउमेदी भी हद्द रखती है,
जीता कब तक रहेगा कोई निरास।

× ×

१ विरह। २. पागल।

रहे ज़ेरे दीवार[1] हम मीर बरसों
न पूछा कभी ख़ाक उफ़्तादगाँ[2] को

× ×

और भी देखिए :—

दिल न पहुँचा गोशए दामाँ[3] तलक,
क़तरए-ख़ूँ था मज़ः[4] पर जम रहा।

× ×

हिजराने-यार एक मुसीबत है हमनशीं[5],
मरनेके हालसे कोई कब तक जिया करे।

× ×

कोई नहीं जहाँमें जो अन्दोहगीं[6] नहीं,
इस ग़मकदे[7] में आह दिले ख़ुश कहीं नहीं।

× ×

आग थे इब्तिदाए[8] इश्क़में हम,
अब जो ख़ाक है इन्तिहा[9] है यह।

× ×

इस गुलशने-दुनियामें शिगुफ़्ता[10] न हुआ मैं,
हूँ ग़ुंचए अफ़सुर्दा[11] कि मरदूदे सबा[12] हूँ।

---

१ दीवारके नीचे, दीवारकी छायामे। २ विपदामे पडे हुए। ३ दामनके, आँचलके किनारे। ४ दृगचल, पलक। ५. साथी। ६ दुखी। ७ दुखागार। ८ आरम्भ। ९ अन्त। १० प्रफुल्लित। ११. मुरझाई कली। १२ प्रभातीका मारा हुआ।

अपने एक फारसी शेरमे भी कहते है.—

हैफ़ दर शोरः ज़ारे आलम मीर
सब्ज़ नागुश्ता सोख़्त दानए मा।

प्रेम और दुनियाके दु खोने इनके जीवनमें आनन्द और उत्फुल्लता के झोके कभी आने न दिये। पर इस मिटे हुए दिलमे भी भावनाका सागर लहराता है। मिटकर भी वह मिटते नही है; बल्कि इस विनाशमे एक नवजीवनका प्रकाश है। उन्होने पाकर खोया है पर खोकर पाया भी है। एक नशा है जो उनकी जिन्दगी पर छा गया है·—

उम्र भर हम रहे शराबी-से,
दिले पुरखूँकी एक गुलाबीसे।

मर-मर कर भी वह जिये है —

क्या करूँ शरह[1] खिस्ताजानी[2] की
मैने मर मरके ज़िन्दगानी की।

ऐसा नही कि वह हँसना चाहते नही; वह भी हँसने, दुनियाके मजोमे शामिल होनेकी इच्छा रखते है पर दिलकी बेबसीको क्या करे, आँखोंको क्या करे जिनपर वश नही रह गया है —

हँसता ही मैं फिरूँ जो मेरा कुछ हो इख़्तियार[3]
पर क्या करूँ मैं दीदए-बेइख़्तियार[4] को

इस तरह दु.खोमे डूबी इनकी जिन्दगीने इनके काव्यको करुणासे ओत-प्रोत कर दिया है। पर इनके काव्यका सबसे बड़ा सौन्दर्य प्रेमकी

---

१ टीका, भावो। २. हृदय-भग्नता। ३ वश। ४ बेबस आँखे।

वह चित्रकारी है जो उसमे सर्वत्र मिलती है। प्रेमकी कुन्जगलियोकी एक-एक इच भूमि इनकी जानी-पहचानी है। प्रेमकी कोई अवस्था ऐसी नही, जिसके सुन्दर चित्र इनके यहाँ न मिलते हो। प्रेमकी अगणित भगिमाएँ यहाँ मचलती है, नाटकके न जाने कितने दृश्य यहाँ उभरते है; लालसाएँ उठती है, दिलकी तिलमिलाहटे नाचती है, समर्पणका शीश झुकता है। प्रेमकी सूक्ष्म भावनाओकी ऐसी मुसव्विरी, ऐसी चित्रकारी उर्दू काव्यमे दुर्लभ है। उसमे अनुभूतिकी कूचियोसे भरा रग है, केवल कल्पनाकी परछाइयाँ नही।

प्रेमकी सौ-सौ भंगिमाओंकी चित्रकारी

प्रेमके आरम्भमे प्रेमीकी अजीब अवस्था होती है। देखना चाहता है पर सामने आते ही आँखे झुक जाती है, लज्जासे बोल नहीं फूटते। नाम सुननेपर एक बेचैनी-सी होती है। बोलता किसीसे है, देखता किसीकी ओर है। दिलमे आता है मिलनेपर यह कहूँगा वह कहूँगा पर कहा कुछ नही जाता। इन भावोके चित्र मीरमे भरे पडे है। देखिए :—

लेते ही नाम उसका सोतेसे चौंक उट्ठे,
है ख़ैर मीर साहब कुछ तुमने ख़्वाब देखा।

(पूर्वानुराग)

और यह हालत देखिए —

कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह,
कल मीर खड़ा था याँ सच है कि दिवाना था।

(विभ्रम)

प्रेमीकी लज्जाका वर्णन करते है —

मीरसे पूछा जो मै आशिक़ हो तुम,
होके कुछ चुपके-से शरमाये बहुत।

(लज्जानुराग)

× ×

समझे थे हम तो मीरको आशिक़ उसी घड़ी,
जब सुनके तेरा नाम वह बेताब-सा हुआ।

प्रेम चुपके-चुपके बढता है; उसकी जडें हृदयकी गहराईमे प्रविष्ट होती है। आग अन्दर-अन्दर जलती है; विरह कलेजा मथता है; बीमारकी-सी हालत हो जाती है। बदन पीला, शरीर ढीला, चेहरेपर दीवानगीका आलम, बेचैनियोंमे गिरफ्तार, अन्दर दिलको जैसे कोई मल रहा है। प्रेमके ऐसे अनेक चित्र मीर देते है:—

दिलका यह दर्द

हम तौरे इश्क़से तो वाक़िफ़ नहीं हैं लेकिन,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है।

× ×

छाती जला करे है सोज़े-दरूँ बलासे,
एक आग-सी रहे है क्या जानिए कि क्या है?

कहते है, मालूम नही प्रेम क्या होता है, कैसा होता है पर इतना जानता हूँ कि सीनेके अन्दर जैसे कोई दिलको मला करता है। फिर आगे कहते है कि भीतरकी जलनसे छाती जलती रहती है। एक आग-सी लगी मालूम होती है पर यह नही जानता कि वह क्या है? अज्ञात पूर्वानुरागका कैसा सुन्दर एव मनोवैज्ञानिक निरूपण है।

धीरे-धीरे प्रेमका रग गहरा होता है। अब अन्दाज होने लगा है कि कही यह प्रेम तो नही है—

गर इश्क़ नहीं है तो यह क्या है भला मुझको,
जी ख़ुद बख़ुद ऐ हमदम काहेको खपा जाता?

× ×

किस तरहसे मानिए यारो कि यह आशिक़ नहीं,
रंग उड़ा जाता है टुक चेहरा तो देखो मीरका।

ताडनेवाले ताडने लगे है। कहनेवाले कहने लगे है कि भई, क्या बात है? यह तुम्हारी हालत क्या है? तुम्हे हुआ क्या है? यह मुरझाया-मुरझाया चेहरा, यह झुकी तस्वीर, यह बदरंगी, यह दुर्बल शरीर! क्या हो गया है —

क़ामत ख़मीदा[1] रंग शिकस्ता[2] बदन नज़ार[3],
तेरा तो मीर ग़ममें अजब हाल हो गया।

× ×

कुछ ज़र्द-ज़र्द[4] चेहरा कुछ लाग़री[5] बदनमें,
क्या इश्क़में हुआ है ऐ मीर! हाल तेरा?

लोग कहते है, आजकल सबसे जुदा रहते हो, एकान्तमे फिरते हो, जान पड़ता है, तुम्हारा दिल कही अटक गया है। और मीर है कि क्या

यह क्या बात है मीरजी?

जवाब दे। लोग आपसमे भी बाते करते है कि किसीकी जुदाईका गम इतना है कि मुँह पीला पड़ गया है। यह क्या जवाब दे। आँखोमे आँसू भर लाते है। लोग कहते है, बार-बार आँखोमे आँसू न भरो वर्ना तुम्हारा प्रेमका भेद खुल जायगा। इन्ही भावोको देखिए —

फिरते हो मीर साहब सबसे जुदे-जुदे तुम,
शायद कहीं तुम्हारा दिल इन दिनों लगा है।

× ×

---

१. झुका आकार, झुकी देह। २ बिखरा रग। ३ क्षीण। ४. पीला। ५ दुर्बलता, क्षीणता।

किससे जुदा हुए हैं कि ऐसे हैं दर्दमन्द,
मुँह मीरजीका आज निहायत ही ज़र्द है।

× ×

मीरजी ! राज़ेइश्क़[1] होगा फ़ाश[2]
चश्म हर लहज़ा[3] मत पुरआब[4] करो।

× ×

आशिक़ है या मरीज़ है पूछो तो मीरसे,
पाता हूँ ज़र्द रोज़-ब-रोज़ इस जवाँको मैं।

सवालपर सवाल होते है, चर्चे होते है, और मीर है कि मुँह बन्द है। जवाब देते हैं ! क्या जवाब दे पर कबतक चुप रहे, कबतक मुँह बन्द रख सकते है, आख़िर दो शब्द कहते है—

अब तो दिलको न ताब है न क़रार,
यादे अय्याम[5] जब तहम्मुल[6] था।

× ×

कुछ नहीं सूझता हमें उस बिन,
शौक़ने हमको बेहवास किया।

शुरू-शुरूमे एक प्रकारका धीरज था, सन्तोष था, अब तो दिलमे जरा भी चैन नही है। हाय ! हमे उसके बिना कुछ नही सूझ पड़ता, उत्कण्ठा इतनी बढ गयी है कि मेरा होश-हवास गुम है। जानता हूँ कि रोनेसे डूब जाऊँगा, घुल रहा हूँ पर मेरे दोस्त ! क्या करूँ, इतना कम-

---

१ प्रेम-रहस्य। २. प्रकट। ३. प्रतिक्षण। ४ तर, अश्रुपूर्ण। ५ यादके दिनो। ६. सहिष्णुता, धीरज।

जोर हो गया हूँ कि धीरज नही रह गया है, याद आते ही आँसू निकल पड़ते है । बोलो क्या करूँ :—

बेताक़ती सकूँ नहीं रखती है हमनशीं,
रोनेने हर घड़ीके मुझे तो डुबो दिया ।

और कभी-कभी प्रियतमके सामने भी कुछ टूटे-फूटे बोल लेते है :—

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे,
इस ज़िन्दगी करनेको कहाँ से जिगर आवे ।
हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया,
तो दिल सितमज़दहको मैंने थाम-थाम लिया ।

तुम्हारा नाम लेते ही आँखे भर आती है, तब जिन्दगी बितानेको मै कहाँसे कलेजा लाऊँ ? इतना ही क्या कम है कि जब कोई हमारे आगे तुम्हारा नाम लेता है तो मै अपने इस दुखिया दिलको थाम-थाम लेता हूँ । (यहाँ थाम-थाम शब्दने भाषामे एक दर्द और सजीदगी पैदा कर दी है, जो पकड लेना कहनेसे नही आ सकती थी ।) ।

कलेजा थाम लेता हूँ !

पर उधर उनकी शरारत देखिए । यहाँ विरहमे यह हाल है, चेहरा पीला पड गया है और वह हँसके कहते है कि अब तो तुम्हारा रग कुछ निखर चला है —

यह छेड़ देख, हँसके रुख़ेज़र्द पै मेरे,
कहते हैं, मीर ! रंग तो अब कुछ निखर चला ।

और वह त्योरियाँ चढाते जाते है । इस पर मीरने क्या खूब कहा है —

हम ख़स्तादिल हैं तुझसे भी नाज़ुक मिज़ाजतर,
त्योरी चढ़ाई तूने कि याँ जी निकल गया ।

× ×

लोग समझाते है, व्यर्थ घुल रहे हो, फिजूल जान दे रहे हो। मीर भी दिलको समझाते है पर इश्कका मनोवैज्ञानिक पक्ष यह है कि वह दबानेसे और बढता है, समझानेसे और उभरता है। तुम समझाते हो, उसकी बेचैनी बढती है; तुम कहते हो और कलेजा मुँहको आता है। सहानुभूति प्रदर्शनमे दर्द दर्द पर चोट करता है; और रोना आता है, जितना समझाते है, उतना ही मन टूट-कर घुल-घुल जाता है। दिल पत्थर करना चाहते है पर पानी हुआ जाता है, बाँध मजबूत करना चाहते है पर टूटा जाता है :—

यह दर्द जो समझानेसे बढ़ता है

कहनेसे मीर और भी होता है मुज़तरब[1]
समझाऊँ कबतक इस दिले ख़ाना ख़राबको।

और मीर भी कहते है कि प्रेमकी इस पीड़ामे, इस बेचैनीमे मै क्या कहूँ, बात करता हूँ कि कलेजा मुँह तक आता है।

और हजरत बार-बार सोचते है कि अब उसके यहाँ न जाऊँगा पर बेचैनी उभडती है और बार-बार उसके दरवाजे पर जाते है। बार-बार उधर ही पाँव उठते है :—

बार-बार उसके दर पे जाता हूँ,
हालत अब इज़तिराबकी-सी है।

चला न उठके वहीं चुपके-चुपके तू फिर मीर,
अभी तो उसकी गलीसे पुकार लाया हूँ।

× ×

१. बेचैन।

प्राय. प्रेमी सोचता है कि मिलने पर यह कहूँगा वह कहूँगा । उनके सामने दिल निकालकर रख दूँगा। उनको शिकायत करूँगा कि मेरे साथ क्यों इतनी निष्ठुरता करते हो, यह तुम्हारी क्या आदत है :—मतलब हजार बाते करूँगा पर सामने जाते ही सब बातें भूल जाती है, कुछ बोला नही जाता । इसी भावको 'मीर' कहते हैं —

मिलनमें वाणी-का मौन

जीमें था उससे मिलिए तो क्या-क्या न कहिए मीर,
पर जब मिले तो रह गये नाचार देखकर ।

× ×

कभी-कभी ऐसा होता है कि लाख दिलको मारते है, भावोको बाँधते है, ओठ दबाते है पर प्यार प्रकट हो ही जाता है। न चाहते हुए भी एकाध शब्द प्यारके निकल ही जाते है । इसीको कहा है :—

हर चंद मैने शौकको पेनहाँ[1] किया वले[2],
एक आध हर्फ़ प्यारका मुँहसे निकल गया ।

पर लाख रुदन हो, व्यथा हो, जब तक कहनेके ढगमे एक शोख़ी, एक अदा, एक विशेष भगिमा न हो तब तक कविकी कला निखरती नही ।

बयानकी शोख़ी और रूपके चित्र

बाते दुनियामे वही होती है, कोई शायर नई बात नही कहता, पर नये ढगसे कहता है; निराली तर्जे बयाँ होती है। मीरकी तारीफ यह है कि उनमे गहराई भी है और पकड़ भी है, अन्त सौन्दर्य भी है और कहनेका निरालापन भी है। अन्त. और बाह्य सौन्दर्य-राशिका सामञ्जस्य है। ठडी आह निकलना एक मुहाविरा है, पर ठण्ठी आहके मजमूनमे मीरने बातपर बात पैदा की है :—

---

१ प्रच्छन्न । २ किन्तु फिर भी ।

आशिक़ हैं हम तो मीरके भी ज़ब्ते इश्क़के,
दिल जल गया था और नफ़स[1] लब पे सर्द था।

मीरजीके प्रेमपर नियंत्रणके हम प्रशसक हैं। दिल तो जल गया था पर ओठपर ठण्डी साँस निकल रही थी।

ओठोंके सौन्दर्यपर चूमनेकी इच्छा होती है पर बिना इच्छा प्रकट किये इच्छा प्रकट कर दी है; बिना कहे सवाल करके उसे कह दिया है, किस शोख़ीके साथ—

लाले ख़मोश[2] अपने देखो हो आरसीमें
फिर पूछते हो हँसकर मुझ बेनवा[3] की ख़ाहिश ?

अपने खामोश लालोंको (लालिमाके कारण लालसे ओठकी उपमा दी जाती है) आईनेमे देख रहे हो, फिर भी मुझ गरीबसे मेरी इच्छा पूछते हो ?

आड़ लेकर, सवाल करके अपनी मुराद कहनेका यह अनोखा ढंग है।

× × ×

मीरका सौन्दर्य-वर्णन

आँखें देखती है और दिल चुरा लिया जाता है; या दिल उधर दौड़ता है और आँखोको रोना और दुःख उठाना पड़ता है। दोनोमे क्या सही है !

ये आँखें या वह दिल ?

दिल आँखको दोष देता है; आँखे दिलको दोषी बताती है और इन दोनोके झगड़ेमे प्रेमी मारा जाता है और इस भावको मीरने क्या खूब अदा किया है:—

---

१. श्वास। २. मौन। ३. गरीब, अकिंचन।

कहता है दिल कि आँखने मुझको किया ख़राब,
कहती है आँख यह कि मुझे दिलने खो दिया।
लगता नहीं पता कि सही कौन-सी है बात,
दोनोंने मिलके 'मीर' हमें तो डुबो दिया।

'मीर' ने हर रगमे दुनिया देखी है; प्रियतमकी हर अदासे वह परिचित है। अन्तर्मनके चित्र तो उनमे खूब है ही पर वाह्य सौन्दर्यकी एक-एक अदा भी उन्हे मालूम है। उनकी महती कल्पकतामे, उनके तखय्युलमे इतना विस्तार है कि कोई चीज उनकी पैनी आँखोसे वच नही पाई। किस शोख़ीके साथ माशूकके मुख और वालोका वर्णन किया है। मिलनकी रात्रि है। प्रेमी कहता है हमारे भाग जगे है। एक पहर रात है तव वह आये है। पर मुँहको खोल देते है, तो सुवह हो जाती है। फिर मुँहको वालोमे छिपा कर पूछते है, भला अव कितनी रात है? क्या शरारतभरा सौन्दर्य-वर्णन है!

सुबह करते हैं
रात करते है

थी सुवह जो मुँहको खोल देता,
हरचन्द कि तव थी एक पहर रात।
फिर ज़ुल्फोंमें मुँह छिपाके बोला,
अव होवेगी मीर किस क़दर रात?

शरीर-यष्टिका सौन्दर्य :

मीरने सौन्दर्यके हर क्षेत्रको लिया है। शरीर-यष्टिकी लचकको देखके कहते है.—

इन गुलरुख़ोंकी क़ामत लहके है यूँ हवामें,
जिस रंगसे लचकती फूलोंकी डालियाँ है।

× ×

शौक़े क़ामतमें तेरे ऐ नौनिहाल,
गुलकी शाख़ें लेती हैं अँगड़ाइयाँ !

आँख और ओठ :

अधखुली, अधमुँदी आँखोका सौन्दर्य और मस्ती कल्पनाकी नही, देखनेकी वस्तु है। धीरे-धीरे बन्द आँखोंका खुलना ! जैसे कलीने यह धीरे-धीरे खिलना उसीसे सीखा है। फिर उनमे शराबकी मस्ती भरी है.—

मीर इन नीमबाज़[1] आँखोंमें,
सारी मस्ती शराब की-सी है।
खिलना कम-कम कलीने सीखा है,
उसकी आँखोंकी नीमख़ाबी से।

और ओठोको क्या कहे ? कोई इन्हे याकूत कहता है कोई लाल और कोई गुलाबकी पखड़ी कहता है :—

है तसन्नो[2] कि लाल हैं वे लब,
यानी एक बात-सी बनाई है।

दूसरा मिसरा क्या खूब है। बात बनाना मुहाविरेको क्या निभाया है और मजा यह कि बात बनाना भी ओठोका ही काम है !

नाज़की[3] उसके लबकी क्या कहिए,
पंखड़ी एक गुलाब की-सी है।

× ×

याकूत कोई उनको कहे है कोई गुलबर्ग[4]
टुक होंठ हिला तू भी कि एक बात ठहर जाय।

---

१. अधखुली। २. बनावट (बनावटी बात है)। ३ पतलापन, क्षीणता। ४. गुलाबकी पँखड़ी।

यहाँ भी 'एक बात ठहर जानेका' खूब निर्वाह किया है ।

मुखकी बनावट :

क्या ख़ूबी उसके मुँहकी ऐ ग़ुंचः[1] नक़ल करिए ,
तू तो न बोल ज़ालिम बू आती है देहाँ[2] से ।

"ऐ कली, तू उसके मुख-सौन्दर्यकी नकल क्यो करती है । तू चुप रह, न बोल, तेरे मुँहसे बू आती है ।"

कलीकी सुगन्धको किस मुहाविरेमे ढालकर उसे नीचा दिखाया है!

कपोल :

कपोल सूर्यकी तरह चमक रहे है, तब इन्हे घूँघटमे, पर्देमे, नकाबमे छिपानेसे क्या लाभ है, वे छिपते तो है नही । जब हम उन्हें देखते है तो मन करता है कि आँखोको उनमे गड़ा दे —

है तकल्लुफ़ नक़ाब, वे रुख़सार[3] ,
क्या छिपें आफ़ताब[4] है दोनों ।

× ×

रुख़सार उसके हाय रे, जब देखते हैं हम ,
आता है जीमें आँखोंको इनमें गिड़ोइए ।

बाल :

लग निकली है किसूकी मगर बिखरी ज़ुल्फ़से ,
आनेमें बादे सुबह[5] को याँ एक दिमाग़ है ।

(सुरभित) प्रभातीमे एक अहकार है, जान पडता है वह किसीकी बिखरी जुल्फोसे लगकर आई है ।

---

१ कली, मुकुल । २ मुँह, देहन । ३. कपोल, गाल । ४. सूर्य । ५ प्रभातकी वायु ।

तेरे बालोंके वस्फ़[1] में मेरे,
शेर सब पेचदार होते हैं।

तेरे बाल इतने पेचदार है कि उनकी प्रशंसामे मै जो शेर कहता हूँ वह (शेर ही) पेचदार हो जाता है।

आवेगी एक बला तेरे सर सुन कि ऐ सबा[2],
ज़ुल्फ़े-सियह[3] का उसके अगर तार जायगा।

ऐ प्रभाती वायु ! जरा सावधान होकर बहा कर वर्ना यदि किसी दिन उसके काले बालोसे पाला पड़ जायगा तो तेरे सिर एक बला आ जायगी।

मीर हर-एक मौज[4] में है ज़ुल्फ़ ही का-सा दिमाग़,
जबसे वह दरियापे आके बाल अपने धो गया।

मीर साहब कहते है कि जबसे मेरा प्रियतम नदीके किनारे आकर अपने बाल धो गया तबसे प्रत्येक तरगमे जुल्फका-सा ही दिमाग देखनेमे आता है—तबसे प्रत्येक तरंगमे जुल्फकी ही भाँति उतार-चढाव देख रहा हूँ। कघी की हुई जुल्फोमे तरगकी भाँति ही उतार-चढाव होता है, इसी बातको लेकर यह शेर कहा है।

कानके मोती :

लेते करवट हिल गये जो कानके मोती तेरे,
शर्मसे सरवर[5] गरेबाँ सुबहके तारे हुए।

करवट लेनेसे, अँगडाई लेनेसे जो तेरे कानके मोती हिले तो शर्मसे सुबहके तारोंने गरेबाँमे मुँह छिपा लिया।

---

१ गुण, प्रशसा। २. प्रभाती। ३. काली अलके। ४. तरग, लहर। ५. अधिकारी।

सुबहके तारोका टिमटिमाना और मोतीका हिलना दोनोमे कैसा साम्य है ।

चाल :

हर नक्शे पा[1] है शोख तेरा रश्के यासमन[2],
कम गोशए चमन[3] से तेरा रहगुज़र नही ।

ऐ शोख ! तेरा प्रत्येक चरण-चिह्न नवमल्लिकाको लज्जित करने वाला है । तेरा चलना पुष्पोद्यान-खण्डसे कुछ कम नही है । जहाँ-जहाँ तू चलता है चमन खिलते जाते हैं ।

यो हम मीरमे सौन्दर्यके एकसे एक चित्र पाते है । उन्होने एक श्रेष्ठ कुलकी कुमारीके प्रति आत्मसमर्पण किया था । उनके प्रेममे कही अश्लीलता, निकृष्टता नही है, हाँ जलन है, गर्मी है । फारूकीने ठीक ही लिखा

बिखरे हुए मोती

है कि "उन्होने अपनी तस्वीरोमे जिन कदरो[4] को उभारा है वह वही है जो शरीफ, मोतवस्सित[5] घरानोमे पाई जाती है । उनमे तमन्नाका इज-हार[6], सरशार तजुर्बो[7] का निखार, चाहने और चाहे जानेकी आरजू है । एक दिलरुबा[8] असलियत[9] है, एक कार आगही है जो तजुरबातकी वादी[10] मे सीनेके बल चलनेसे आती है । इनकी मोहब्बत असली और हकीकी है ··इसमे जो सच्चाई; पाकीजगी[11] और जब्त[12] है वह आम-शायरोकी दस्तरस[13] से बाहर है ।*

ससारमे एकसे एक सुन्दर मूर्तियाँ है पर हृदय न जाने क्यो एक विशेष-की ओर ही आकर्षित होता है । मीर भी कहते है .—

---

१ चरण-चिह्न । २. चमेलीकी ईर्ष्याके योग्य । ३ पुष्पोद्यानका एक कोना, खण्ड । ४ मूल्यो । ५ मध्यम । ६. अभिव्यक्ति । ७ अनुभव । ८ चित्ताकर्षक । ९ वास्तविकता, सत्य । १०. घाटी । ११. पवित्रता । १२ नियन्त्रण । १३ पहुँच । * मीर तकी मीर पृष्ठ ३३८–३३९ ।

फूले गुल शम्सो-क़मर[1] सारे ही थे,
पर हमें इनमें तुम्हीं भाये बहुत।

वहाँ गुलावके फूल, सूरज और चाँद सभी थे पर उनमे तुम्ही मुझे बहुत भाये।

आर्जूओंकी एक दुनिया उनके सीनेमे बसी हुई है। देखिए :—

मौसिमे अब्र[2] हो, सुबू[3] भी हो,
गुल हो, गुलशन[4] हो और तू भी हो।

यहाँ 'तू भी हो' ने एक विशिष्टता उत्पन्न कर दी है।

गर्चे कब देखते हो, पर देखो,
आरज़ू है कि तुम इधर देखो।

कितनी विवशता भरी विनती है। तुम मेरी तरफ देखते ही कब हो, पर चाहता हूँ कि देखो। मेरी वाञ्छा है कि तुम इधर देखते!

वह और शायरोंकी तरह प्रियतमसे कोई अनुचित कामना कभी नही प्रकट करते; प्रेमकी ऊँचाईका सदा ध्यान रखते है। यदि प्रियतमकी निष्ठुरताकी चर्चा भी करते है तो उसका भार अपने ऊपर उठा लेते है। यह है उनका समर्पण :—

उसके ईफ़ाए-अहद[5] तक न जिये,
उम्रने हमसे बेवफ़ाई की।

मर गये पर उसने वादा पूरा न किया। मीर साहब इसी बातको अपनी तर्ज पर कहते है कि उम्र ही बेवफ़ा निकली कि उसके प्रण-पालन तक हम न जी सके।

---

१. सूर्य-चाँद। २ बादलका मौसिम, वर्षाके दिन। ३. मधु-घट। ४. पुष्पोद्यान। ५. प्रण-पूर्ति।

हाले-बद गुफ़्तनी नहीं अपना,
तुमने पूछा तो मेहबानी की।

अपना बुरा हाल हम कहना नही चाहते, तुमने पूछा यह तुम्हारी कृपा है।

प्रतीक्षामे आँखे लगी है, इस भावको मीरने गहरी अनुभूतियोके रगमे चित्रित किया है :—

बालीं[1] पै मेरी आकर टुक देख शौक़े दीदार,
सारे बदनका जी अब आँखोंमें आ रहा है।

जरा छतपर आकर मेरी दर्शनोत्कण्ठा तो देखो, सम्पूर्ण शरीरसे प्राण निकलकर आँखोमे आ वसा है। कैसी सर्वग्राही दर्शनोत्कण्ठा है।

हर समय मिलनकी इन्कारीसे त्रस्त होकर कहते है —

दिन नहीं, रात नहीं, सुबह नहीं, शाम नहीं,
वक्त़ मिलनेका मगर दाखिले-अय्याम[2] नही।

दिनको—नही, रातको—नही, सुवहको—नही, शामको—नही, शायद मिलनेका समय दिवसकी अवधिमे है ही नही।

आँखें क्यों चुराते हैं ?

इधर यह वात है, उधर आँखे छिपाकर वह कभी-कभी देख भी लेते है और जब आँखे मिल जाती है तो उन्हे झुका लेते है, जैसे चोरी पकड ली गयी हो। क्या उनमे मेरे प्रति कोई लगावट, कोई दर्द, कोई झुकाव नही है ? यदि नही है तो ऐसा होता क्यो है :—

---

१. छत। २ दिनोमे शामिल।

वह दर्द दिल नहीं तो क्यों देखते ही मुझको ,
पलकें झुकालियां हैं, आँखें चुरालियां हैं ।

प्रेम कोई अपराध तो नही है पर दुनियामे अक्सर अपराध मान लिया जाता है । मीर कहते है कि तुम मालिक हो, मुझे मारना चाहो तो मार डालो पर दासने सिवा प्रेम करनेके और कोई पाप तो नही किया है:—

साहब हो मार डालो मुझे तुम वगर्ना कुछ ,
जुज़ आशक़ी गुनाह नहीं है ग़ुलामका ।

मीर अपने शिष्टाचारको कभी नही छोडते । प्रियतमसे जो कुछ कहना है वडी विनयसे कहते है । उनकी इच्छाओंकी अभिव्यक्तिमे, आरजूके इजहारमे भी वडी गरीवी है, वडी सरलता है,—मानो उसमे भी वेदना कभी उनसे अलिप्त नहीं रहती·—

गर्चे कब देखते हो पर देखो ,
आरज़ू है कि तुम इधर देखो ।

'सायल' का एक शेर भी कुछ इसी तर्जपर है:—

दिल तो यह चाहता है खस्ता जिगरको देखो ,
आगे तुम्हारी मरज़ी चाहे जिधरको देखो ।

पर मीरका पहला मिसरा इतने दर्द, इतनी निराशा और हसरतमे डूवा हुआ है कि उसने उसे अनुभूतिकी वेदनाका स्वर प्रदान किया है ।

कब देखते हो मेरी ओर ?

वह अब तकके निराशा भरे अनुभवकी कथा कहता है और उसके प्रकाशमे ही अपनी अभिलापा प्रकट करता है, इस अभिलाषामे भी जैसे वह आश्वस्त नही कि वह देखेगे क्योकि 'कब देखते हो ?'

विरहकी वेदना बहुत बढ गयी है, अब जीवनकी कोई आशा नही ।

चलचलाव लगा है। वह आये है। देखते है और शायद यह सोचकर कि ऐसा तो अक्सर होता रहता है, चलनेको तैयार होते है,—शायद उन्हे मालूम नही पडता कि आखिरी वक्त है और हम भी यात्रापर निकलने ही वाले है।

ज़रा बैठो, हम भी चलते हैं !

जरा रुक जाओ। यह मेरी अन्तिम वेला है। जरा मेरे पास बैठो, जल्दबाजी न करो, सब्र करो, जरा धीरज धरो, हम भी तुम्हारे साथ ही चलते है (मतलब यह है कि उधर तुम चलते हो, इधर मै भी दम तोड-कर चलता हूँ।)

दमे-आख़िर है, बैठ जा, मत जा,
सब्र कर टुक, कि हम भी चलते हैं।

कैसी बेबसी, निराशा और दिल-शिकनीका आलम है। मजा यह कि इसमे भी अपनी वही अकड और शान है :—

चले हम अगर तुमको इकराह[1] है,
फ़क़ीरोंकी अल्लाह अल्लाह है।

एक जगह कहते है कि तुमने अपने दिलसे तो हमे भुला दिया, निकाल दिया पर अपनेको मेरे दिलसे निकाल दो, मेरे दिलसे भुला दो तब समझूँ —

तुमने जो अपने दिलसे भुलाया हमें तो क्या
अपने तईं तो दिलसे हमारे भुलाइए।

सूरदासका निम्न पद याद आ जाता है—

'हिरदै तें जब जाहुगे, मर्द बदौंगो तोहिं।'

---

१ एतराज, नापसंदी।

मीरकी दुनिया दर्दकी दुनिया है और इस दुनियाका वह अद्वितीय कवि है। 'फिराक' गोरखपुरीकी बात ठीक है कि मीर बडा गजलगो है और गालिब बडा फनकार (कलाकार) है। पर मीर को पढकर कलेजा हिल जाता है, जब गालिबको पढकर उसकी उड़ानकी प्रशसा करनी पड़ती है। सबसे बडी बात मीरके साथ यह है कि मीरका दर्द हमे मारता नही, वह जिन्दगीको उभारता है। वह विष नही है, मारक नही है; वह बेहोशीमे भी एक अजब होश पैदा करता है। वह दुःखमे भी इन्सानकी महत्ता और श्रेष्ठताको कभी नही भूलता। मानवता पर उसको सहज गर्व है.—

यह दर्द जिन्दगीको उभारता है

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों,
तब ख़ाकके परदेसे इन्सान निकलते हैं!

जिन्दगी काँटोसे भरी है; मुसीबतोसे घिरी है; अनिश्चितताओसे उलझी है, और दिलकी नगरी है कि बार-बार लुटी है, हम देखते रहे है और वह लुट गयी है।

दिलकी वीरानीका क्या मज़कूर है,
यह नगर सौ मर्त्तबा लूटा गया।

मीरको बुलबुलेकी तरह मिटना ही है। प्रभाती वायु भी इश्कके पागलोंका निशान पूछनेपर एक मुट्ठी धूल उड़ा देती है (कि यह है निशान उनका)—

नमूद[1] करके वहीं बहरे-ग़म[2] में बैठ गया,
कहे तो मीर भी एक बुलबुला था पानीका।

× ×

१. व्यक्त, दृष्ट। २. दु ख-सागर।

आवारगाने इश्क़का पूछा जो मैं निशाँ,
मुश्ते-ग़ुबार[1] लेके सबा[2] ने उड़ा दिया।

ससारके कठोर पथपर चलते हुए वह बराबर अनुभव करते रहे है कि—

ज़मीं सख़्त है आसमाँ दूर है।

पर चलना, सिर ऊँचा करके चलना उन्होने कभी न छोडा। अपने मूल्योमे उनका विश्वास कभी न डिगा, इसीलिए और लोग जिस बोझको उठा न पाये, या जो लोगोको बहुत भारी प्रतीत हुआ, उसे वह उठा सके।

सबपै जिस बार[3] ने गिरानी की,
उसको यह नातवाँ[4] उठा लाया।

निराशाओने इनमे अपनी राहपर चलनेकी आशा दी है; अपनी दुखी हुई जिन्दगीने इन्हे युग-वेदनाको अपनानेकी चेतना दी है इसीलिए इनकी वेदनामे इतनी तरलता और इतनी गहराई है। यह बोलते क्या है मानो तडपकर इनका दिल ही निकल रहा है। शायद इसीको ख्याल-कर कहा भी है —

अल्ला रे अन्दलीब[5]की आवाज़े-दिलख़राश[6],
जी ही निकल गया जो कहा उनने हाय गुल!

कितना दर्द है, क्या तस्वीर है, क्या भाषा है, क्या कला है, क्या गहराई है। बिल्कुल जैसा वह कहते है —'दुनिया सिमट आई है मेरे दीदएतरमें।' वेदना हर शब्दके झरोकेसे झाँकती है और यह प्रभाव विना गहरी निजी अनुभूतियोके सम्भव नही।—

दर्दे-दिल मा ग़मे-दुनिया, ग़मे-माशूक़ शवद,
बादह गर ख़ाम बुवद पुख़्ता कुनद शीशए मा।

---

१ एक मुट्ठी धूल। २. प्रभाती। ३ बोझ, भार। ४. दुर्बल, अशक्त। ५ बुलबुल। ६ हृदय-भग्नकारी, दिल चीरनेवाली।

मीर : जीवन और काव्य

ज्ञातव्य बातें

१. मीर-काव्यकी संक्षिप्त-समीक्षा

मीरके काव्यकी जडें जीवनकी वास्तविकताकी मिट्टीमे दूर तक फैली हुई है । वह तूफानोमे पले, आँधियोंसे गुजरे थे । दुनियाका ऊँच-नीच उन्होने देखा था । उनकी आँखोके आगे सिहासन टूटते थे, राजा भिखारी और भिखारी राजा वन जाते थे । स्वार्थके लिए मनुष्य पशु हो जाता था । खुद उन्होने जमानेकी चोटें सही थी, जगह-जगह फिरे थे । गरीबीके मजे चखे थे । हर तरहकी कठिनाइयाँ सहन की थी । फिर उनके पास एक ऐसा दिल था जिसमे प्रेमकी वेदना और तड़प थी, जिसमे कल्पना और अनुभूति थी, जिसमे सपने थे, जिसमे जीवनके प्रति गहरी निष्ठा थी । इसके साथ उनमे सूफियो और दरवेशोके पैतृक सस्कार थे—वे सस्कार जिसने इनको दर्दमन्दी दी पर किसी वैभवके आगे न झुकनेकी वृत्ति भी दी । मीरके जीवनकी यह एक बडी विशेषता है कि कठिनाइयोके बीच, गरीबीके बीच, चलते हुए भी उन्होने कभी सिर नही झुकाया; मानवताके मूल्योको कभी नही छोडा । सौन्दर्योपासनाने, प्रेमने उन्हे जीवनकी सुकुमार वृत्तियो का सूक्ष्म ज्ञान दिया ।

इसलिए इनका काव्य जीवनके उत्स रूपमे प्रकट हुआ है । उसमे सौन्दर्य एवं प्रेमसे लिपटे जीवनकी मुसकराहट है और जिन्दगीकी असफल सवेदनाओका रोदन है । उनका प्रेम हवाई, काल्पनिक, आसमानी नही है; वह मानवीय है—वह इसी दुनियाका है, उसमे जीवनके रक्तकी तड़प और प्रवाह है पर उसमे कर्दम नही है, नग्नता नही है । उस एक दिलकी

धडकनमे हजार-हजार दिल धड़कते है, उस व्यक्तिमे समष्टिका स्वर है; वह बोलते कुछसे है पर सुनाते लक्ष-लक्ष सामान्य जनको है ।

इसीलिए उनके काव्यमे इतनी सादगी, इतनी वेदना, इतनी तड़प और फिर भी जीवनके प्रति इतनी निष्ठा है कि युगपर युग बीतते गये है पर आज भी वह उर्दू काव्यमे 'खुदाये सखुन'की उपाधिसे पुकारे जाते है । उन्होने खुद लिखा है कि मेरे काव्योद्यानमे गुलाब-पुष्प नही, कलेजेके टुकडे फैले हुए है —

गुलचीं समझके चुनियो कि गुलशनमें मीरके,
लख्ते जिगर पड़े हैं नही बर्गहाए गुल ।

या

हमको शायर न कहो मीर कि साहब हमने,
दर्दो-ग़म कितने किये जमा तो दीवान किया ।

इस प्रकार इनकी सम्पूर्ण रचनापर इनके व्यक्तित्वकी गहरी छाप है। वह इनके जीवनका ही प्रतिबिम्ब है। कवियोकी रगीन उक्तियाँ, विचारोकी सूझ, अतिशयोक्तिके मजे बहुतोको मालूम है, जगत्के साहित्यमे उनका बाहुल्य है । क्षणिक आकर्पणका उद्दाम प्रवाह भी हम आये दिन अपनी आँखोसे देखा करते है किन्तु अपनी असफलताओमे स्नेहकी जीवन-व्यापी दृढता बहुत कम कवियोमे दिखाई देती है, मीर ऐसे ही कवि है । चचलता, सासारिक विलासकी चमक-दमक, की कही कोई रेखा उनमे नही है । जो मुसीबत और गम, जो दर्दमन्दी, जो सोज गुदाज साथ लाये थे उसीका दुखडा सुनाते हुए चले गये, जो आज तक आँखवाले दिलोमे असर और विदग्ध हृदयोमे दर्द पैदा करते है । ऐसे विषय अन्य शायरोके लिए काल्पनिक थे, जब इनपर वे गुजर चुके थे । इनका आशिकाना-कलाम (प्रेम-काव्य) वेदना, निराशा एव असफलताकी आँखोसे टपके हुए आँसुओ-का एक हसरतसे भरा हुआ मरहम है जो वियोगकी डिबियामे बन्द पड़ा

हुआ है। निष्ठुर प्रियतम द्वारा दिलपर दिये गये नश्तरके लिए यह मरहम बहुत कारगर है।

मीर साहबकी भाषा परिमार्जित और रचना साफ है। वर्णन इतना स्वाभाविक है जैसे बातें करते है और इसी बातने उनकी गजलोको आदर्श नमूना बना दिया है क्योकि गजल है ही दो प्रेमियोकी बातचीत। दिलके भावोको, मुहाविरेका रंग देकर, बातो-बातोंमे अदा कर देते है। भाषामे गजबका जोर है। इनकी कविताका सबसे बड़ा गुण सादगी और स्वाभाविकता है। पढते-पढते ऐसा मालूम होता है मानो आँखोके आगे कोई प्रभावशाली नाटक खेला जा रहा है। जहाँ वियोगका वर्णन करने लगेगे, रुलाकर छोड़ेंगे। वही सीधी-सादी बात है किन्तु ढग ऐसा है कि दिलमें सीधे जाकर चुभती है।

इनकी रचनाके बारेमे बहुत कुछ कहा जा सकता है, पर एक बात स्पष्ट है कि उसमे अन्तर्वृत्तियोकी प्रधानता है; उन्होने शब्दो, सजावट, अलंकरणकी अपेक्षा अनुभूति एव भाव-पक्षको अधिक महत्त्व दिया है। भाषा स्वय भावोका अनुसरण करती है। इनका कलाम साफ कह रहा है कि जिस दिलसे निकलकर आया हूँ, वह दु:ख-दर्दका पुतला ही नही निराशा, हसरत और वेदनाका जनाजा था। सदैव एक रगमे रँगे रहते थे। जो दिलपर बीतती थी उसे ही बिना बनावट, सीधे-सादे शब्दोमे कह देते, जिसका सुननेवालोपर जादूका-सा असर होता था।

इनका काव्य-विस्तार भी बहुत है। ६-६ दीवान तो ग़जलोके ही है। इनकी गजलें भी अनेक बहरों (छन्दो) मे है। सभीमे मधुरता और वेदना है परन्तु छोटी बहरोकी गजलोमे और भी कुछ है। उनमे गहरी चुभन है, उनकी चितवन दिलोमे सीधे पैठती है। फर्माइशी गजले उतनी अच्छी नही है, उनमे वह प्रभाव नही दिखाई देता। यह स्वाभाविक है और इसका कारण स्पष्ट है। जो रचना कविके हृदयसे न निकले, वह दूसरोके दिलोमे क्या गुदगुदी पैदा करेगी ?

फारसी मुहाविरोपर उर्दू बन्ध लगाकर इन्होने नया आविष्कार किया है। फारसी मुहाविरोके अनुवाद भी इनकी रचनामे देखे जाते है। कुछ उदाहरण देना अप्रासगिक न होगा।

'खुशमनमे आयद' फारसीका एक मुहाविरा है। इनका अर्थ होता है, 'मुझे भला नही लगता।' मीर साहब इसी मुहाविरेको उर्दूके साँचेमे यो ढालते है —

नाकामिये[1] सद-हसरत[2] ख़ुश लगती नहीं वरना
अब जीसे गुज़र जाना कुछ काम नही रखता।

'नमूद करदन' फारसीका एक फिकरा है। इसका अर्थ है 'प्रकट करना।' मीर लिखते है —

नमूद[3] करके वहीं बहरेग़म[4]में बैठ गया,
कहे तो मीर भी एक बुलबुला था पानीका।

इसी तरहके और भी अनेक उदाहरण दिये जा सकते है। इनकी ऐसी रचना अच्छी है। इनमेसे कुछ प्रसिद्ध और प्रचलित भी है किन्तु साधारणतया लोगोने इन्हे भलीभाँति नही अपनाया।

कही-कही कुछ ऐसे फारसी मुहाविरोका आधार लेकर इन्होने शेर कहे है जिन्हे पीछे लोगोने छोड़ दिया। 'नज आमदन' अर्थात् शर्मिन्दा होना एक मुहाविरा था। इसकी छाया-मात्र लेकर ख़ूब कहा है :—

ख़ुलनेमें तेरे मुँहके, कली फाड़े गरेबाँ[5],
आगे तेरे रुखसार[6]के गुलबर्ग[7] तर आवे।

कही-कही आपको जोश भी आ गया है। ऐसी जगह आपने ख़ूब

---

१ असफलता। २ बहुत अफसोस है। ३. प्रकट। ४ दु ख-सागर। ५ गला, कुर्तेका वह भाग जो गर्दनके पास होता है। ६ कपोल। ७ गुलाबकी पखडी।

दूनकी हाँकी है, परन्तु उनकी ऐसी रचना भी मजेसे खाली नही। एक शेर देखिए:—

हरचन्द नातवाँ[1] हैं पर आ गया जो दिलमें,
देंगे मिला ज़मींसे तेरा फ़लक[2] कुलावा।

अनेक स्थानोंपर इन्होने शब्दोके विकृत रूपको भी स्थान दिया है। उदाहरण लीजिए —

मैं बेक़रार खाकमें कबतक मिला करूँ,
कुछ मिलने या न मिलनेका तो भी क़रार कर।

इसमे क़रार शब्द इकरार (प्रतिज्ञा, वचन, शर्त) का बिगडा हुआ रूप है। इन्होने अनेक प्रचलित हिन्दी शब्दोका प्रयोग किया है; नासिख और आतिशकी तरह उन्हे चुन-चुनकर वहिष्कृत नही किया। निम्नलिखित हिन्दी शब्द इनकी कवितामें मिलते है —

ठौर, दीप, समय, पर्वत, विश्राम, अच्छर, विस्तार, मूँद, ध्यान, नगर, साँझ, ढव, उदास, मुखडा, जोग, तजना, ससार, सुमरन, भस्म, अचरज, हंकार, राम-कहानी, मेह, निदान, अधाधुध, गूदड इत्यादि।

उस समय उर्दू जनताके अधिक नजदीक थी। इसमे हमारी जमीन बोलती थी। वलीने तो इसका वडा ख्याल रखा था। उस समय उर्दू सचमुच हरियानाकी वेटी मालूम होती थी पर वादके कवियोने उसे अरबी-फारसी वस्त्रालकारोसे ऐसा सजाया कि वह शहरी और नकली हो गयी और उसकी कल्पनाएँ इस सरजमीनमे नही ईरान और अरबमे पनपने लगी।

'मीरने स्वतत्रतापूर्वक सैकडो हिन्दी शब्दोका प्रयोग किया। उन्होने भाषापर कोई वन्धन स्वीकार न किये, और अपनी भाषा बनाई। कहा ही

१. दुर्वल। २. आकाश।

करते थे कि उर्दू जामा मस्जिदकी सीढियोपर नाक रगडनेसे, न कि फ़ारसी अरवी पढनेसे, आती है। व्याकरण भी इनका अपना ही है। सैर, जराहत, जान, गुलगश्त स्त्रीलिग है पर इन्होने पुल्लिगवत् प्रयोग किये है, इसी प्रकार हश्र, ख़ाव, गुलजार, नश्तर पुल्लिग है जो इनके यहाँ स्त्रीलिंग हो गये है। हिन्दी एव फारसी शब्दोको मिलाकर नये विशेषण वना लिये है। जैसे शीरीवचन। 'मेरा'की जगह 'मुझ'का प्रयोग किया है। जैसे मुझ इश्क अर्थात् मेरा इश्क। जहॉ आज एकवचनका प्रयोग होता है वहाँ प्राय. वहुवचनका प्रयोग किया है। जैसे राते हमारियाँ (हमारीकी जगह), बाते तुम्हारियॉ (तुम्हारीकी जगह) विशेपणोको तो अव भी दिल्ली और लखनऊमे कभी-कभी वहुवचनान्त वोलते है, जैसे मीठियाँ रेउडियाँ पर मीरने क्रियाओका भी वहुवचनान्त प्रयोग किया है। जैसे—

कहीं दिलकी लागैं लगी छुटतियाँ है।
और भी बातें न मानियाँ, ऑखें तरसतियॉ हैं,
बातें बहुत बनाइयाँ थीं, काहे को लड़तियाँ-
झगड़तियाँ हो।

इत्यादि अनेक उदाहरण मिलते है।

अनेक स्थानोपर सकर्मक क्रियाओमे जहॉ 'ने' का प्रयोग होता है, 'ने' गायव है। जैसे मै काम किया, हम उसे देखा। यह दक्षिणका प्रभाव है। 'देखता रहता हूँ' की जगह 'देख रहता हूँ', टूट गया की जगह 'टूटा गया' इत्यादि रूप इनकी कवितामे पाये जाते है। उस वक्त दिल्लीमे किसीका किसू, कभीका कभू रूप प्रचलित था, मीरने इन्ही रूपोमे उनका प्रयोग किया है।

व्याकरण-दोप मीरके समकालिक अन्य कवियोमे भी पाये जाते है। सौदाको देखिए —

कहा तबीब[1] ने अहवाल[2] देखकर मेरा,
कि सख्त जान है सौदा का आह क्या कीजै।
हर संगमें शरार[3] है तेरे ज़हूरका,
मूसा नहीं जो सैर करूँ कोहे तूरका।

ऐसा जान पडता है कि उस समय ये प्रयोग प्रचलित रहे होंगे और व्याकरण-सम्मत समझे जाते रहे होंगे।

मीऱने उर्दूको उर्दू रखनेकी कोशिश की, हिन्दकी बेटी समझ उसकी परवरिश की, इस जमीनके वातावरणसे भाव और शब्द लिये। यदि उर्दूवाले आज भी उनकी देनको समझ सकते तो इस देशकी राष्ट्रभाषासे उसका सम्बन्ध न टूटता और उसमे जो विदेशीपन, जो विजातीय तत्त्व आ गये हैं उन्हे सुधारा जा सकता। खुसरो, वली, मीरने जो रास्ता दिखाया था, उसे हम भूल गये है; नतीजा यह है कि उर्दूके क्रियापद तो सब हिन्दीके है पर शब्द नब्बे प्रतिशत अरबी-फ़ारसीके। जैसे पाँव इस जमीन के हो और एक विदेशी सिरकी कलम लगा दी गयी हो।

२. अन्य कवियोंसे तुलना

कवियोंकी तुलना करना कोई अच्छी परम्परा नही। मानव-हृदयकी अनुभूतियाँ प्राय. मिल जाती है; कभी-कभी किसी कविके पूर्व-कथित भाव मे परवर्त्ती कविको सशोधनकी अपेक्षा मालूम होती है। कभी दूसरी भाषा के भाव जो स्मृतिमे है आ जाते है। मीरने ही हाफिज, सादी इत्यादि फारसी कवियोसे अनेक भाव लिये है। इसलिए मै इस पहलूको नही लेता पर कवियोकी प्रकृति तथा उनकी अभिव्यक्तिमे जो अन्तर होता है, उस दृष्टिसे तुलनाकी दो-चार बाते लिखूँगा। मीर अपने ढगके एक ही कवि है, कोई उनका अनुकरण कर नही पाया है।

---

१. चिकित्सक। २ अवस्था, हालत। ३. चिनगारी, अग्नि।

मीर और सौदा :—मीरके समकालिक कवियोमे सौदा सबसे प्रसिद्ध थे। यह जोडी उर्दू साहित्यमे लासानी है। दोनो अपनी ज़मीन पर निराले है। दोनोके साँचे अलग है। एक रोता है, दूसरा हँसता है। एकके हृदयसे यदि कसक भरी आह निकलती है तो दूसरेके मुँहसे आनन्दके फव्वारे छूटते है। मीरके यहाँ सादगी है, करुणा है, सौदाके यहाँ वैभव है, आन-बान है। इसीलिए मीर ग़ज़लके बादशाह है, सौदा कसीदे*के। जान पडता है, सौदाके सामने भी ये झगडे थे। वह स्वय कहते है :—

लोग कहते है कि सौदाका क़सीदा है ख़ूब,
उनकी खिदमतमें लिये मैं यह ग़ज़ल जाऊँगा।

अर्थात् लोग कहते है कि सौदाका कसीदा ही अच्छा होता है; उनके सामने मै आज यह गजल पेश करूँगा (कि देखो यह किससे कम है ?)।

हकीमकुदरत उल्लाखाँ कासिम अपने तजकिरेमे लिखते है :—

"जोम बाजे आँकि सरआमद गुअराय फसाहत आमा मिर्जा मोहम्मद रफीअ सौदा दर गजलगोई बूए न रसीद अमाहक आनस्त कि "हर गुले रा रगो बूए दीगरस्त।" मिर्जा दरियाएस्त बेकराँ व मीर नहरेस्त अज़ीमुश्शान। दर मालूमाते कवायद 'मीर' रा बर मिर्जा बरतर अस्त, व दर कूवत शायरी मिर्जा रा बर 'मीर' सरवरी।"

सच बात तो यह है कि गजल, क़सीदे और मस्नवीके क्षेत्र अलग-अलग है। जिस प्रकार कसीदेके लिए विषयोत्कृष्टता, शब्द-योजना और सज्जाकी आवश्यकता होती है उसी प्रकार गजलके लिए प्रेमी-युगलके विचारोका स्वाभाविक प्रवाह, मिलन-सुखकी एव वियोग-दु खके अनुभव एव सवेदनशीलताकी आवश्यकता होती है। मीर साहबकी प्रवृत्ति वेदनामयी,

---

*कसीदा=फारसी तथा उर्दूमे कविताके उस अगको कहते है जिसमे कवि किसी महान् पुरुष अथवा उत्तम वस्तुका प्रशसात्मक वर्णन करता है।

तीव्र सवेदनशीला थी और हृदय हसरतोसे भरा हुआ था, उसमे गर्मी थी। इसलिए वह गजल क्षेत्रके अधिपति बन गये। उनकी भाषा सरल और स्पष्ट है। वर्णन ऐसा है मानो प्रियतम (माशूक) और प्रेमी (आशिक़) दोनों आमने-सामने बैठे बाते कर रहे है।

'सौदा' की प्रकृति इसके विपरीत थी। वे सासारिक प्राणी थे। उनका झुकाव आन-बान भोग-विलासकी ओर ज्यादा था। उनमे गभीरता न थी, चचलता थी। उनकी रचनाकी पक्ति-पक्तिसे यह प्रकट होता है मानो उनका हृदय उमगोमे उठा जा रहा है। उनके हृदयमे जोश है, तबीयत चुलबुली है, कहनेका ढग जानते है। जो चीज उठाते है, उसे शब्दोसे, अलंकारोसे ख़ूब सजाकर लोगोके सम्मुख रख छोडते है। रूप एव सज्जाका जादू उनके पास है।

मीर साहब चुलबुले नही, गभीर है। उनका हृदय-सागर निस्तब्ध है। वह अनुभव रखते है। उनकी दृष्टि है, स्वप्न है और नयनोमे एक हलका विनोद है जो कहता है—तू कालचक्रको नही जानता; मै उसके करिश्मे देख चुका हूँ। वह कल्पनाको अनुभवकी स्वाभाविकता पर ठुकरा देते है।

दोनोंपर उपयुक्त सम्मति :—एक दिन 'मीर' और 'सौदा'की रचनाओके विषयमे दो व्यक्तियोमे विवाद हो गया। दोनो ख्वाजा बासित के शिष्य थे। उन्हीके पास जाकर प्रार्थना की कि आप फैसला कर दीजिए। उन्होने कहा—"दोनो प्रतिभाशाली कवि है किन्तु अन्तर इतना है कि 'मीर' साहबका कलाम 'आह' है और मिर्जा साहब (सौदा) का कलाम 'वाह' है। उदाहरणमे उन्होने 'मीर' का निम्नाकित शेर पढा —

सिरहाने 'मीर' के आहिस्ता बोलो,
अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

पश्चात् मिर्जाका शेर पढा :—

'सौदा'की जो बाली[1] पे गया शोरे क़यामत[2],
खुद्दामे-अदव[3] बोले, अभी आँख लगी है।

पहलेमे वेचारगी, दूसरेमे क्या शान है! ख्वाजा साहवकी यह भाव-भरी आलोचना बहुत उपयुक्त है।

× × ×

मीरके दो शेर है.—

हमारे आगे तेरा जव किसीने नाम लिया,
तो दिल सितमज़दहको हमने थाम-थाम लिया।
क़सम जो खाइए तो तालए-ज़ुलेखाकी,
अज़ीज़ मिस्रका भी साहव एक ग़ुलाम किया।

सौदाके भी इसीसे मिलते-जुलते शेर है :—

चमनमें सुबह जो उस जंगजूका नाम लिया,
सबाने तेग़का मौजे-रवाँ से काम लिया।
कमाल बन्दगीए-इश्क़ है खुदावन्दी,
कि एक ज़नने महे-मिस्र-सा ग़ुलाम किया।

देखिए, दोनोके भाव एक-दूसरेसे कितने लड गये है। दोनोके प्रथम शेर देखिए। मीर कहते है कि "हमारे सामने जव किसीने तेरा नाम लिया तो मैने अपने पीड़ित हृदयको थाम-थाम लिया" कि कही वह फट न जाय। सौदा कहते है कि "चमन (उद्यान) मे प्रात.काल जो उस लड़ाकेका नाम लिया तो (नाम लेते ही) सबा (प्रभाती वायु) ने

१. सिरहाना, तकिया, छत। २ प्रलयका नाद। ३ साहित्य-सेवक।

चलती तरंगोसे तलवारका काम लेना शुरू कर दिया" (अर्थात् उसकी स्मृति आते ही, वियोगके कारण, प्रभाती शीतल वायु भी कृपाणके समान चुभने लगी ।)

दोनोके कहनेका अपना-अपना ढंग है पर सौदाके शेरमे उतनी स्वाभाविकता, उतनी सादगी, उतनी विदग्धता नही है जितनी 'मीर' के शेरमे है । 'हमारे आगे तेरा जब किसीने नाम लिया' (तो क्या हुआ ?) 'दिल सितमजदहको हमने थाम-थाम लिया ।' कितनी वेदना है ! सीधे तीर-सी लगती है । कहनेका ढग ऐसा है मानो मीर साहब अपने प्रियतमके पास बैठे आप-बीती कह रहे है । दूसरे चरणने तो गज़ब ढा दिया है । 'दिल सितमजदहको हमने थाम-थाम लिया ।' थाम-थाम लेना ! कितना स्वाभाविक है ! थामको दोहराकर कविने कमाल पैदा कर दिया है ।

सौदाने बड़ी छलाँग मारी है पर कल्पनाका जोर कहाँ तक जायगा ? विशेषत. प्रेमके मामलेमे । ऐसा कौन प्रेमी होगा जिसे प्रियतमके वियोगमे प्रभाती वायु दु.खदायिनी न प्रतीत हो ? यह मामूली-सी बात है जिसे सब जानते है और शुरूसे अबतक कहते आये है । सौदाने भी उसी आशय पर एक दीवार खड़ी की है । दिमागी ख़ूराक सौदामे भले ही हो पर हृदय को सहलानेवाला रस उसमे नहीं है ।

× ×

चमनमें गुलने जो कल दावए-जमाल किया,
जमाले-यारने मुँह उसका ख़ूब लाल किया ।

—मीर

बराबरीका तेरी, गुलने जब ख़याल किया
सबाने मार थपेड़ा मुँह उसका लाल किया ।

—सौदा

मीरके शेरका आशय है कि "कल उद्यानमे गुल (गुलका रग लाल माना गया है) ने जो अपनी सुन्दरताका दावा किया तो प्रियतमके सौन्दर्यने (अपनी स्मृति दिलाकर शर्मसे) उसका मुँह लाल कर दिया।" सौदा कहते है कि "तेरी बराबरी करनेका गुलने ज्योही विचार किया त्योही सबा (प्रभाती वायु) ने थपेडोसे उसका मुँह लाल कर दिया।"

दोनो शेरोमे विलक्षणता है। सौदाका शेर बहुत अच्छा हुआ है, उसमे बडी शोखी है पर मीर गभीर है, वे उतावले नही। उनका जोश इस दर्जे का नही कि थप्पडो और थपेडोकी नौबत आती। उनके मौनमे एक सजीदगी है जो चुप होकर भी बोलती है।

× ×

गिला मै जिससे करूँ तेरी बेवफ़ाईका,
जहॉमें नाम न ले फिर वह आशनाईका।

—मीर

गिला लिखूँ मैं अगर तेरी बेवफ़ाईका,
लहूमें ग़र्क़ सफ़ीना[1] हो आशनाईका।

—सौदा

देखिए, मीरमे निराशाकी कितनी गहरी छाया है। वह निराश हो अपने प्रियतमसे कहते है —"जरा सोचो, तुम मुझपर कितना जुल्म करते हो, मुझे कितना सताते हो? इससे तो तुम्हारे ही यश पर धब्बा लगता है न? मै जिसे भी तुम्हारी निष्ठुरताकी कहानी सुनाऊँगा वह फिर ससार मे प्रेमका नाम न लेगा।"

सौदा साहब लिखनेकी धमकी देते है—जब आप बेवफाईका गिला लिखेगे तो जो होना होगा, होगा, मीरके यहाँ तो सिर्फ कहने-सुनने मात्रसे विरक्ति हो रही है।

---

१. नौका।

मीर और ख़्वाजा मीर दर्द :—मीरके समकालिक कवियोमे मीर दर्द ही ऐसे है, जिसमे 'मीर'के काव्यके अनेक गुण पाये जाते है। डा० अब्दुल हकने लिखा है—"यूँ तो मीर साहबके तमाम नामवर हमासिरो[1] के कलाममे सादगी, सफाई और रोजमर्रेकी पाबन्दी पाई जाती है लेकिन महज सलासत[2] और जबानकी फसाहत[3] काम नही आ सकती जब तक कि जबानमे ताजगी, अदाए-मतलबमे शिगुफ्तगी[4] और ख्यालमे बुलन्दी व जिद्दत[5] न हो। मीर साहबके कलाममे यह सब .खूबियाँ एक जा[6] जमा है और फिर उसपर दर्द और तासीर .खुदादाद[7] मालूम होती है। इसी वजहसे वह अपने तमाम हमासिरोमे मुमताज़[8] और उर्दू शायरोमे ख़ास दर्जा रखते है और उनकी इस मुमताज खसूसियत[9] को अब तक कोई नही पहुँचा है। अलबत्ता ख़्वाजामीर दर्द एक ऐसे शायर है जिन्होने सलासत व फसाहते जबानके साथ इख़लाकी मजामीन[10] और सूफियाना ख्यालात की चाशनी दी है और कलाममे दर्द पैदा किया है। बयानमे जिद्दत और ताजगी भी पाई जाती है जिसमे वह मीर साहबके लगभग पहुँच जाते है लेकिन बयानमे वह घुलावट नही जो मीर साहबके हाँ है....न सादगीके साथ वह सोजो-गुदाज है और न तख़य्युल[11] की वह शान है जो शायरी की जान है। ख़सूसन बयानका वह अनोखा अन्दाज जिसमे एक ख़ास नजाकत होती है नजर नही आता। मीर साहबका बडा कमाल इसी मे है।"

मीर और अनीस : जलन, दु ख और तडपनके बयानमे अनीस उर्दू साहित्यमे बेजोड है। मर्सियेके बादशाह है। फसाहतमे उनका स्थान बहुत ऊँचा है पर वह भी मीरके बराबर नही पहुँचते। मीरमे जो सरलता

---

१. समकालिक। २. प्रसाद गुण, सरलता। ३. लाटिका, कोमलता, ख़ुशबयानी। ४. प्रफुल्लता। ५. नवीनता। ६ स्थान। ७ ईश्वरदत्त। ८. विशिष्ट। ९. विशेषता। १० नैतिक विषय। ११ कल्पना।

और अकृत्रिमता है वह अनीसमे नही । उनमे कुछ तकल्लुफ है । अब्दुलहक साहब लिखते है—"मीर इससे बिल्कुल बरी है । वह खुद सोजोगमका पुतला है और उसका शेर सोजोगमकी सही और सच्ची तस्वीर है जिसमे तकल्लुफका नाम नही । अनीसके हाँ ख्यालके मुकाबिलेमे अलफाज[1] की बहुतायत है और ख्यालसे पहिले लफ्ज पर नजर पडती है लेकिन मीरके अशआर[2] मे अलफाज ख्यालके साथ इस तरह लिपटे हुए है कि पढनेवाला महो[3] हो जाता है और इस लफ्जे-ख्यालसे अलग नजर नही आता । मीर अनीसके हाँ धूमधाम और बुलन्द-आहगी[4] है, मीरके हाँ सकून और खामोशी है और उसके शेर चुपके-चुपके खुद बखुद दिलमे असर करते चले जाते है जिसकी मिसाल उस नश्तरकी-सी है जिसकी धार निहायत बारीक और तेज है उसका असर उसी वक्त मालूम होता है जब वह दिल पर जाकर खटकता है । अनीस रुलाते है, मीर खुद रोता है । यह आप बीती है और वह जगबीती ।"

मीर, जुरअत और सौदा:—मीरके भावोकी छाया अनेक उर्दू कवियोकी रचनाओमे दिखाई पडती है । यदि उन सबका तुलनात्मक वर्णन किया जाय तो एक बडा ग्रथ तैयार हो जायगा । यहाँ मै दो एक उदाहरण दूँगा :—

अब करके फ़रामोश[5] तो नाशाद करोगे,
पर हम जो न होंगे तो बहुत याद करोगे ।

—मीर

है किसका जिगर जिसपे यह बेदाद करोगे,
लो हम तुम्हें दिल देते है क्या याद करोगे ?

—जुरअत

---

१ लफ्ज (शब्द) का बहुवचन रूप । २ शेरका बहुवचन । ३ तल्लीन । ४ उच्च ध्वनि । ५ विस्मृत ।

जिस रोज़ किसी औरपे बेदाद करोगे,
यह याद रहे हमको बहुत याद करोगे।

—सौदा

तीनों शेरोके अर्थ साफ़ है और सबमे 'मीर'की भावना, किंचित् परिवर्तनके साथ, विराजमान है। सौदाके लिए तो भावापहरणका कलक लगाया ही नही जा सकता क्योकि वह मीरके समकालिक थे पर 'जुरअत' महाशयके शेरमे 'मीर' साफ झलक रहे है।

'सौदा' के शेरमे अजीब लुत्फ है पर मीरके दूसरे पदने उसमे एक ऐसा अनुभूतिका वातावरण पैदा कर दिया है जिससे वह दिलमे चुभकर रह जाता है।

मुद्दई मुझको खड़े साफ़ बुरा कहते हैं,
चुपके तुम सुनते हो बैठे, इसे क्या कहते हैं ?

—मीर

तूने सौदाके तईं क़त्ल किया कहते हैं,
यह अगर सच है तो ज़ालिम इसे क्या कहते हैं ?

—सौदा

आईना रुख़को तेरे अहले सफ़ा कहते हैं,
उसमें दिल अटके है मेरा इसे क्या कहते हैं ?

—जुरअत

तीनों कवियोके भावोमे कोसोंका अन्तर है, हाँ जमीन एक है। मिसरेका अन्तिम प्रश्नवाक्य सबने अपनाकर पूर्त्तियाँ की है। सौदाके शेरमे कुछ विशेषता नही है। वह पूछते है कि 'तूने सौदाको कत्ल किया है, ऐसा लोग कह रहे है। अगर यह सच है तो ऐ जालिम ! यह क्या है ?'— पहिले तो अभी बात ही शुबहेमे है, 'अगर सच है' ने कत्लको सदिग्ध

वना दिया है, फिर जो कत्ल है वही पूछता है, यह वेतुकी वात है। बिना जुर्म सावित हुए ही आपने 'जालिम'की उपाधि भी दे डाली। शेर बहुत साधारण है। हाँ, दूसरे दोनोमे कुछ विचित्रता है।

मीर अपने प्रियतमसे पूछते है –"देखो, तुम्हारे सामने ही मेरे विरोधी मुझको स्पष्ट बुरा-भला कहते है, मेरा अपमान करते है और तुम चुपचाप वैठे-वैठे सुनते रहते हो, उसका प्रतिवाद करनेकी तनिक चेष्टा नही करते। वोलो, यह क्या है ?" (यही तुम्हारा प्रेम है) भाषा कितनी सादी है, विल्कुल वातचीतकी जवान है। एक शव्द फालतू नही। मुलायम और रोती हुई जवान है।

जुरअत तो इस समय दूसरी ही दुनियामे है। उनका कहना है कि "स्वच्छताके पारखी तेरे मुख-मण्डलको आईना (दर्पण) कहते है तव दर्पण–जैसी चिकनी चीज पर भी मेरा दिल क्यो अटक रहा है ?" (चिकनी चीज पर फिसलना चाहिए, अटकना नही।)

एक जमीन पर अनेक कवियोके अनेक शेर मिलते है—

वुरक़ेको उठा चेहरेसे वह बुत अगर आये,
अल्लाहकी क़ुदरतका तमाशा नज़र आये।

—मीर

हरगिज़ न मुरादे दिले[1]-माशूक़ बर[2] आये,
यारव ! न शवे-वस्ल[3] के पीछे सेहर[4] आये।

—मसहफ़ी

उस पर्दानशींसे कोई किस तरह बर आये,
जो ख़ावमें भी आये तो मुँह ढाककर आये।

—जुरअत

---

१ हृदयकी इच्छा। २ पूर्ण होना। ३ मिलन-रजनी। ४ प्रभात।

फ़िरदौस[1] में ज़िक्र उस लबेशीरीं[2] का गर आये,
पानी देहने[3] चश्मए-कौसर[4] में भर आये।

—जौक

'मीर' ने प्रियतमके सौन्दर्यको भगवद्‌विभूति बताकर उसे बहुत ऊँचा उठा दिया है।

३. मीरके कवि मित्र

बहुत-से लोग समझते है कि मीरकी तुनुकमिजाजी और स्वाभिमानके कारण, उनके मित्र रहे ही न होगे पर ऐसी बात नही। जैसे हृदयहीन, अभिमानी और असंस्कृत लोगोके प्रति वह आँख उठाकर न देखते थे, उन्हे मुँह न लगाते थे वैसे ही सहृदय, काव्य-रसिक व्यक्तियो तथा श्रेष्ठ कवियोके प्रति उनमे स्नेह और सम्मानका भाव भी था। उनके कई ऐसे मित्र थे जो स्वय अच्छे कवि थे और जिनके साथ मीरकी खूब निभती थी। (१) शर्फुद्दीन अली खाँ 'पयाम' के पुत्र नजमुद्दीन अलीखाँ 'सलाम' इनके परम मित्रोमे थे। प्राय· दोनो साथ रहते थे। दोनोमे काव्य-चर्चा होती, गप्पें लगती, साहित्य एव सस्कृतिके अनेक पहलुओं पर बहस होती थी। (२) इनके दूसरे दोस्त श्रेष्ठ उर्दू कवि ख्वाजा मीर दर्द थे। मीर दर्दके यहाँ हर महीनेकी पद्रह तारीखको मुशायरा हुआ करता था, उसमे मीर साहब नियमित रूपसे सम्मिलित हुआ करते थे। बादमे ख्वाजा साहबके अनुरोध पर यह मुशायरा मीरके ही मकान पर होने लगा था। (३) मीर सज्जाद—यह भी आगरा (अकबराबाद) के रहनेवाले थे पर दिल्ली (शाहजहानाबाद) रहने लगे थे। इनके यहाँ भी मुशायरे हुआ करते थे और मीर उनमे जाते थे। मीर इन्हे मानते थे। (४)

---

१ स्वर्ग। २. मधुराधर। ३ जिह्वा। ४ स्वर्गस्थ अमृतकुण्ड विशेष।

मीर विलायत अलीखाँ, (५) अशरफ अलीखाँ 'फुगाँ', (६) मोहम्मद इस्माइल 'वेताव', (७) इनाम उल्लाखाँ 'यकीन', (८) मियाँ शहावुद्दीन 'साकिव', (९) सय्यद अव्दुलवली 'अजलत', (१०) मीर अव्दुलहई 'तावाँ', (११) हसन अली 'शौक', (१२) 'कायम' चाँदपुरी, (१३) फजल-अली 'दाना', (१४) मीर हसन, (१५) हिदायत उल्ला 'हिदायत', (१६) मोहम्मद आरिफ 'आरिफ', (१७) 'वेदार', (१८) लाला टेकचन्द 'वहार', (१९) मीर अव्दुल रसूल 'निसार', (२०) मोहम्मद अमानुल्ला 'गरीव', (२१) जियाउद्दीन 'जिया', (२२) मियाँ इब्राहीम, (२३) मीर घासी मीर अली नकी (इनके यहाँ भी मुशायरा होता था) ।

४. मीरके शिष्य

मीरका यश यद्यपि दूर-दूर तक फैला किन्तु उनके जैसे महाकविके शिष्योकी सख्या इनी-गिनी थी । वह जल्द किसीको शिष्य न बनाते थे । मन्नतको इन्कार कर दिया, सआदत यार खाँ 'रंगी' से कह दिया तीर-तलवार चलाना सीखिए, शायरी जिगरसोजीका काम है, उसमे न पड़िए । नासिखके साथ भी यही हुआ । पत्थरका कलेजा और फौलादका दिल वाला ही उनके साथ निभ सकता था । इन वातोका विचार करते हुए कोई आश्चर्य नही कि उनके शिष्योकी सख्या वहुत कम है । कई तो इनसे उत्साह दान न पा दूसरोके पास चले गये और उनके शिष्य हो गये । उनकी पुस्तक 'नकातुश्शुअरा' से ज्ञात होता है कि उनके निम्नलिखित शिष्य थे —

१. मीर अव्दुलरसूल 'निसार'—अकवरावादसे ही दिल्ली आये थे । मीर लिखते है —"मेरे मश्विरेसे शेर कहते है ।··· वहुत आरास्ता-पैरास्ता, सजीदा और समझदार है । मै इनके तौर-तरीकसे वहुत खुश हूँ ।"

काव्यका उदाहरण—

जो है याक़ूब यूसुफ़ देखना मंज़ूर आँखोंसे ,
तो इतना फूटकर मत रो कि जाये नूर[1] आँखोंसे ।

२. **मोहम्मद मोहसिन 'मोहसिन'**—"मीर'के भतीजे थे । काव्यका उदाहरण—

क्या जानिए वह शोख किधर है किधर नहीं ,
हमको तो तन-बदनकी भी अपनी खबर नहीं ।

३. **वृन्दावन 'राकिम'**—पहिले 'मीर' के शिष्य थे, बादमें 'सौदा'के पास चले गये । काव्यका उदाहरण—

ऐ बाग़बाँ ! नहीं तेरे गुलशनसे कुछ ग़रज़ ,
मुझको क़सम है छेड़ूँ अगर बर्गोबर कहीं ।
इतना ही चाहता हूँ कि मैं और अन्दलीब[2] ,
आपसमें दर्देदिल कहें टुक बैठकर कहीं ।

४. **मियाँ जग्गन**—काव्यका एक ही उदाहरण, नकातुश्शुअरामें मिलता है :—

इस दिल मरीज़े इश्क़को आज़ार ही भला ,
चंगा हो तो सितम है, यह बीमार ही भला ।

५. **तजल्ली**—मीर मोहम्मद हुसेन नाम था । बेगम बाग, चाँदनी चौक, दिल्लीमें रहते थे । मीरके भाँजे और दामाद थे । काव्यका उदारण—

मेरी वफ़ापे तुझे रोज़ शक़ था ऐ ज़ालिम !
य' सर यह तेग़ है, ले अब तो एतबार आया ।

---

१. प्रकाश । २ बुलबुल ।

६. जान——जानअली नाम था। काव्यका उदाहरण—

ज़िक्र उस ज़ुल्फ़की दराज़ीका,
सुबहसे ताबशाम होता है।

७. शकेबा——शेख़ गुलाम हुसेन। काव्यका उदाहरण—

नीम बिस्मिल उसने गर छोड़ा शकेबा[1] ग़म नहीं,
पर यह ग़म है एतबारे दस्ते क़ातिल उठ गया।

८. लुत्फ़—मिर्जाअली नाम। हैदराबादकी तरफके रहनेवाले थे। काव्यका उदाहरण—

बढाया क़िस्सए संबुल सबाने हद लेकिन,
फ़िसाना ज़ुल्फ़का तेरे बहुत दराज़ रहा।

९ मजनूँ——राय भीमनाथके पुत्र थे, साधुप्रकृति, नगे सिर, सनकी, अपनेमे लीन-से रहनेवाले। काव्यका उदाहरण—

जिससे जी चाहे मिलो तुम, न किसीसे पूछो,
मुझसे क्या पूछते हो, अपने ही जीसे पूछो।

१०. मिर्जा—आका मिर्जा नाम था। काव्यका उदाहरण—

बालींसे जब वह फिर गया, ग़शसे खुली तब आँख,
मुझ नारसाके तालए-ख़ाबीदा[2] देखना।

इनके अतिरिक्त रासिख, बेगम, नज़रने भी शिष्यता ग्रहण की थी। अपनी पुस्तक 'इन्तखाब मस्नवियाते मीर' मे स्व० सर शाह मुहम्मद सुलेमानने निम्नलिखित नाम भी दिये है :—

सखुन, इश्क, आर्जू, अब्रू।

---

१ सब्र करनेवाला। २ सुप्त भाग्य।

५. मीरके कुछ विरोधी

मीरके तीक्ष्ण [illegible] 'मीर' के कई विरोधी हो गये थे। [illegible] —उन्होंने मीरके तज़किरे 'नकातुश्शुअरा' के [illegible] था। मीरने भी इनके काव्यपर आपत्तियाँ की हैं। [illegible] थो। १. 'आजिज़'—[illegible] भी उनके कलामपर आक्षेप किये हैं। [illegible] दोनों के विरोधी थे। एक बार [illegible]—

[illegible]

एक बार मीर [illegible]—

[illegible]

मीर और [illegible] परस्पर [illegible]

[illegible]

[illegible] हुआ। [illegible] करता [illegible]

६. जान---जानअली नाम था। काव्यका उदाहरण—

जिक्र उस ज़ुल्फ़की दराज़ीका ,
सुबहसे ताबशाम होता है।

७. शकेबा---शेख़ गुलाम हुसेन। काव्यका उदाहरण—

नीम बिस्मिल उसने गर छोड़ा शकेबा[1] ग़म नहीं ,
पर यह ग़म है एतबारे दस्ते क़ातिल उठ गया।

८. लुत्फ़—मिर्जाअली नाम। हैदराबादकी तरफके रहनेवाले थे। काव्यका उदाहरण—

बढाया क़िस्सए संबुल सबाने हद लेकिन ,
फ़िसाना ज़ुल्फ़का तेरे बहुत दराज़ रहा।

९ मजनूँ---राय भीमनाथके पुत्र थे, साधुप्रकृति, नगे सिर, सनकी, अपनेमें लीन-से रहनेवाले। काव्यका उदाहरण—

जिससे जी चाहे मिलो तुम, न किसीसे पूछो ,
मुझसे क्या पूछते हो, अपने ही जीसे पूछो।

१०. मिर्जा—आका मिर्जा नाम था। काव्यका उदाहरण—

बालींसे जब वह फिर गया, ग़शसे खुली तब आँख ,
मुझ नारसाके तालए-खाबीदा[2] देखना।

इनके अतिरिक्त रासिख, वेगम, नजरने भी शिष्यता ग्रहण की थी। अपनी पुस्तक 'इन्तख़ाब मस्नवियाते मीर' मे स्व० सर शाह मुहम्मद सुलेमानने निम्नलिखित नाम भी दिये है .—

सखुन, इश्क, आर्ज़ू, अब्रू।

---

१ सब्र करनेवाला। २ सुप्त भाग्य।

५. मीरके कुछ विरोधी

मीरके तीक्ष्ण स्वभावके कारण, तथा द्वेष-वश भी, 'मीर' के कई विरोधी हो गये थे। इनमे दो-तीन प्रमुख है। १. खाक़सार—इन्होने मीर के तजकिरे 'नकातुश्शुअरा'के उत्तरमे एक तजकिरा लिखा था। मीरने भी इनके काव्यपर आपत्तियाँ की है। जान पडता है, दोनोको दोनोसे चिढ थी। १. 'आजिज़'—यह भी मीरके विरोधी थे और मीरने भी उनके कलामपर आक्षेप किये है। ३. बक़ा—यह 'मीर' और सौदा दोनो के विरोधी थे। एक बार मीरके लिए कहा—

पगड़ी अपनी सँभालिएगा मीर,
और बस्ती नहीं, य' दिल्ली है।

एक वार मीर और सौदा दोनोपर फब्तियाँ कसी—

मीर व मिर्ज़ाकी शेरखानीने
बस कि आलममें धूम डाली थी।
खोल दीवान दोनों साहबके,
ऐ 'बक़ा' हमने जो ज़ियारत की।
कुछ न पाया सिवाय इसके सख़ुन
एक तू-तू कहे है एक ही-ही।

मीर और सौदा एक दूसरेकी इज्जत भी करते थे और बीच-बीचमे परस्पर आक्षेप करनेसे भी नही चूकते थे।

६. मीरकालिक काव्य-गोष्ठियाँ

मुशायरेकी परम्परा भारतीय है। उर्दू मुशायरेका आरम्भ दिल्लीमे हुआ। खाँ आरज़ू इसके प्रारम्भकर्ता थे। उनके यहाँ काव्य-गोष्ठी हुआ करती थी जिसमे सौदा, मीर, दर्द, जुर्रत इत्यादि सम्मिलित हुआ करते

थे। 'आजाद' के 'आबेहयात' से पता चलता है कि एक वार इस मुशायरे मे सौदाने यह शेर पढा—

आलूदए-क़तराते-अर्क़[1] देख जबीं[2] को।
अख्तर[3] पड़े झाँके हैं फ़लक[4] पर से ज़मीको।

वस्तुत यह फारसीके कवि कदसीके निम्मलिखित शेरका भावापहरण मात्र था—

आलूदए-क़तराते-अर्क़ दीदः जबीं रा।
अख्तर ज़फ़लक मी नगर्द रूएज़मींरा।

खाँ 'आर्ज़ू' ने तुरन्त कहा—

शेरे सौदा हदीसे क़दसी है,
चाहिए लिख रखें फ़लक पर मलक।

खाँ आर्ज़ूका मतलव तो था कि तुमने कदसीकी चोरी की है पर सौदाने दूसरा अर्थ लेकर समझा कि मेरी तारीफ कर रहे है, और खाँ आर्ज़ूसे लिपट गये।

एक दिन मीर गोष्ठीमे नही थे। वह खाँ आर्ज़ूके घरपर ही रहते थे। जब वाहरसे आये तो आर्ज़ूने सुनाया कि आज मिर्जा सौदाने बहुत उम्दा मतला[5] पढा—

चमनमें सुबह जो उस जंगजूका नाम लिया।
सबाने तेग़का आबे-रवाँसे काम लिया।

---

१ पसीनेकी बूँदोसे युक्त। २ ललाट,माथा। ३. तारा। ४. आकाश। ५. एक शेर।

'मीर'ने सुनते ही यह मतला बनाकर पढा—

हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया।
दिल सितमज़दहको हमने थाम-थाम लिया ॥

खॉ आर्जू इसे सुनकर उछल पडे और कहा—.खुदा चश्मे बद[1] से महफ़ूज[2] रखे।

खॉ आर्जूके यहॉकी गोष्ठी बन्द हो गयी तब मीरदर्दके यहॉ यह सिलसिला शुरू हुआ। फिर वही महफ़िल मीरके यहॉ होने लगी। मीरअली नकी और हाफिज अलीमके यहॉके मुशायरोका जिक्र भी मीरने किया है।

धीरे-धीरे मुशायरेकी परम्परा लोकप्रिय और विकसित होती गयी और दूर-दूर तक फैल गयी। सैर, तमाशे, त्यौहार एव उत्सवोके अवसर पर प्रायः काव्य-गोष्ठियाँ होती थी। इनके कारण उर्दूकी उन्नतिमे बडी सहायता मिली।

७. मीर द्वारा किये गये संशोधन

डा० फ़ारूकीने नकातुश्शुअरा के आधार पर अन्य कवियोकी रचनामे 'मीर' द्वारा किये सशोधनोकी चर्चा की है। मीरने उक्त ग्रन्थमे जहॉ-तहॉ लिखा है कि अगर यह शेर मेरा होता तो इस तरह लिखता या अगर अमुक शब्दकी जगह अमुक शब्द होता तो ज्यादा अच्छा होता। इन सशोधनोसे मीरके काव्यकी गहरी पकडका पता चलता है।

'मजमूँ'का शेर है :—

मेरा पैग़ामे वस्ल[3] ऐ क़ासिद[4],
कहो सबसे उसे जुदा करके।

---

१ बुरी नजर। २ बचाये। ३. मिलन-सदेश। ४. दूत।

मीरने 'कहो'को 'कहियो' करके शेर यों कर दिया :—

मेरा पैग़ामे वस्ल ऐ क़ासिद,
कहियो सबसे उसे जुदा करके।

मज़मूँ :

मजमूँका एक दूसरा शेर है जिसमे संशोधन किया गया है।

मज़मूँ तू शुक्रकर कि तेरा नाम सुन रक़ीब[1],
ग़ुस्सेसे भूत हो गया, लेकिन जला तो है।

संशोधन :

मज़मूँ तू शुक्रकर कि तेरा इस्म[2] सुन रक़ीब,
ग़ुस्सेसे भूत हो गया, लेकिन जला तो है।

'यकरंग' (मुस्तफाख़ाँ) का शेर है—

सच कहे जो कोई सो मारा जाय,
रास्ती हैगी दार[3] की सूरत।

'मीर'ने 'सच'को 'हक़' कर दिया। लिखा है—"ब एतकाद फ़क़ीर बजाय सच हर्फ़ हक अव्वल अस्त।"

'यकरंग'का एक शेर है —

इसको मत बूझो सजन औरोंकी तरह
मुस्तफ़ाख़ाँ आशना[4] यकरंग है।

'मीर' लिखते है कि अगर मेरा शेर होता तो इस तरह लिखता :—

मत तलव्वुन[5] इसमें समझें आपसा
मुस्तफ़ाख़ाँ आशना यकरंग है।

---

१ प्रतिद्वन्द्वी। २ नाम। ३ सूली। ४ प्रेमी। ५ बदल जाना।

मीर सज्जाद अकबराबादीका एक शेर है :—

काफ़िर बुतोंसे दाद न चाहो कि याँ कोई
मरजा सितमसे उनके तो कहते हैं हक़ हुआ ।

मीरने 'काफिर'को 'बातिल' कर दिया ।

उन्हीका एक और शेर है :—

हिज्रे शीरीं[1] में क्योंकि काटेगा
हिज्रकी यह पहाड़-सी रातें ।

मीरने सशोधन किया—

किस तरह कोहकन[2] पे गुज़रेंगी,
हिज्रकी यह पहाड़-सी रातें ।

सशोधनसे शेर खिल गया है ।

इनाम उल्लाखाँ 'यकीन'का शेर है :—

मजनूँकी खुशनसीबी करती है दाग़ मुझको,
क्या ऐश कर गया है ज़ालिम दिवानेपनमें ।

'मीर'का सशोधन देखिए :—

मजनूँकी खुशमआशी करती है दाग़ मुझको ।

'ख़ाकसार'का शेर है—

ख़ाकसार उसकी तू आँखोंके कहे मत लगियो,
मुझको इन ख़ानाख़राबों ही ने बीमार किया ।

मीरने 'बीमार किया'की जगह 'गिरफ्तार किया' कर दिया ।

इन सशोधनोसे पता चलता है कि मीर उर्दू की प्रकृति तथा काव्यकी मनोभूमिके कितने बडे उस्ताद थे ।

---

१. शीरी (ईरानकी प्रसिद्ध प्रेमिका) के वियोगमे । २. पहाड़ तोड़नेवाला अर्थात् शीरीका प्रेमी फरहाद ।

मीरकी रचनाएँ

●

मीरने पद्य और गद्य, उर्दू और फ़ारसी दोनोमे, अपनी रचनाएँ की है। इनका विस्तार भी बहुत दूर तक है। पद्य-रचनाएँ तो अनेक प्रकारकी और अनेक रगोमे है। हम यहाँ उनकी सक्षिप्त चर्चा करेगे।

१. पद्य-रचनाएँ

पद्य-रचनाओको अनेक भागोमे विभाजित किया जा सकता है। जैसे.—

क. गजल

ख. कसीदा

ग. मस्नवी

घ. स्फुट (रुबाई, वासोख्त, हफ्तबन्द इत्यादि)

क. गजल—गजल मीरका अपना क्षेत्र है। इसके वह बादशाह है। इस मैदानमे उनकी बराबरीका दावा आज तक कोई न कर सका।' ऐसा जान पडता है कि वह गजलगोईके लिए ही पैदा हुए थे। उनमे इतना दर्द, इतना सोजो-गुदाज है कि दिल रो-रोके रह जाता है। वह सीधे दिलको छूते है। छोटी बहरोकी गजले तो अत्यन्त उच्चकोटिकी है। इनमे उनके आँसू ही शेर बन गये है। डा० फ़ारूकीने ठीक ही लिखा है कि हर मिसरा ख़ूनकी बूँद है और दिल प्रेम-पीड़ाकी अग्निशाला है। शब्दोमे वह घुलावट है कि 'दिल बताशा-सा घुला जाता है जी।' इनकी गजले अपनी सफाई और बाँकपनके लिए उर्दू साहित्यमे प्रसिद्ध है। विचारोका अनोखा तारतम्य, कहनेका ढग और वेदनाकी अनुभूतिने इनकी गजलोको सबसे

अलग ही रखा है। सौदा, जौक, मीरदर्द, गालिब कोई इन तक नही पहुँचता। इनका ढग निराला है। इनकी नकल बहुतोने की पर कोई वह बात पैदा न कर सका जो इनमे है।

गजलोंके छ. दीवान है। और हर दीवानमे सैकडो गजले है।

ख. क़सीदा—उच्च कोटिका निर्वाचन, शानदार शब्दयोजना, बन्दिशकी चुस्ती, हृदयकी चचलता और हाजिरजवाबी, यह सब क़सीदेके लिए आवश्यक उपादान है। इन बातोकी 'मीर' मे कमी थी। वह अपनी सादगी, गहरी अनुभूति, गभीरता और बॉकपनके लिए प्रसिद्ध थे, इसीलिए इनके क़सीदे बहुत कम है और जो है उन्हे भी उच्चकोटिका नही कहा जा सकता। इनकी गजलो और कसीदोको देखनेसे साफ-साफ प्रकट होता है कि गजल और कसीदा दोनोके क्षेत्र एक दूसरेसे बिल्कुल भिन्न है। 'कसीदा' के बादशाह सौदा है। वह उनकी रगीन तबीयतके सर्वथा अनुकूल है, जब मीरकी प्रकृति ही उसके प्रतिकूल है।

मुसाहिबो और अमीरोकी प्रशसामे क़सीदे न कहनेका यह भी एक कारण था कि इनकी सादगी, स्वाभिमान, इनकी सम्पूर्ण प्रकृति किसी मनुष्यकी चापलूसी एवं झूठी प्रशंसाके अनुकूल न थी। इन्हे अपनी गरीबी सह्य थी पर किसीके आगे झुकना मजूर न था। खुद ही कहा है:—

मुझको दिमाग़ वस्फ़े[1] गुलो[2] यासमन[3] नहीं,
मैं जूँ नसीमेबाद[4] फरोग़े चमन[5] नहीं।
कल जाके हमने 'मीर'के दरपर सुना जवाब,
मुद्दत हुई कि याँ वह ग़रीबुलवतन[6] नहीं।

---

१. गुण। २. फूल, प्राय: गुलाबके अर्थमे आता है। ३. चमेली। ४ शीतल, मन्द, सुगन्ध, प्रभाती, समीर। ५. चमन प्रकाशित करनेवाला। ६. लावतन।

इसीलिए इनके कसीदे बहुत थोडे हे और जो है भी वे शिथिल है। अपनी 'दीवाने-गालिब' की टीकामे 'तवातबाई' ने तो यहाँ तक कहा है कि वह कसीदा कहना जानते ही नही। 'तजकिरा गुलशने बेखार' मे नवाब शेफ्ताने भी कुछ ऐसी ही राय जाहिर की है। 'शेरुलहिन्द' मे जरूर इस क्षेत्रमे भी इनकी सफलताका किञ्चित् उल्लेख है पर वह निरर्थक है। यो तो कोई महाकवि जो कुछ भी लिखता है उसमे उसकी कुछ-न-कुछ विशेषता होती ही है। पर इतना तय हैं कि कसीदे लिखने लायक़ तबीयत ही उन्होने नही पाई थी, न उन्हे इस क्षेत्रमे सफलता मिली। किसीकी प्रशसा वा निन्दामे इन्होने जो भी लिखा, उसमे जोर नही है, रस नही है, मजा नही है। इन चीजोके मजे लूटने हो तो 'सौदा'के चमनकी सैर कीजिए—वहाँ आपको निराली सजावटके दर्शन होगे, मादक-सुगध प्राप्त होगा और नयनानन्ददायिनी सुषमा देखनेको मिलेगी।

ग. मस्नवी —गजलके पश्चात् सबसे अधिक सफलता मस्नवीमे ही 'मीर'को मिली है। इस सफलताकी मर्यादाके सम्बन्धमे विद्वज्जनोमे मत-भेद है। सर शाह सुलेमानने अपनी पुस्तक 'इन्तखाब-मस्नवियात-मीर'मे शेरुल हिन्दके प्रणेता आचार्य अब्दुलसलाम नदवीका यह मत उद्धृत किया है—

"वह मस्नवियातके मूजिद[1] और उम्दा नमूना है। उनमे कुदरती अन्दाज हैं। उन्हीकी बदौलत मस्नवीको तरक्की हुई। मीर हसन और शौकको उन्हीका मुकल्लिद[2] समझना चाहिए।"

यह कहना कि वह मस्नवीके आविष्कारक है, इतिहास-विरुद्ध और अप्रामाणिक है क्योकि उनके काफी पहिले दक्षिणमे मस्नवियाँ लिखी जा चुकी थी। हाँ, मीरके कारण उत्तर भारतमे मस्नवी जरूर पनपी और उन्नत हुई। मीरहसन और शौकको 'मीर' का अनुयायी वा अनुकरणकर्ता

---

१ आविष्कारक, ईजाद करनेवाला। २ अनुकर्त्ता, अनुयायी।

कहना भी सत्य नहीं क्योकि मीर हसन और शौक दोनो पूरी तरह लखनवी रगमे रँगे हुए है । मीर हसन तो बचपनसे ही लखनऊ आ गये थे और वही के वातावरणमे उनका मानसिक गठन हुआ तथा उनकी कविता जगी इसलिए उनपर लखनऊकी जीवनशैलीका गहरा प्रभाव है और उनकी मस्नवी 'सेहरुलबयान' उसी रगमे डूबी हुई है। 'शौक' पर भी उसी परम्पराका प्रभाव है; जब मीर देहलवी जीवन-धारणाओसे अत्यधिक प्रभावित है, अपनी गजलोमे भी और मस्नवियों मे भी ।

छोटी-बड़ी, बुरी-भली, कुल मिलाकर, इन्होंने २५ मस्नवियाँ लिखी है:—१. मस्नवी दर जश्ने होलो, २. मस्नवी दर बयाने होली, ३. मस्नवी दर तारीफे सग व गर्बा, ४. मस्नवी दर बयाने बुज, ५. मस्नवी दर बयाने मुर्गबाजाँ, ६. मस्नवी दर हजो खाना खुद, ७. मस्नवी दर हजो खानए खुद कि बसबव शिद्दते बाराँ खराबशुद: बूद, ८ मस्नवी दर मजम्मत बरशगाल कि बाराँ दर इमसाल ज्यादा शुद: बूद, ९. मस्नवी दर हजो नाअह्ल, १०. मस्नवी तम्बीहुलजेहाल, ११. मस्नवी अजदरनामा, १२. मस्नवी दर मजम्मत आईनादार, १३. मस्नवी दरहजो अकवल, १४ मस्नवी दर बयान कजब, १५. मस्नवी शिकारनामा; १६. मस्नवी साकीनामा, १७. मस्नवी शोलए इश्क, १८. मस्नवी दरियाए इश्क, १९. मस्नवी इश्किया, २०. मस्नवी मुआमिलाते इश्क, २१. मस्नवी जोशे इश्क, २२ मस्नवी एजाजे इश्क, २३. मस्नवी निसगनामा, २४. मस्नवी ख्वाबोख्याल, २५. मस्नवी दर मजम्मत दुनिया ।

इनमे छः प्रेमाख्यान-प्रधान वा इश्किया मस्नवियाँ है, सात ऐसी है जिनका सम्बन्ध नवाब आसफ उद्दौला और उनके दरबारसे है । कुछ छोटी-छोटी ऐसी है जो मीरके अपने जीवन वा पारिवारिक वातावरणसे सम्बन्धित है। एक मस्नवी अपने मुर्गेके मर्सियेमे लिखी है। लिखते है "मेरा प्यारा मुर्गा था। बडा अच्छा था। एक दिन उसपर बिल्लीने आक्रमण किया। मुर्गेने बडी वीरतासे सामना किया पर अन्तमे मारा गया।"

मस्नवी बिलकुल मामूली है पर पढनेमे मनोरंजन जरूर होता है। इसमेका एक शेर है—

> झुका बसूए क़दम सर खरोसे बेजाँका,
> ज़मींपै ताज गिरा हुदहुदे सुलेमाँका।

एक मस्नवी अपनी बिल्लीपर भी लिखी है उसमे कहते है कि "मेरे एक बिल्ली थी। बडी वफादार और सन्तोषी थी। उसके बच्चे जीते न थे। एक बार पाँच बच्चे हुए और पाँचो जिये। तीन बच्चे लोग माँग ले गये। दो रहे। दोनो मादा थे। एकका नाम 'मोनी' रखा, दूसरेका 'मानी'। 'मोनी' मेरे एक दोस्तको पसन्द आई; वह ले गये। 'मानी' के स्वभावमे दीनता और सादगी बहुत थी, उसने फ़क़ीरका साथ न छोडा।"

एक मस्नवीमे घरकी खराबी और बरसातकी तकलीफोकी शिकायत है। दीन-दुखियोपर इस मौसिममे जो गुजरती है उसका स्वाभाविक वर्णन है। चित्र-सा खीच दिया है। इसी प्रकार निसगनामेमे वर्षाकी यात्राका अद्‌भुत वर्णन है।

यह ठीक है कि उनकी इश्किया-मस्नवियाँ अच्छी है क्योकि इनमे उसी प्रेमवेदनाकी अभिव्यक्ति है जो गजलकी आत्मा है और जो मीरकी अपनी विशेषता है पर इस प्रकारकी मस्नवियोमे सफलता प्राप्त करना अपेक्षाकृत सरल कार्य था क्योकि फारसी साहित्यमे इस प्रकारकी तथा रहस्यात्मक—रज्मिया तथा बज्मिया—मस्नवियोकी लम्बी परम्परा रही है। उसमे कल्पनाकी उड़ानकी गुजाइश रहती है। इसलिए इन मस्नवियोकी अपेक्षा सामान्य और अन्य कवियोके लिए अछूते विषयोपर उन्होने जो मस्नवियाँ लिखी उसके लिए उनकी प्रशसा की जाती है। इस क्षेत्रमे वह यकता है। प्रेमाख्यानक मस्नवियोमे उनके प्रतिद्वन्द्वी भी है पर इस क्षेत्रमे वही वह है। इन विषयोपर लिखना बडा कठिन था। इनमे यथार्थका बडा सुन्दर चित्रण हुआ है।

उर्दू-मस्नवीको मीरने प्रगति दी। उसे एक रूप प्रदान किया। ख़ाजा अलताफ हुसेन हालीने लिखा है:—

"अब तक उर्दूमे जितनी इश्किया मस्नवियाँ हमारी नजरसे गुजरी है उनमेसे सिर्फ तीन शख़्सोकी मस्नवी ऐसी है जिसमे शायरीके फरायज[1] कमो-वेश अदा हुए है। अव्वल मीरतक़ी जिन्होने गालिबन सबसे अव्वल चन्द इश्किया-किस्से उर्दू मस्नवीमे बयान किये है। जिस जमानेमे 'मीर' ने यह मस्नवियाँ लिखी है उस वक्त उर्दू जबानमे फ़ारसीयत बहुत गालिब[2] थी और मस्नवीका कोई नमूना उर्दू जबानमे गालिबन मौजूद न था और अगर एकाध नमूना मौजूद भी हो तो उससे चन्दाँ मदद नही मिल सकती। इसके सिवा अगर्चे गजलकी जबान बहुत मँज गयी थी मगर मस्नवीका रास्ता साफ होने तक अभी बहुत जमाना दरकार था। इसलिए 'मीर'की मस्नवियोमे फ़ारसी तरकीबे, फ़ारसी मुहाविरोके तर्जुमे और ऐसे फ़ारसी अलफाज जिनकी अब उर्दू जबान मुतहम्मिल[3] नही हो सकती, उस अन्दाज से, जो आजकल फसीह उर्दूका मैयार[4] है, बिला शुबहे किसी क़दर ज्यादा पाये जाते है। नीज उर्दू जबानके बहुतसे अलफाज व मुहाविरात, जो अब मतरूक[5] हो गये है, 'मीर'की मस्नवीमे मौजूद है। अगर्चे यह तमाम बाते 'मीर'की गजलमे भी कमोबेश पाई जाती है, मगर ग़जलमे इनकी खपत हो सकती है क्योकि गजलमे अगर एक शेर भी साफ और उम्दा निकल आये तो सारी गजलको शान लग जाती है; वह उम्दा शेर लोगोकी जबान पर चढ जाता है और बाकी पुरकुन[6] अशआरसे कुछ सरोकार नही रहता। लेकिन मस्नवीमे जस्ता-जस्ता[7] अशआरके साफ़ और उम्दा होनेसे काम नही चलता; जजीरकी एक कडी भी नाहमवार[8]

---

१. कर्तव्य, उत्तरदायित्व। २ प्रधान, प्रभुत्वमय। ३. सहनशील। ४. कसौटी। ५ परित्यक्त। ६. सामान्य, भरतीके। ७. स्फुट, यत्र-तत्र। ८. असमान।

और बेमेल होती है तो सारी जंजीर आँखोमे खटकती है। पस इन असबाब से शायद मीरकी मस्नवी आजकलके लोगोकी निगाहमे न जँचे मगर इससे 'मीर'की शायरीमे कुछ फर्क नही आता। जिस वक्त मीरने यह मस्नवी लिखी है उस वक्त उससे बेहतर जबानमे मस्नवी लिखनी इमकान[1]से खारिज थी।" बावजूदे कि मीरसाहबकी उम्र गजलगोईमे गुजरी है, मस्नवीमे भी बयानके इन्तजाम और तसल्सुल[2]को उन्होने कही हाथसे जाने नही दिया और मतालिब[3]को बहुत खूबीसे अदा किया है जैसा कि एक मश्शाक[4] और माहिर[5] उस्ताद कर सकता है। इसके सिवा साफ और उम्दा शेर भी 'मीर'की मस्नवीमे बमुकाबिले उन अशआरके, जिनमे पुराने मुहाविरे या फारसीयत गालिब है, कुछ कम नही है, सदहा अशआर 'मीर'की मस्नवियोके आजतक लोगोके जबानजद चले आते है।

"अगर्चे मीरकी मस्नवियोमे किस्सापन बहुत कम पाया जाता है, उन्होने चन्द सही या सहीनुमा वाकआत बतौर हिकायतके सीधे-सादे तौर पर बयान किये है, न उनमे किसी शादी या तकरीब या वक्त और मौसिमका बयान किया गया है, न किसी बाग या जगल या पहाड़की फ़िजा या और कोई ठाठ दिखाया गया है। मगर जितनी मीरकी इश्किया मस्नवियाँ हमने देखी है वह सब नतीजाखेज और आम मस्नवियोके बर-खिलाफ बेशर्मी और बेहयाईकी बातोसे मुबर्रा[6] है।"

जो हो इसमे सन्देह नही कि मीरने उर्दू गजलके साथ उर्दू मस्नवी की भी बड़ी सेवा की है। गजलोकी तरह उनकी मस्नवियाँ भी काफ़ी लोकप्रिय हुई। नीचे कुछ लोकप्रिय शेरोके नमूने दिये जाते है :—

नै काबे नै दैरके[7] क़ाबिल,
मज़हब उनका है सैरके क़ाबिल।

× ×

१ सभावना। २. शृखलाबद्धता। ३ अभिप्राय। ४. अभ्यस्त। ५. निष्णात। ६ रहित। ७ मन्दिर।

न एक बूए ख़ुश ही हवा हो गयी,
वह रंगीनिए बाग़ क्या हो गयी।

× ×

कहते हैं, डूबते-उछलते हैं।
डूबे ऐसे कोई निकलते हैं।

× ×

रफ़्ता-रफ़्ता हुआ हूँ सौदाई।
दूर पहुँची है मेरी रुसवाई।

× ×

आह जो हमदमी-सी करती है।
अब तो वह भी कमी-सी करती है।

× ×

होश जाता रहा निगाहके साथ।
सब्र रुख़सत हुआ एक आहके साथ।

यथार्थ चित्रः—ऊपर मै कह चुका हूँ कि दैनिक जीवनकी बातोके बडे ही यथार्थ चित्र मीरने अपनी मामूली विषयोपर लिखी मस्नवियोमे दिये है। जैसे अपने मकानकी हालत बयान करते है.—

कही सूराख़ है कहीं है चाक। कही झड़-झड़के ढेर-सी है ख़ाक।
कहीं घूँसोंने खोद डाला है। कहीं चूहेने सिर निकाला है।
कहीं घर है किसी छछूँदरका। शोर हर कोनेमें है मच्छरका।
कहीं मकड़ीके लटके हैं जाले। कहीं झींगुरके बेमज़ो नाले।
कोने टूटे है ताक़ फूटे हैं। पत्थर अपनी जगहसे छूटे हैं।
कड़ी तख़्ते सब ही धुएँसे सियाह। उसकी छतकी तरफ़ हमेशा निगाह।

कभी कोई सँपोलिया है फिरे। कभी छतसे हज़ारपाये गिरे।
कोई तख्ता कहींसे टूटा है। कोई दासा कहींसे छूटा है।
दबके मरना हमेशा मद्देनज़र। वर कहाँ साफ़ मौतका है घर।

इश्किया-मस्नवियाँ निम्नलिखित हैं —

१ शोलए-शौक
२. दरियाए-इश्क,
३. जोशे-इश्क,
४. मुआमिलाते-इश्क,
५ ऐजाजे-इश्क,
६. खावो-ख्याल।

इनमे शोलए-शौक सर्वमतसे इनकी सर्वोत्कृष्ट मस्नवी है। एक सरल एव सक्षिप्त कथा है और बडी मार्मिक है। इसमे परशुराम और उसकी प्रेमिका तथा पत्नीकी मार्मिक प्रेम-कथा है। इसका अन्त बडा कारुणिक है। पता नही जिस कथाको आधार बनाया गया है वह कहाँ तक सच्ची है। पर परशुरामका जिक्र पुरानी कविता और कागज-पत्रोंमे कई बार आया है जिससे जान पडता है कि वह पटना—अजीमाबाद—का निवासी था। 'शौक' नीमवीने अपनी किताव 'यादगारे-वतन' मे लिखा है कि परशुराम दरअस्ल मुसलमान था और उसका नाम मुहम्मद हसन था। वह मोहम्मदशाहके राज्यकालमे पटनेके छोटी पटनदेवी मुहल्लेमे रहता था। यह नवयुवक अच्छे शरीफ खानदानका था। फारसी और हिन्दी (भाखा) का विद्वान् था। एक दिन गगा किनारे टहल रहा था। वही एक महाजनकी लड़की, जिसका नाम श्यामसुन्दरि था, स्नान कर रही थी। दोनोकी चार आँखे हुई और दोनो एक दूसरे पर मोहित हो गये। अब मोहम्मद हसन का यह हाल कि उसके मुखडेके दर्शनके लिए, पागलकी भाँति, इसकी

शोलए-शौक़

गलीमे बार-बार चक्कर लगाता, कभी घण्टो प्रतीक्षामे घाट किनारे टहलता रहता। धीरे-धीरे प्रेम घना हुआ। पागलपन बढता गया। तब उसने सस्कृतका अध्ययन आरम्भ किया। अभ्याससे उसमे अच्छा पाण्डित्य प्राप्त किया; सैकडों श्लोक कण्ठस्थ किये; वेद एव रामायण पढा और तब योगीके वेशमे महाजनके यहाँ आने जाने लगा। अपना नाम परशुराम रखा। महाजनके यहाँ बडी आव-भगत हुई, सारा घर महात्माके चरणोमे था। कुछ दिनो बाद श्यामसुन्दरिका विवाह किसीसे निश्चित हुआ। परशुराम ही इस अवसरके लिए पण्डित नियत किये गये। ठीक शादीके दिन घरमे आग लगी। लोग अपनी-अपनी जान बचाकर भगे। श्यामसुन्दरि अपने कमरेमे बेहोश हो गिर पड़ी। परशुराम उसे गोदमे उठा घर लाये। उधर महाजनका सारा घर जलकर राख हो गया। उसे और उसके घरवालोको विश्वास हो गया कि लड़की उसीमे जल-भुन गयी। उधर परशुरामने श्यामसुन्दरिको महाजनके पास पहुँचाना चाहा किन्तु सब रहस्य ज्ञात होने पर वह जानेको तैयार न हुई। तब विवाह करके दोनो प्रसन्नतापूर्वक रहने लगे।…पर एकाध वर्ष बाद परशुराम छतरके मेलेसे लौट रहा था कि नाव भँवरमे पड़कर उलट गयी। खोजनेपर यह न मिला। लोगोने समझा डूब गया। श्यामसुन्दरिके पास समाचार पहुँचा तो उसने सिर पीट लिया और प्राण त्याग दिये। उधर परशुराम डूबा नही, कुछ दूर जाकर किनारे लग गया। उसे श्यामसुन्दरिकी मृत्युकी ऐसी चोट लगी कि वह पागल हो गया। उधर नदी किनारे विचित्र बात दिखाई दी। आधीरातको एक तीव्र प्रकाश आकाशसे उतरता और परशुराम-परशुराम पुकारता। परशुरामने जब यह हाल सुना तो और बेचैन हुआ, नहा-धोकर कपड़े बदले, एक कागजपर कुछ लिखा, उसे सदरीकी जेबमे डाला और कुछ मित्रोंके साथ नौकासे नदीके दूसरे किनारे पहुँचा। आधीरात बीत जानेपर आकाशसे वह ज्योति उतरी, किनारो पर दौडी और उसका नाम लेकर पुकारने लगी। परशुरामकी विचित्र अवस्था हो गयी। बड़ी तेजीसे वह ज्योतिकी

ओर लपका, और मित्रोके दौडते-दौडते वह गया, वह गया न जाने कहाँ आँखोसे ओझल हो गया। थोडी देर बाद जलके ऊपर दो तीव्र ज्योतियाँ उभरी और 'परशुराम-श्यामसुन्दरि', 'परशुराम-श्यामसुन्दरि' कहती एक दूसरेकी ओर बढने लगी। जब दोनो मिल गयी तो भक्से बिजलीका सा प्रकाश हुआ और समस्त नदी-तल पर उजाला हो गया। फिर धीरे-धीरे वह समाप्त हो गया और फिर कभी कोई ज्योति दिखाई न दी, न परशुरामके शवका ही कही पता चला। सदरी जो उनने नावपर उतार दी थी उसकी जेबसे कागज़ निकला जिसे ख़ाजा अब्दुल्ला 'ताईद' ने अपने पत्रके साथ शाह आलमके बेटे शाहजादा मिर्जा जवान बख़्त जहाँदार शाहको भेजा था। यह पत्र 'ताईद'के पत्रोके एक संग्रहमे मीरके समय प्रकाशित हो गया था।

घटना सही हो या गलत, उसने अनेक उर्दू साहित्यकारोको प्रेरित किया। मीर, बाकरअली, शौक नीमवी—मतलब कई आदमियोने इसपर काव्य एव गद्य लिखे।

'दरियाए-इश्क' बहुत लोकप्रिय हुई और अब भी है। इसमे भी प्रेम-कथा है। एक प्रेमी एक स्त्रीपर मोहित था। जब बदनामी होने लगी, छल-छन्द रचकर प्रेमीको बीच नदीमे डुबा दिया। तब प्रेमिका भी बीच धारमे 'वह कहाँ है' कहती कूद पड़ी और डूब गयी। इसी प्रकार प्राय. सभी इश्किया-मस्नवियाँ दु खान्त है। 'ख़ाबो-ख़्याल'मे इन्होने अपने प्रेम एव दिवानेपनका हाल लिखा है। 'जोशे-इश्क' विचारोकी सूक्ष्मता एव बाँकपनसे अलंकृत है पर वह उतनी प्रसिद्धि न प्राप्त कर सकी। 'मामिलाते-इश्क' बड़ी है किन्तु उच्चकोटिकी नही है।

दरियाए इश्क़

सबसे बडी मस्नवी 'शिकारनामा' है जिसमे नवाब आसिफउद्दौलाके शिकार और सैरका विस्तृत वर्णन है। इसमे बीच-बीचमे गज़ले भी आ

गयीं है पर इसमे बयानकी वह सफाई नही है जो शोलए-इश्क और दरियाए-इश्क इत्यादिमे है। इसमे फारसीयत भी ज्यादा है।

घ. रुबाइयाँ—जैसे गजल प्रेमाभिव्यक्ति और मस्नवी कथा वा उपाख्यान के लिए उपयुक्त है वैसे ही रुबाई या चतुष्पदी तात्त्विक एवं आध्यात्मिक अनुभूतिके लिए सर्वोत्तम साधन है। फ़ारसीमे रुबाईकी परम्परा यही बताती है। उमर ख़ैयाम, फरीदउद्दीन अत्तार, अबूसईद अबुलख़ैर, सेहाबी इत्यादि इसके प्रमाण है। उर्दूमे इस परम्पराका पालन नही हुआ। 'मीर' ने भी सौ-सवा सौ रुबाइयाँ कही, पर वे उस ऊँचे पाये-पर न पहुँच सकी। इस दिशामे मीरसे अधिक सफलता खाजा मीरदर्दको प्राप्त हुई। आधुनिक उर्दू साहित्यमे तो रुबाईने पर्याप्त प्रगति की है।

च. मर्सिये या मृत्युगीत—इसमे मृत व्यक्तिके गुणों एव कार्योंका स्मरण किया जाता है। उर्दूमे ज्यादातर मर्सिये हज़रत हुसैन और उनके साथियो एव स्वजनोकी शहादतपर लिखे गये है। पहले मर्सिये अनेक छन्दोमे लिखे जाते थे किन्तु 'जमीर' लखनवीने मुसद्दस (षट्पद) को ही मर्सियेके लिए विशेष छन्द बना दिया और अब उसीका रिवाज चल निकला है।

खोजसे अबतक 'मीर' के एकतालीस मर्सिये प्राप्त हुए है और सर-फ़राज कौमी प्रेस, लखनऊसे 'मरासीमीर' के नामसे प्रकाशित हुए है। ये मर्सिये बहुत उच्चकोटिके तो नही है पर उस ज़मानेके विचारसे, जब मर्सियागोईकी दशा अच्छी न थी, अच्छे कहे जा सकते है।

छ. वासोख़्त—यह पद्यका एक विशेष प्रकार है जिसमे प्रेमी अपने प्रियतमकी बेवफाई, अन्याय-अत्याचार, प्रतिस्पर्द्धीके प्रति अनुचित आसक्ति तथा विरह-वेदनाकी शिकायते करता है। इसमे एक प्रकारका उलाहना होता है तथा छिपी धमकी कि यही हाल रहा तो हमे भी सम्बन्ध त्याग कर देना पडेगा। फ़ारसी भाषामें वहशीने इसका आविष्कार किया परन्तु उर्दूने इस मामलेमें फारसीको पछाड दिया और बहुत आगे बढ़ गयी।

यद्यपि दक्षिणमे मीरसे पहले ऐसी कविताएँ लिखी गयीं जिन्हें वासोख्त कहा जा सकता है पर उत्तरमे इसे स्पष्टरूप देनेवाले मीर ही थे। 'आजाद' ने 'आवेहयात' मे इन्हे ही वासोख्तका आविष्कारक वताया है। मीरके कुल चार वासोख्त मिलते है। दो काफी अच्छे है। वादमे देहलीमे मोमिन तथा लखनऊमे जुरंत, आतिश, अमानत और शौकने इसे वहुत ऊँचा उठाया।

इसी प्रकार मुसल्लस (त्रिपदी), मुखम्मस (पंचपदी) तथा हफ़्तवन्द लिखकर उन्होने नई-नई दिशाएँ उर्दू को दी।

ज. फ़ारसी-काव्य—'मीर' ने फारसीमे भी काव्य-रचना की है जिसमे चन्द रुवाइयाँ, एक अधूरी मस्नवी और ४८१ गजलें है। जो विशिष्टता इनके उर्दू काव्यमे है वही फारसीमे भी पाई जाती है। वही दर्द, वही प्यास, वही वेचैनी, वही सोजोगुदाज फारसी-रचनाओमे भी है। उर्दू की भाँति ही फारसीमे भी इन्होने अपनी राह खुद वनाई, किसीका अनुकरण नही किया।

२. गद्य-रचनाएँ

मीरने गद्यमे भी कई पुस्तकें लिखी है पर ये सब फारसी भाषामे है। इनके नाम निम्नलिखित है:—

१. नकातुश्शुअरा,

२ फैजे-मीर,

३. जिक्रे-मीर

नकातुश्शुअरा:—उर्दू काव्य तथा समीक्षाके इतिहासमे इस पुस्तकका वडा महत्त्व है। इसमे उर्दूके प्राचीन कवियोकी चर्चा है। इसे रेख़तागोईका पहिला तज़किरा कहा जाता है। मीर अपनी प्रस्तावनामे खुद कहते है :—"यह उर्दूका पहला तजकिरा है इसमे एक हजार कवियोका हाल लिखूँगा। मगर उनको न लूँगा जिनके कलामसे दिमाग परीशान हो।" हाल वहुत

सक्षेपमे दिये गये हैं। जिनको लिया है उनमेसे भी चन्द ही है जो आक्षेपसे बचे है। उर्दूसे परिचय रखनेवाले जानते है कि वली उर्दूका सबसे पहला प्रसिद्ध कवि है। वलीका उर्दूमे वही दर्जा है जो हमारे यहाँ चन्दका हैं। उस वेचारेको भी आपने शैतान बना दिया है :—"वली, शायरीस्त अज शैतान मशहूरतर।"

बहुतोंको उनका यह आक्षेप खला। मीरखॉ 'कमतरीन' इस जमानेमे एक पुराने शायर थे। 'मीरखॉं' नाम, 'कमतरोन' उपनाम। बहुत वृद्ध थे। शाह आबरू और नाजीके देखनेवालोमेसे थे किन्तु इस दौरमे अभी तक मौजूद थे। पुराने आदमी थे। कुछ विशेष प्रतिभा न थी पर जो बात सूझ जाती उसे अवसरका विचार किये बिना कह डालते थे। कोई उनकी जबानसे बचा नही। वेश-भूषा भी इनकी दुनियासे निराला होती थी। एक बड़ी घेरेदार पगड़ी सिरपर बॉधते थे, लम्बा-सा दुपट्टा बल देकर कमरपर लपेटते थे, एक सोटा हाथमे रखते थे। उन दिनों प्रत्येक शुक्रवारको सैदुल्लाख़ाँकी चौक (दिल्ली) पर मेला लगता था। अपनी गजलोको परचोपर लिख वही जा खड़े होते। लड़के और शौकीन सहृदय रसिक दाम देते और एक-एक, दो-दो परचे खुशीसे ले जाते थे। उन्हे 'मीर' साहबकी उक्त टिप्पणी पर बड़ा क्रोध आया। एक पद्यमे 'मीर' साहबको खूब फटकारा और अन्तमे लिखा—

"वली पर जो सखुन लाये उसे शैतान कहते हैं।"

बादमे फतेहअली, मीर कल्लन, कुदरत उल्ला कासिम, शफीक औरगाबादी इत्यादिने भी मीरके दोष-दर्शनपर आक्षेप किये है पर आज तक इस ग्रन्थकी इज्जत और लोकप्रियता वैसीकी वैसी है।

नकातुश्शुअराका रचना-काल सन् १७५२ ई० है। तासीका कथन है कि मीरके तजकिरेके पूर्व कई तज़किरे मौजूद होगे। कहा जाता है कि इमामउद्दीन, ख़ाँ आरजू और सौदाने भी तजकिरे लिखे थे। पर आज वे

प्राप्य नही है इसलिए उनके सम्बन्धमे कुछ कहना कठिन है। आज जो तजकिरे प्राप्त है, उनमे यह सबसे पुराना है। उर्दूमे समीक्षाका आरम्भ इसी पुस्तकसे होता है। यह ठीक है कि उस जमानेकी समीक्षा आजकी समीक्षा नही है, हो भी नही सकती। उस समय लोग अपनी राय रखते थे और उसे जोरोसे प्रकट करते थे, तटस्थ वृत्ति वाली समीक्षा वहुत वादमे आई है। इस ग्रन्थसे उस युगकी अनेक बातो तथा सामाजिक स्थितियो एव प्रेरणाओपर प्रकाश पडता है।

फैजे-मीर—फारसी भाषामे लिखी एक छोटी पुस्तक है। इसके रचना-कालका कुछ पता नही चलता पर इसे उन्होने अपने पुत्र फैजअलीके लिए लिखा था। इसमे दरवेशोके पाँच किस्से है, जिनमे उनकी सिद्धियोका आँखो-देखा हाल भी है। इस पुस्तकका महत्त्व यह है कि इससे 'मीर' के चरित्र तथा उनकी धार्मिक मान्यताओपर प्रकाश पड़ता है। भाषा शक्तिसे भरी और सुलझी हुई है।

जिक्रे-मीर—मीरके जीवनको समझनेके लिए इस पुस्तकका बड़ा महत्त्व है। इसमे उन्होने आत्म-कथा लिखी है। यद्यपि इसमे कवि एवं कविता-विषयक बाते और घटनाएँ कम है किन्तु तात्कालिक सामाजिक एव ऐतिहासिक पृष्ठभूमिकी जानकारीके लिए यह पुस्तक बडे कामकी है। फिर इससे मीरके जीवनकी उठान, उनकी मानसिक उथल-पुथल, उनकी दृढता, उनके चरित्र, तूफानोमे नावकी भाँति डूबती-उतराती, फिर भी आगे बढ़ती हुई जिन्दगीपर पर्याप्त प्रकाश पडता है। उनके पारिवारिक जीवनकी भी अनेक बाते इससे मालूम होती है। मुहम्मदशाहकी मृत्युसे लेकर गुलाम कादिर रुहेलाके लोमहर्षक अत्याचारो तककी ऐतिहासिक घटनाएँ विस्तार-पूर्वक इसमे मिलती है। मुगलोके उस पतन-युगमे दिल्ली तथा मराठो, सिखो, जाटो, अग्रेजो और पठानोकी प्रतिद्वन्द्विताके बीच कम्पित उत्तर भारतकी अवस्थाके जीवित चित्र इसमे दिखलाई पड़ते है।

दरियाए-इश्क़—अपनी मस्नवी दरियाए इश्कको मीरने फ़ारसी गद्यमे भी लिखा है। यह पुस्तक अभी तक छपी नही है। कुछ समय पहिले 'नैरग' पत्रके 'मीर' अकमे इसके कुछ भाग निकले थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मीरने गद्य, पद्य, गज़ल, रुबाई, कसीदे, वासोख़्त, उर्दू फारसी, मतलब अनेक रचनाएँ दोनों भाषाओमे की। इससे उनकी व्यापक दिलचस्पी एव प्रतिभाका ज्ञान होता है। उस कालके कदाचित् ही किसी दूसरे उर्दू कविकी साहित्य, समाज तथा उनकी स्वस्थ परम्पराओंके प्रति इतनी महती देन हो जितनी मीरकी है।



व्याख्या-भाग

कुछ शेर



'मीर'के शेरका अहवाल कहूँ क्या 'ग़ालिब',
जिसका दीवान कम अज़ गुलशने-कश्मीर नहीं।

—ग़ालिब

[१]

अबके जुनूँमें फ़ासला शायद न कुछ रहे,
दामनके चाक और गरेबाँके चाक में।

गरेबाँ कुर्त्तेका वह भाग है जिसे गला कहते है। इसी भागमे लोग बटन या घुण्डी लगाते है। दामनका चाक कुर्त्तेके उस कटे हुए भागको कहेगे जो नीचे कमरके पास, बगलमे, प्राय. जेबके नीचे होता है।

दीवाना या पागल होनेपर उर्दू-साहित्यके कथित पागल प्राय. गरेबाँ फाड़ा करते है—'गरेवाँ फाड़ता है तग जब दीवाना आता है।' प्राय: सभी उर्दू कवियोने दिल, गरेवाँ और जुनूँपर मज़मून बाँधे है पर मीरका शेर बहुत ख़ूब हुआ है।

मीर साहब कहते है कि मेरा पागलपन जिस तरह बढ रहा है यदि इसी प्रकार रहा तो इस बारके पागलपनके दौरेमे शायद गरेबाँ और दामन-के चाकमे कुछ अन्तर न रह जाय—यानी नीचेसे ऊपर तक, दोनो मिल जायँ, मतलब पूरा वस्त्र फट जाय।

इस शेरकी मौलाना हालीने बडी प्रशसा की है। लिखते है कि गरेबाँ या दामन या दोनोका चाक करना एक पिटा-पिटाया मजमून है जिसे अत्यन्त प्राचीन कालसे लोग बराबर बाँधते आये है। "ऐसे चिथेडे हुए मजमूनको मीरने बावजूद गायत[1] दर्जेकी सादगीके एक ऐसे अछूते, निराले और दिलकश[2] असलूब[3]मे बयान किया है कि उससे बेहतर असलूब तसव्वुर[4]-मे नही आ सकता। इस असलूबमे बडी खूबी यही है कि सीधा-सादा है, नेचुरल है और बावजूद इसके बिलकुल अनोखा है।"

---

१. अत्यन्त, अन्तिम। २ चित्ताकर्षक। ३. अभिव्यक्ति-प्रणाली। ४. कल्पना, ध्यान।

इस सिलसिलेमे मौलानाने एक और घटनाका जिक्र किया है:—

"मौलाना आजुर्दाके मकानपर उनके चन्द अहबाब[1], जिनमे मोमिन और शेफ्ता भी थे, एक रोज जमा थे। 'मीर'का यह शेर पढा गया। शेरकी बेइन्तिहा तारीफ हुई और सबको यह ख्याल हुआ कि इस काफियेको हर शख्स अपने-अपने सलीके और फिक्रके मुआफिक बाँधकर दिखाये। सब कलम, दावात और कागज़ लेकर अलग-अलग बैठ गये और फिक्र करने लगे। इसी वक्त एक और दोस्त वारिद[2] हुए। मौलानासे पूछा—हज़रत किस फिक्रमे बैठे है? मौलानाने कहा—'कुल-हो-अल्लाहो[3]' का जवाब लिख रहा हूँ।"

शेरका सचमुच जवाब नही।

[२]

सिरहाने मीरके आहिस्ता बोलो,
अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

मौलाना अब्दुलहक इस शेरकी प्रशंसा करते हुए लिखते है —"यह शेर किस कदर सादा है। इससे ज्यादा आसान, आम और मामूली अलफाज और क्या होगे? लेकिन अन्दाजे-बयान दर्दसे लबरेज[4] है और लफ्ज-लफ्जसे हसरत और यास[5] टपकती है। उर्दू क्या मुश्किलसे किसी जबानमे इस पायेका और ऐसा दर्दअगेज शेर मिलेगा। एक दूसरी बात इस शेरमे काबिल गौर यह है कि जो शख्स दूसरोको गुल न करने और आहिस्ता बोलनेकी हिदायत कर रहा है वह भी बीमारके पास बैठा है और उसपर भी लाजिम है कि यह बात आहिस्तासे कहे। इसके लिए यह जरूर

---

१ मित्रगण। २. प्रविष्ट। ३ कुरानकी एक सूरत है 'कुल-हो-अल्लाहो-अहद' अर्थात् 'कह कि अल्लाह एक है।' मतलब यह कि यह अद्वितीय अतुलनीय शेर है। ४ ओत-प्रोत। ५ निराशा।

है कि लफ्ज ऐसे छोटे, सलीस और धीमे हों कि धीमीसे-धीमी आवाज-मे भी अदा हो सकें। अब इस शेरको देखिए कि लफ़्ज तो क्या, एक हर्फ भी ऐसा नही जो करख्त[1] हो या होठोके जरासे इशारेसे भी अदा न हो सकता हो।"

[३]

मक़दूर भर तो ज़ब्त करूँ हूँ पै क्या करूँ,
मुँहसे निकल ही जाती है एक बात प्यारकी।

प्रेमीके हृदयकी अवस्थाको किस खूबीसे कहा है। सीधे-सादे शब्दोमें एक दुनिया भर दी है। "अपनी शक्तिभर तो मै दिलको दबाता हूँ, पर क्या करूँ प्यारकी एकाध बात निकल ही जाती है।"

इसी बातको एक और जगह भी कहा है—

हरचन्द मैंने शौक़को पेनहाँ किया वले,
एक आध हरफ़ प्यारका मुँहसे निकल गया।

[४]

आजीवन मीर वियोगकी वेदनाके गीत गाते रहे। उनका काव्य ही एक प्रलम्ब आह है। इसीलिए आहके मजमून उनकी कवितामे बार-बार आये है। अतिशयोक्ति खूब है। कहते है :—

करूँ जो आह ज़मीं वो ज़माँ जल जाय,
सपहरे[2] नीलीका यह सायबाँ जल जाय।

अर्थात् "यदि मै आह करूँ तो सम्पूर्ण पृथ्वी और उसपरके जीव-जन्तु सब जल जायँ, तथा यह आकाशका जो नील वितान है वह भी जलकर खाक हो जाय।"

---

१. कठोर, कर्णकटु। २. आकाश।

अच्छा ही हुआ, आपने इस आहकी आजमाइश नहीं की। दयालु-प्रकृतिके सरसहृदय आदमीसे यह काम होता भी कैसे ? चुनाचे खुद ही फरमाते है —

मैं गिरिय-ए-खूनीको रोके ही रहा वर्ना,
एक दममें ज़मानेका याँ रंग बदल जाता।

"मै इस खूनी आहको रोके ही रहा अन्यथा एकबार भी निकल जाती तो जमानेका रग क्षणभरमे वदल जाता।"

वियोगकी अग्नि और आह ऐसी ही प्रवल होती है। हिन्दी, सस्कृत, उर्दू, फारसी सभी भाषाओंके कवियोने इसपर मजमून वाँधे है। एक हिन्दी कविकी नायिका कहती है —

विरहकी ज्वालनि सों बीजुरी जराइ डारौ,
स्वासनि उड़ाऊँ बैरी बेदरद बादरनि।

अर्थात् विरहकी ज्वालाओसे बिजलीको जलाती हूँ और श्वाससे इन वैरी निष्ठुर मेघोको उडा देती हूँ।

वियोगिनीकी वियोग-ज्वालासे जमानेका रग वदलनेवाला एक दूसरा कवि ('शकर', नाथूराम शर्मा) विनाश-क्रमका वर्णन करता है :—

'शंकर' नदी नद नदीसनके नीरनकी,
भाप बनि अंबर तें ऊँची चढ़ जायगी।
दोनौं ध्रुव छोरन लौ पलमें पिघलकर,
घूम-घूम धरनी धुरी-सी बढ़ जायगी।
झारैंगे अँगारे ये तरनि तारे तारापति,
जारैंगे खमण्डल मैं आग मढ जायगी।
काहू विधि विधि की बनावट बचैगी नाहिं,
जो पै वा वियोगिनीकी आह कढ़ जायगी।

विरहाग्निकी असह्यता प्रमाणित करते हुए श्रीहर्षने नैषधमे एक स्थानपर लिखा है :—

दहनजा न पृथुर्दवथुर्व्यथा,
विरहजैव पृथुर्यदि नेदृशम् ।
दहनमाशु विशन्ति कथं स्त्रियः,
प्रियमपासुमुपासितमुद्धुराः ॥

अर्थात् साधारण आगमे जलनेकी व्यथा कुछ विशेष नही है, विरह-जन्य-व्यथा ही असह्य वेदना है । तभी तो विरहिणी स्त्रियाँ (मृत) पतिसे मिलनेके लिए आगमे कूद पडती है ।

'मीर'के आहो-सम्बन्धी शेर और भी है :—

आहोंके शोले जिस जा उठते थे मीरसे शब,
वाँ जाके सुवह देखा मुश्ते गुबार पाया ।

अर्थात् "जिस स्थानपर कल रात मीरके मुँहसे आहोके शोले निकलते थे वहाँ आज सुवह जाकर देखा तो कुछ न था, सब जल गया था, बस मुट्ठी भर धूल पड़ी हुई थी ।"

पैदा है कि पेनहाँ थी आतशनफ़सी मेरी,
मैं ज़ब्त न करता तो सब शहर यह जल जाता ।

अर्थात् "स्पष्ट है कि मेरी दाहकता प्रच्छन्न थी । मै न रोकता तो यह सारा शहर ही जल जाता ।"

जौकने भी इसी जमीनपर कहा है :—

न करता ज़ब्त मैं नाला तो फिर ऐसा धुवाँ होता ।
कि नीचे आसमाँके एक नया और आसमाँ होता ।

बडी कृपा हुई जो दूसरे विश्वामित्र बननेकी इच्छाको आपने कार्यरूपमे परिणत होनेसे विरत रखा ।

मीर एक जगह और कहते है :—

तारे तो ये नहीं, मेरी आहोंसे रातकी,
सूराख़ पड़ गये हैं तमाम आसमानमें ।

अर्थात् "जिन्हे तुम तारे समझ रहे हो, ये वस्तुतः तारे नही है वह मेरी रातकी आहोसे आसमानमे जो सूराख हो गये है वही चमक रहे है।"

फिर कहते है —

नीला नहीं सपहर, तुझे इश्तबाह[1] है,
दूदे जिगर[2] से मेरे यह छत सब सियाह है ।

अर्थात् "आकाशको जो तुम नीला कहते हो, यह तुम्हारा भ्रम है। वस्तुत. मेरे दिलके धुएँसे यह सारी छत काली पड गयी है।"

[५]

धोका है तमाम बहरे-दुनिया[3],
देखेगा पै होंठ तर न होगा।

"यह ससार-सागर केवल धोका ही धोका है, भ्रममात्र है। यह दिखाई तो पडता है पर इससे तेरा ओठ कभी तर न होगा।"

[६]

सब्ज़ होती ही नहीं यह सरज़मीं,
तुख़्मे ख़्वाहिश दिलमें तू बोता है क्या ?

मीर कहते है कि यह जमीन कभी हरी तो होती नही फिर तू उसमे इच्छाओके वीज क्या बोता है ? (व्यर्थ बो रहा है, उससे अकुर तो फूटनेकी सम्भावना है नही।)

---

१ भ्रम, सन्देह। २ हृदयका धुवाँ। ३ ससार-सागर।

इस शेरके पहलूमे मीरका दर्द भरा है, उसकी बदनसीबी तड़प रही है। दूसरी ओर ससारकी असारताकी दिशामे भी सकेत है।

[७]

होगा किसी दीवारके सायेके तले 'मीर'
क्या काम मुहब्वतसे उस आरामतलबको।

कैसा गम्भीर एव व्यथाजनक व्यग्य है। मौलाना अब्दुलहकने इस शेरकी प्रशसा करते हुए लिखा है:—"इस शेरका हुस्न शरह व बयानसे बाहर है। 'आरामतलब'का लफ्ज इसकी जान है। इस लफ्जको नजरमे रखिए और फिर इस शेरको गौरसे मुलाहिजा कीजिए तो शेरका असली लुत्फ समझमे आ जायगा। एक शख्स जो मुहब्बतके कारण ऐशो-आरामपर लात मारके और घर-बार छोडकर, बे-यारो खानुमाँ, आवारा व सरगर्दा, महबूबकी दीवारके नीचे पड़ा है उसे ताना दिया जाता है कि आरामतलब है और ऐसे आरामतलबको मुहब्बतसे क्या काम ? जब यह आरामतलबी है तो कयास करना चाहिए कि मुहब्बतकी मुसीबत क्या होगी ?"

[८]

जुज़[1] मर्तबए कुल[2]को हासिल[3] करे है आखिर[4],
एक क़तरा[5] न देखा जो दरिया न हुआ होगा।

अर्थात् "अश अन्ततोगत्वा पूर्णताकी श्रेणी अवश्य प्राप्त करता है। ऐसा एक भी क़तरा नही देखा जो दरिया न हुआ हो।"

दार्शनिक और आध्यात्मिक भाव सरल शब्दोमे कह दिया गया है। जैसे जलबिन्दु सागरसे अभिन्न है, वैसे ही अश पूर्णसे अलग होकर भी

---

१. अंश, खण्ड। २. पूर्णताका दर्जा। ३. प्राप्त। ४. अन्तमे। ५ बूँद।

अलग नही है। 'अपूर्ण' मुक्त होकर 'पूर्ण' हो जाता है। इन जमीनपर गालिबका भी एक शेर है।

इशरते क़तरा है दरियामें फ़ना हो जाना।
दर्दका हदसे गुज़रना है दवा हो जाना॥

अर्थात् जलबिन्दुका गौरव नदीमे निमग्न हो जानेमे ही है (क्योंकि नष्ट होकर, निमग्न होकर वह अपनी सत्ताको विशाल बना देता है।) इसीसे प्रकट होता है कि वेदनाकी सीमाका अतिक्रमण होना ही, दवा हो जाना है (क्योंकि जो लाभ दवासे होगा उससे भी अधिक 'दर्दके हदसे गुजरने' पर होगा।)

विभिन्न दृष्टियोसे जीवन-मरणके ऐक्यका, विशेषत. प्रेमजगत्मे, मज़मून बहुतेरे कवियोने बाँधा है। किसीने कहा है —

मुहब्बतमें नहीं है फ़र्क जीने और मरनेका,
उसीको देखकर जीते हैं जिस काफ़िरपे दम निकले।

[९]

एक शख्स मुझी-सा था कि था तुझपे वह आशिक़,
वह उसकी वफ़ापेशगी वह उसकी जवानी।
यह कहके मैं रोया तो लगा कहने न कह 'मीर',
सुनता नहीं मै जुल्मरसीदोंकी कहानी॥

कोई खास बात नही है पर अपनी कामनाकी अभिव्यक्तिके लिए क्या सुन्दर ढग निकाला है। कविने परदे-परदेमे बडी खूबीसे अपनी बात कह दी है—अपनी हृदय-व्यथा व्यक्त कर दी है। मजा यह कि इसमे कही माशूकके अन्याय या उत्पीडनका वर्णन नही, सिर्फ प्रेमीके यौवन और उसकी बुरी हालतकी ओर इशारा किया गया है। और यह कहके रोने लगना उसकी गहरी हृदय-व्यथाको प्रकट कर देता है। परदा होकर भी

यहाँ परदा नही रह जाता; प्रच्छन्न होकर भी यहाँ अर्थ स्पष्ट है। 'माशूकके उत्तरने दर्दमे हजारो टीसें पैदा कर दी है। यह मीर साहबका खास कमाल है।'*

[१०]

गुल व बुलवुल बहारमें देखा।
एक तुझको हज़ारमें देखा॥

अर्थ स्पष्ट है। प्रियतमकी ही छवि फूल, वुलवुल और वसन्त सबमे दिखाई दे रही है। 'मीर दर्द' ने भी लिखा है :—

जगमें आकर इधर-उधर देखा,
तू ही आया नज़र जिधर देखा।

परमात्मा अथवा प्रियतमकी व्यापकताका अनुभव इसमे है। बिहारीका प्रसिद्ध सोरठा याद आता है :—

मैं समुझ्यो निरधार, यह जग काँचो काँच सम,
एकै रूप अपार, प्रतिबिम्बित लखियत जहाँ।

देखिए, विहारीने वेदान्तके 'प्रतिबिम्बवाद'को काँचका उदाहरण देकर, कितनी सफलताके साथ समझाया है। कहते है, मैने भली-भाँति देख लिया है कि यह ससार कच्चे काँचके समान है जिसमे एक ही रूप अपार रूपोमे प्रतिविम्बित हो रहा है।

मीरने एक स्थानपर और कहा है —

यक जा अटकके रहता है दिल हमारा वर्ना,
सबमें वही हक़ीक़त दिखलाई दे रही है।

फिर कहते है :—

---

*मौलवी अब्दुलहक : इन्तखाब कलामे मीर, पृष्ठ २७।

हर क़दमपर थी उसकी मंज़िल लेक,
सरसे सौदाए-जुस्तजू न गया।

उसकी मजिल तो कदम-कदमपर थी पर दिमागमे जो खोजका पागलपन था, वह नही गया। उसीके कारण मै जन्मभर उसे ढूँढता ही रह गया।

[११]

छाती जला करे है सोज़े दरूँ बलासे,
एक आग-सी लगी है, क्या जानिए कि क्या है ?

मीरके कलेजेमे दर्द है। वह छटपटा रहा है। साथी और डाक्टर प्रश्न करते है—क्या बात है भाई ! कुछ वताओ, तव तो इलाज किया जाय। मीर वेचारेकी तो जान निकल रही है। वह खुद नही समझ पाता। झुँझलाकर कहता है—"भाई ! जान मत खाओ। मै क्या बताऊँ। आन्तरिक अग्निसे रात-दिन छाती जलती रहती है। कलेजेमे एक आग-सी लगी हुई है। क्या मालूम यह क्या है ?"

शेरके प्रत्येक शब्दमे करुणा है। कलेजा मुँहको आ रहा है। प्रेमकी वह अवस्था है जब आदमी नही जानता कि यह बेचेनी, यह घबड़ाहट, यह जलन क्या है और क्यो है ?

लोगोने कहा—हजरत, कही दिल तो नही लगा बैठे। लक्षण तो कुछ ऐसे ही है।

मीर उत्तर देते है—

हम तौरे-इश्क़से तो वाक़िफ़ नहीं है लेकिन,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है।

जिसके दिलमे कुछ भी रस है वह इसे पढकर झूम उठेगा। मीर कहते है कि भई, हम प्रेमके तौर-तरीकेसे तो परिचित नही है पर हाँ, ऐसा लगता है जैसे सीनेमे कोई दिलको मला करता हो।

'मला करे हैं' पद इस शेरकी जान है। वेदना शब्द-शब्दसे टपकी पड़ती है।

इसी जमीनपर 'शेफ्ता' का भी शेर है:—

शायद इसीका नाम मुहब्बत है 'शेफ़्ता',
एक आग-सी है दिलमें हमारे लगी हुई।

'शायद' शब्दने इस शेरमे एक चमत्कार पैदा कर दिया है। कवि प्रेमकी उस अवस्थामे है जब कुछ-कुछ रोगके विषयमे उसे अनुमान हो रहा है।

[१२]

कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह,
कल 'मीर' खड़ा था याँ, सच है कि दिवाना था।

पागलपनका कैसा सफल चित्र इस शेरमे मिलता है। कल मीर यहाँ खडा था। किसीसे कुछ कहता, फिर किसीका मुँह ताकता। सच है, वह पागल हो गया है।

भाषा कितनी सरल और मँजी हुई है।

[१३]

परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सबोंकी ख़ुदा कर चले।

शत-शत श्रुतियाँ चिल्लाकर कहती है कि शुद्ध ब्रह्म निराकार है किन्तु उस परम तत्त्वका सम्यक् रहस्य हृदयगम होनेके पूर्व साधक क्या करे? मानव सदैव सरल आलम्बनोकी खोज करता है। अपनी खोजमे ही उसने मूर्त्ति-पूजाको प्राप्त किया। किसी रुचिकर रूपमे कल्पना करके उसकी उपासना ही मूर्त्तिपूजाका रहस्य है। साकार, दृश्य, इन्द्रियलब्ध वस्तुके प्रति सामान्यतः मनुष्यका आकर्षण जितना ठोस और स्वाभाविक होता है, उतना निराकारके प्रति सम्भव नही। इस प्रकार मूर्त्तिकी उपा-

सना करके हम धीरे-धीरे उसके अधिकाधिक निकट होते जाते हैं जिसकी वह मूर्त्ति है। धीरे-धीरे हमारे स्नेहका विकास होता है और अन्तमे जब प्रेम प्रौढताको प्राप्त होता है तब मूर्त्तिकी सत्ता क्षीण होने लगती है और सान्निध्यजन्य प्रणयभूत ध्यानमे विलीन हो जाती है। इस प्रकार सच्चा मूर्त्तिपूजक मूर्त्ति और आराध्य दोनोका ऐकात्म्य अनुभवकर आराध्य—भगवान्—के सगुण रूपका साक्षात्कार करता है। इस साक्षात्कारके पश्चात् उसे आराध्य सर्वत्र दिखाई देता है और निर्विकार, निराकार ब्रह्म की प्रतीति होती है। फिर वह अपने एव आराध्यके अभेदत्वका अनुभव करता है। इस प्रकार मूर्त्तिपूजककी आनन्द-धारा वेदान्तके 'अह ब्रह्मास्मि' मे मिल जाती है।

मान लीजिए, मै करुण वात्सल्य प्रकृतिका आदमी हूँ। अपनी भावनाओके अनुकूल मैने एक पाषाण-मूर्त्तिका निर्माण एव उसमे प्राण-प्रतिष्ठा कराई। मै उसकी उपासनामे लीन हुआ। धीरे-धीरे मेरी भक्ति-सरितामे तरगे उठने लगी। आनन्दकी अधिकाधिक वृद्धि होते-होते मेरा प्रणय प्रगाढ होने लगा। ध्यान करते-करते मेरी अनुरक्ति उससे सघन होती गयी; तन्मयता आने लगी। थोडी देरके लिए ससारका लोप हुआ। जब ध्यानका आवेग कम हुआ, आँखे खुली तो देखता हूँ कि जिसका ध्यान अभी तक कर रहा था, वही तो सामने है (याद रहे भक्तिकी प्रबलतामे यह बात भूल जाती है कि पाषाण-मूर्त्तिके आगे बैठा हुआ हूँ)। फिर थोडी देर बाद शका उठती है कि नही जी, यह कल्पित पाषाण-मूर्त्ति है जो मैने बनवाई थी। कभी मूर्त्तिमे उपास्यकी प्रत्यक्ष प्रतीति होती है। (उस समय पाषाण-मूर्त्तिकी सत्ता विस्मृत हो जाती है) और कभी पाषाणरूप दृष्टिगोचर होता है। यह मूर्त्तिपूजावलम्बित भक्तिकी प्रथम श्रेणी है (जिसमे कभी प्रत्यक्ष प्रतीति होती है, कभी अप्रत्यक्ष और आरोपित)। इसके पश्चात् प्रेम और प्रौढ एव घनीभूत होता है। धीरे-धीरे पाषाण-भाव सुप्त और लुप्त होने लगता है। इस विकासका अन्त उस समय होता है

जब मूर्त्तिमे पाषाणत्वकी जरा भी अनुभूति शेष नही रहती। यह मूर्त्ति और उपास्यकी अभेदावस्था है। साधन साध्य हो जाता है। तब वह मूर्त्ति बोलती है, हँसती है।

इसी प्रकार किसी मनुष्यको प्रेम करके भी परमतत्त्वको प्राप्त किया जा सकता है। मूल वस्तु प्रेम है। सब कुछ उस प्रेमको ग्रहण करनेकी हमारी शक्तिपर निर्भर है। कुछ उस प्रेमको वासना एव भोगमे परिवर्तित कर देते है, दूसरे है जो उसे जीवनका अमृत बना लेते है और उससे अपरिमित शक्ति एव ओज प्राप्तकर साधना-पथमे बढ जाते है। मीरने इसी मानव-प्रेमके विराट् सवेदनका चित्रण उक्त शेरमे किया है। कहते है.—"ऐ बुत (प्रियतम) ! मैने तेरी पूजा इस सीमा तक की है कि तुझे सब लोगोंकी दृष्टिमे खुदा–परमात्मा–बना दिया है !"

[१४]

उसे ढूँढ़ते 'मीर' खोये गये,
कोई देखे इस जुस्तजूकी तरफ़।

मीर कहते है कि मै ढूँढने तो उसे चला था पर स्वय ही खो गया। भला कोई मेरी इस खोजको तो देखे !

पता उसका लगाने चले थे पर अपनी ही सत्ता खो बैठे। वेदान्तका तत्त्व इस शेरमे आ गया है।

ब्रह्मकी अनन्त सत्तामे मिल जानेकी प्राय. चार श्रेणियाँ है। जब भक्तिकी प्रबलता होती है तो मनुष्य परमात्मा (श्रेय) और अपने सम्बन्धको जिन शब्दोमे प्रकट करता है उसे सस्कृतके दार्शनिक साहित्यमे 'तस्यैवाहम्' कहते है। इसका अर्थ होता है—'मै उसका हूँ' (अह तस्यैव)। इसके बादका दर्जा 'तवैवाहम्' है अर्थात् 'मै तुम्हारा ही।' इसमे सम्बन्ध अधिक प्रत्यक्ष और सघन होगया है। प्रथम पदमे वह अन्यपुरुष मे है और दूसरेमे सामने है। इसके बाद तीसरी श्रेणी आती है 'त्वमेवाहम्' अर्थात् "मै तू ही हूँ।" अर्थात् जो मै हूँ वही तुम हो। यह साम्यानुभूतिकी

अवस्था है । पर अभी मै और तुम दोनो एक नही है, दोनोमे भेद वर्तमान है । इसके बाद वह दर्जा आता है जिसमे साधक 'तुम' या 'मैं' मेसे एकको भूल जाता है । यही सर्वोच्च अवस्था है । गालिबने भी कहा है .—

बहुत ढूँढा उसे फिर भी न पाया,
अगर पाया पता अपना न पाया ।

अर्थात् "ढूँढते-ढूँढते हैरान हो गया फिर भी उसे न पा सका और पाया तो अपना ही पता न रहा ।"

इसी जमीनपर, कुछ मिलता-जुलता मीरका एक और शेर है—

तेरी आह किससे खबर पाइए,
वही बेखबर है जो आगाह है ।

मीर साहब फरमाते है कि आह ! तेरा समाचार और पता किससे पूछूँ । जो तुझसे आगाह है, परिचित है, तेरा पता जान चुका है, वही बेख़बर है ।

इसमे भी वही परमानुभूतिकी बात कही गयी है । उसको जान लेनेपर ज्ञाता बतायेगा क्या, जब वह स्वय तल्लीन हो जायगा । जो उससे आगाह हो गया है, वह तो हमारे लिए बेख़बर है । एक बेहोशी, एक दीवानगी उसपर छा गयी है । वह क्या बतायेगा ?

इसमे उसी 'तत्त्वमसि' अवस्थाकी परछाई है जिसकी अनुभूतिमे एक फारसी सूफीने कहा है .—

तनहास्तम तनहास्तम चे बुल अजब तनहास्तम ।
जुज़ मन न बाशद हेच शै तनहास्तम यकतास्तम ॥

अर्थात् "मै अकेला हूँ । मै ! क्या आश्चर्य है ! मै एकदम अकेला हूँ । मेरे सिवा और कोई वस्तु है ही नही—मै अकेला, बेजोड़, लासानी हूँ ।"

एक उर्दू कवि तो इससे भी आगे जाकर अपनेको परमात्माका उत्पत्तिकर्ता कहता है —

मैंने माना देहरको हक़ने किया पैदा वले,
मैं वह ख़ालिक़ हूँ मेरे कुनसे ख़ुदा पैदा हुआ।

अर्थात् "मै मान लेता हूँ कि सृष्टिकी रचना ईश्वरने की है। पर मै तो वह हूँ कि मेरे 'हो' शब्दके उच्चारणमात्रसे ईश्वरकी उत्पत्ति हुई।"

मानवमे परमात्माके दर्शनके सम्बन्धमे 'मीर'का एक शेर याद आ गया। इसी सिलसिलेमे लिख देता हूँ :—

सरापामें उसके नज़र करके तुम,
जहाँ देखो अल्लाह अल्लाह है।

उसके नखशिखमे ध्यान देकर देखो तो सर्वत्र ईश्वर ही ईश्वर दिखाई देता है।

[१५]

रुदनकी व्यर्थता—निष्फलता—पर मीरका एक दर्दनाक शेर है :—

ऐ गिरिया उसके दिलमें असर ख़ूब ही किया,
रोता हूँ जब मैं सामने उसके तो दे है हँस।

बेबसीका कैसा चित्र है! ऐ रुदन! तूने उसके दिलपर खूब प्रभाव डाला, मै जब उसके सामने रोता हूँ तो वह हँस देता है।

[१६]

प्यार करनेका जो ख़ूबाँ हमपे रखते हैं गुनाह,
उनसे भी तो पूछिए तुम इतने क्यों प्यारे हुए?

अर्थ स्पष्ट है। 'प्यारे' शब्द इस शेरकी जान है। इसमे शेख सादीके निम्नलिखित शेरकी छाया है —

दोस्तां मनअ कुनिन्दम कि चरा दिल बुतो दादम,
बायद अव्वल बुतो गुफ़्तनकी चुनीं ख़ूब चराई।

[१७]

शामसे कुछ बुझा-सा रहता है,
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिसका।

मीरका यह शेर बहुत प्रसिद्ध है। वियोगके चित्र बहुतोंने दिये है पर यह अप्रतिम है। कहते है :—गरीब आदमीके दीपकके समान हमारा दिल शामसे ही कुछ बुझा-बुझा-सा रहता है।

गरीबोके घरमे जो दीपक जलते है उनकी शिखा इतनी कम और ज्योति इतनी धीमी होती है कि जलते हुए भी वे बेजले और बुझे-से होते है। हमारे दिलकी भी वही हालत है। कैसा रूपक है।

[१८]

क्यों कर तू मेरी आँखसे हो दिल तलक गया,
यह बहर[1] मौजख़ेज़[2] तो असरुल अबूर[3] था।

मतलब यह है—"समझमे नही आता कि तू मेरी आँखोके रास्ते दिल तक कैसे गया ? (निरन्तर अश्रुमयताकी ओर इशारा) यह तरगित सागर तो पार करने योग्य न था।"

कौन जाने वह किधरसे पहुँच जाते है ? पता भी नही चलता। 'जौक' का एक शेर है :—

खुलता नहीं दिल बन्द ही रहता है हमेशा,
क्या जाने कि आ जाता है तू इसमें किधरसे।

अर्थात् 'हमारा दिल तो सदैव (गमसे) बन्द ही रहता है (कभी खुलता नही, प्रसन्न नही होता) फिर तू न जाने किधरसे उस बन्द दिलमे घुस आता है !'

जरा हिन्दीके महाकवि बिहारीकी करामात देखिए :—

---

१. सागर। २. तरंगित, तरगमय। ३. पार करनेमे कठिन।

देख्यौ जागत वैसिये, साँकरि लगी कपाट।
कित ह्वै आवत जात भजि, को जाने किहिं बाट॥

दोहेमे शेरसे कही अधिक चमत्कार है। चारो ओरसे किवाड बन्द करके नायिका सो रही है। स्वप्नमे उसके प्रिय आते है। इतनेमे वह जग जाती है। जगकर देखती है कि किवाड़ तो वैसे ही बन्द है; उसमे साँकल उसी प्रकार लगी हुई है। न जाने वह किधरसे आते है और किस रास्ते भाग जाते है।

[१९]

सौन्दर्यकी एक उपमा देखिए :—

खिलना कम कम कलीने सीखा है,
उसकी आँखोंकी नीमख़ाबी[1] से।

अर्थात् उनकी आँखोकी नीमख़ाबी (अलसान, मस्ती) से कलीने धीरे-धीरे खिलना सीखा है।

कली धीरे-धीरे खिलती है। अलसाई, उनीदी आँख भी मस्तीसे धीरे-धीरे खुलती है। उसीकी ओर सकेत है।

[२०]

होश जाता नहीं रहा लेकिन,
जब वह आता है तब नहीं आता।

अभी मेरा होश एकदम गुम नही हुआ है। चेतना बनी है; मै चेतना-रहित नही हुआ हूँ पर हाय, जब वह आते है तभी होश नही रहता। तभी बेहोशी आजाती है।

'प्रसाद'का पद है :—

---

१. उनीदापन, अर्धस्वप्नावस्था।

मादकता-से आये वे,
संज्ञा-से चले गये थे।

वही भाव है। उनके आगमनसे प्रेमीपर मादकता छा जाती है और जानेपर होश आता है।

[२१]

पूछा जो मैंने दर्दे मुहब्बतसे मीरको,
रख हाथ उसने दिलपै टुक अपने रो दिया।

वेदनाका कैसा चित्र है। जो मैने सहानुभूतिपूर्वक मीरसे उसका हाल पूछा तो अपने कलेजेपर हाथ रखकर टपटप आँसू बहा दिये।

वेदना अकथ है। इसलिए मीर जवाब नही देता। चुपचाप द्रवित होकर रो पडता है और केवल सकेत करता है कि पीड़ा कहाँ है।

[२२]

उसको तर्ज़े निगाह मत पूछो,
जी ही जाने है, आह मत पूछो।

इसमे भी प्रियतमाकी आँखोके जादूका वर्णन है। वह जादू जो अकथ है, कैसे कहा जा सकता है। मीरके कोई दोस्त हमदर्दी दिखाने उनके पास पहुँचे और पूछा कि 'आखिर उसकी आँखोमे ऐसी क्या बात है, जो तुम यो पागल हो रहे हो।' मीर क्या जवाब देते ? बार-बार पूछनेपर कलेजेका उच्छ्वास इस शेरके रूपमे निकल पडा—"भाई, मेहरबानी करके, उनकी तर्जेनिगाह, देखनेके ढगके बारेमे कुछ न पूछिए। आह ! उसे मेरा जी ही जानता है, बस पूछिए नही।" 'जी ही जाने है' और 'आह' शब्दने शेरको वेदनाकी गहरी अनुभूति प्रदान की है।

[२३]

तेरे बालोंके वस्फ़[1] में मेरे,
शेर सब पेचदार होते हैं।

उर्दू साहित्यमें प्रियतमके बालों, विशेषतः टेढी-मेढी जुल्फोंका खूब वर्णन है। प्रायः सभी कवियोने उसपर कुछ-न-कुछ कहा है। बालोको उर्दू कवि जितना पेचदार, उलझा, कह सकें उतना ही अच्छा माना जाता है।

मीर कहते है कि तेरे बाल इतने पेचदार है कि उनकी प्रशसामे मै जो शेर कहता हूँ वही पेचदार हो जाता है।

मीरकी ही एक उक्ति और है :—

आवेगी एक बला तेरे सर सुन कि ऐ सबा,
जुल्फ़े-सियह[2] का उसके अगर तार जायगा।

मीर साहब सबा (प्रभाती वायु) को सावधान कर रहे है कि होशयार होकर बहा कर, वर्ना यदि किसी रोज उसके जुल्फे-सियह (काली जुल्फों) से पाला पड गया तो तेरे सिर एक बला आ जायगी।

बालो, अलको, जुल्फोका सभी भाषाओके कवियोने वर्णन किया है। मीरने ही किसी शेरमे कहा है—"तू कैसा उद्दण्ड शिकारी है कि अपनी जुल्फोमे मेरा तायरे-दिल (हृदय-पक्षी) फँसाये लिये जा रहा है।"

किसी सस्कृत कविने कहा है:—

जानुभ्यामुपविश्य पार्ष्णि निहितश्रोणिभरा प्रोन्नमद्-
दोर्वल्ली नमदुन्नमत्कुचतटी दीव्यन्नखाङ्कावलिः।
पाणिभ्यामवधूय कङ्कणझणत्कारावतारोत्तरं
बाला नह्यति किं निजालकभरं किं वा मदीयं मनः॥

१. प्रशंसा। २. काली अलके

विहारी कहते है —

कच समेटि कर भुज उलटि, खये सीस पट टारि ।
काकौ मन बाँधै न यह, जूरौ बाँधनिहारि ।।

'शृगार-सप्तशती'कारने इस दोहेका सस्कृत दोहेमे यो अनुवाद किया है —

उन्नमय्य बाहुद्वयं, कचपुञ्जं गृह्णाति ।
प्रियाकेशवन्धे मनः, कस्य न सा बध्नाति ।।

विहारीका ही एक और दोहा है —

छुटे छुटावै जगत् तें, सटकारे सुकुमार ।
मन बाँधत बेनी बँधे, नील छबीले बार ।।

एक और सस्कृत कविका कथन है:—

कमलाक्षि ! विलम्ब्यतां क्षणं कमनीये कचभारवन्धने ।
दृढलग्नमिदं दृशोर्युगं शनकैरद्य समुद्धराम्यहम् ।।

कमलाक्षि ! जरा ठहरो । मेरी आँखे तुम्हारे केश-पाशमे जा फँसी है । धीरे-धीरे मै उन्हे निकाल लूँ तव जूडा बाँधो । थोडी देर मुझपर कृपा करो नही तो ये उसीमे बँधी रह जायँगी ।

[२४]

जिस दिनसे उसके मुँहसे बुरक़ा उठेगा, सुनियो,
उस रोज़से जहाँमें ख़ुरशीद फिर न झाँका ।

मीर साहब फरमाते है कि जिस दिन उसके मुँहसे बुरका (मुँह और शरीर ढकनेका वह वस्त्रावरण जो प्राय. मुसलमान स्त्रियाँ पहनती है) उठेगा, तुम सुनोगे कि उस दिनसे सूर्य फिर नही निकला ।

उसके मुँहको सूर्यको लज्जित करनेवाला बताया है पर बात अनूठे ढगसे कही गयी है ।

सूरज क्यों न झाँकेगा ?

सूरजके न झाँकनेके दो कारण मीरके शेरसे निकलते है। पहला यह कि उसके 'मुखकी अनन्त ज्योतिके आगे अपनी ज्योतिकी मलिनताका अनुभव करके सूर्यको इतनी लज्जा आयेगी कि वह अपना मुँह फिर न दिखायेगा' और दूसरा यह कि 'उसकी अपार ज्योतिके कारण सूर्यका प्रकाश इतना क्षीण हो जायगा कि फिर साधारणतः वह लोगोंको दिखायी ही न देगा, लोग समझेंगे कि अब वह निकलेगा ही नही।'

इस विषयपर हिन्दी और सस्कृतके कवियोकी भी उक्तियाँ उपलब्ध है। 'रसनिधि' हिन्दीके एक प्रसिद्ध दोहाकार हुए है। कितने ही लोग उनके दोहोकी बिहारीके दोहोसे तुलना करते है। 'रतनहजारा' इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ है।

'रसनिधि' अपनी नायिकाकी मुख-ज्योतिको लेकर लिखते है.—

कुहूनिसा तिथिपत्र मैं, बाचन कौ रहि जाइ।
तुव मुख-ससि की चाँदनी, उदै करति है आइ॥

—भारतजीवन सस्करण, पृष्ठ २३, दोहा १९७

कवि कहता है—"पत्रेमे कुहू-निशा केवल बाँचने भरके लिए रह गयी है, वस्तुतः वह कभी आती नही, क्योकि तेरे मुखरूपी चन्द्रकी चाँदनी उदित होकर उसपर अधिकार जमा लेती है।"

चलिए रातके समय रास्ता चलनेवालोको आराम हो गया। पर 'रसनिधि' केवल एक दिनकी बात कर रहे है, उनकी चाँदनी केवल एक दिनकी है, जब उसी जमीनपर बिहारीने प्रति दिन चाँदनीकी व्यवस्था कर रखी है:—

पत्रा ही तिथि पाइयतु, वा घर के चहुँ पास।
नित प्रति पून्योई रहै, आनन-ओप-उजास॥

—लालचन्द्रिका—आजमशाही क्रम—४८९

—विहारी-विहार, पृष्ठ १४५

अर्थात् "उस घरके आस-पास अव तिथियाँ केवल पत्रेमे ही लिखी हुई दीख पडती है, क्योकि नायिकाके मुखकी आभाके कारण वहाँ सदा ही पूर्णिमा वनी रहती है। (इसके कारण अन्य सव तिथियाँ केवल पत्रेमे रह गयी है।)

'शृगारसप्तशती'कार ने इस दोहेका सस्कृत अनुवाद यो किया है :—

तव गृहमभि नाऽपुस्तकस्तिथिं कोऽपि जानाति।
यतः पूर्णचन्द्राननने पूर्णिमेव निशि भाति॥

एक सस्कृत कविका चमत्कार देखिए—

तानि प्राञ्चि दिनानि यत्र रजनी सेहे तमिस्रापदं,
सा सृष्टिर्विरराम यत्रभवति ज्योत्स्नामयो नातपः।
अद्यान्यः समयस्तथाहि तिथयोऽप्यस्या मुखस्योदये,
हस्ताहस्तिकया हरन्ति परितो राकावराकीयशः॥

अर्थात् "वे दिन वीत गये जब रजनी तमिस्रापदको प्राप्त थी—काली होती थी। वह सृष्टि समाप्त हो गयी जब कि आतप ज्योत्स्नामय न था, धूपमे चाँदनी नही आती थी। यह तो कुछ दूसरा ही समय है। देखो न, उसके मुखके उदय होनेसे वारी-वारी सव तिथियाँ 'राकावराकीयश'—पूर्णिमाके यशको—सव प्रकार लूट लेती है।"

कैसा चमत्कार है। अव तो दिन-रात पूर्णिमा ही है। अभी तक जितने कवियोने कहा केवल रातके लिए कहा पर 'सा सृष्टिर्विरराम यत्र भवति ज्योत्स्नामयो नातप' कहकर कविने धूपको भी चाँदनीमे परिवर्तित

कर दिया है—सूर्यके आतपपर भी नायिकाकी 'मुख-दुति' का वार्निश पेण्ट कर दिया; सूर्यका भी मान-मर्दन हो गया ।

अब तुलना कीजिए ।

'रसनिधि'की नायिका बड़ी सुन्दरी है । 'कुहूनिसा' मे चन्द्रमाकी अनुपस्थितिके कारण जब चारो ओर अन्धकार रहता है तब उसके 'मुख-ससि की चाँदनी' उदय होकर 'कुहूनिसा' की सत्ता ही मिटा देती है, उसे केवल पत्रामे बाँचनेके लिए रहने देती है ।

वास्तविक चन्द्रकी अनुपस्थितिमे यदि नायिकाके 'मुख-ससि' ने सच्चे चन्द्रकी मर्यादा प्राप्तकर ज्योति फैला दी तो क्या हुआ ? और तिथियाँ तो पड़ी हुई है । यह तो केवल एक दिनकी बात हुई ।

हाँ, बिहारीकी नायिका अलबत्ता जबर्दस्त है । उसके 'आनन-ओप-उजास' से 'वा घरके चहुँपास नितप्रति पून्योई रहै' और इस प्रकार 'पत्रा ही तिथि पाइयतु'—केवल पत्रेमे ही तिथियोकी सत्ता रह गयी है; वहाँ सदा पूनो ही पूनो है ।

रसनिधिकी नायिका सीधी है, साफ है, अच्छी है । पर बिहारीकी उससे कही रसीली और सुन्दर है । संस्कृत कविकी नायिका बिहारीसे भी आगे है । उसने अपने मुखोदय-द्वारा, दिन हो या रात सदा समग्र ससारको अखण्ड चाँदनीसे ढक रखा है—केवल उस घरके चतुर्दिक् नही, सर्वत्र उसका राज्य है । दिन-रातका भेद नष्ट हो गया, धूपमे भी चाँदनी घुस गयी है ।

अब मीरकी ओर लौटिए । यह हजरत दीन-हीन चन्द्रमापर हाथ न उठाकर सीधे 'खुरशीद'—सूर्यपर ही टूटे है । उनको विश्वास है कि प्रियतमा जिस दिन अपने मुखसे बुर्का उठा देगी, उसके बाद सुनोगे कि सूरज फिर दुनियामे झाँकने नही आया ।

सस्कृत कविकी रचनामे मामला बढ़ गया है । उसमे शक्तिके दुरुपयोगकी भी किञ्चित् छाया है । फिर इतनी उड़ानके बाद भी ज्योत्स्ना

केवल आतपमें मिलकर रह गयी पर धूप और ज्योत्स्ना दोनोंका अस्तित्व बना रहा। मीरके कथनानुसार तो सूर्य बेचारा मुख-प्रकाशसे लज्जित होकर फिर झाँकनेका नाम ही न लेगा।

[२५]

मीर इन नीमख़्वाब आँखोंमें,
सारी मस्ती शराबकी-सी है।

मीर साहब कहते हैं कि इन उनींदी आँखोंमें जो मस्ती है, वह ठीक शराबकी भाँति है। (शराबके प्रभावसे आँखें चढ़ जाती हैं, उनमें एक विशेप प्रकारका उनीदापन, मस्ती और लालिमा आ जाती है।)

मीर तो यहीं तक रह गये परन्तु एक और उर्दू कविने इनसे आगें वढकर कहा है:—

मयमें वह बात कहाँ जो तेरे दीदारमें है,
जो गिरा फिर न कभी उसको सँभलते देखा।

अर्थात् "शराबमें वह बात कहाँ जो तेरी आँखोंमें है। तेरी आँखोंके नशेमें जो एक बार गिरा कि वह फिर सँभलते—उठते—नहीं देखा गया।"

हिन्दीका प्रसिद्ध दोहा है:—

अमिय, हलाहल, मदभरे, स्वेत, श्याम, रतनार।
जियत, मरत, झुकि-झुकि परत, जेहि चितवत इक बार ॥*

---

* क्रमालकार देखिए —

अमिय	हलाहल	मदभरे
स्वेत	श्याम	रतनार
जियत	मरत	झुकि झुकि परत।

तेरी इन श्वेत, श्याम, रतनारी आँखोमे अमृत, विष और मद तीनो का ही विचित्र सम्मिश्रण हुआ है (क्योकि) ये जिसको एक बार (प्यारसे) देख लेती है वह जीता, मरता और झुक-झुक पडता है !"

क्रमालकारका इतना सरल पर उत्कृष्ट उदाहरण कदाचित् ही और कही देखनेको मिलेगा। शब्द-सौष्ठव, अर्थगाभीर्य, स्वभावोक्ति, अनुभव एव अलकारमयी योजना सबमे अनूठापन है।

[२६]

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे,
इस ज़िन्दगी करनेको कहाँसे जिगर आवे।

अतलस्पर्शी वेदनाका एक चित्र है। जब तेरा नाम लेता हूँ, जब तुम्हारी चर्चा होती है, तब आँखे भर आती है। जीवन बितानेको कहाँसे दिल लाऊँ ?

[२७]

जीमें था उससे मिलिए तो क्या क्या न कहिए 'मीर',
पर जब मिले तो रह गये नाचार देखकर।

अनुभवकी वाणी है। मनमे तो बहुत-सी बाते थी कि उनसे भेट होगी तो न जाने क्या-क्या कहूँगा, कितनी बाते करूँगा पर जब वह मिले तो उन्हे लाचारीके साथ देखता ही रह गया, कुछ भी न कह सका।

इसी बातको दूसरी जगह कहा है—

कहते तो हो यूँ कहते यूँ कहते जो वह आता।
यह कहनेकी बातें हैं कुछ भी न कहा जाता॥

भावनाके आधिक्यमे वाणी मौन हो जाती है। इसी बातको यहाँ कहा गया है।

[२८]

हस्ती अपनी हुबाब[1] की-सी है,
यह नुमाइश सुराब[2] की-सी है।

मानव-जीवन ठीक वैसा है जैसे अपार सागरके तलपर बुलबुले होते है। बुलबुलेसे उपमा देनेमे कई खूबियाँ है। जो लोग 'प्रकृतिवादी है उनका कथन है कि विशेप प्रकारकी स्थितियोके परस्पर समिश्रणसे जगत्की भिन्न-भिन्न वस्तुएँ बनती है और उन्हीके सघर्पणसे नष्ट हो जाती है। इस प्रकार सृष्टिका कार्य अपने आप चला करता है। मनुष्यकी उत्पत्ति और विनाशका भी उनके मतसे यही उत्तर है। मानव-जीवनकी उपमा बुलबुलेसे देनेमे इन लोगोके भी सिद्धान्तका खण्डन नही होता। जैसे पचतत्त्वो तथा कुछ अन्य उपादानोके विशेप स्थितिजन्य पारस्परिक सयोगसे मानव-जीवनका आविर्भाव तथा उनके अव्यवस्थाजन्य सघर्पणसे नाश होता है उसी प्रकार आकाश, वायु तथा जलके विशेष सयोगसे बुलबुलेकी भी उत्पत्ति होती है और उसमे ज़रा भी व्यतिक्रम होनेसे उसका अन्त हो जाता है।

दूसरी विशेपता, बुलबुलेके उदाहरणमे, यह दीख पड़ती है कि जैसे बुलबुला सागरका अखण्ड और अभेदभाव-सूचक एक अश है, वैसे ही मनुष्य भी अनन्त सृष्टिका अभेदभाव-सूचक जीव है। बुलबुलेमे जैसे अपार सागरका आन्तरिक तत्त्व सूक्ष्मरूपसे सन्निहित रहता है; छोटेसे एक बुल-बुलेमे जैसे समस्त सागरका भाव हृदयगम किया जा सकता है, मानव-जीवनमे भी उसी प्रकार अनन्त तत्त्वोका अन्वेपण किया जा सकता है; सीमाबद्ध इस मानव-जीवनमे भी चिरन्तन, व्यापक शक्ति एव असीम सत्स्वरूप विराट तथा उसके वैभवको प्रत्यक्ष कर सकते है। जैसे बुलबुला,

---

१. बुलबुला। २ मृगजल, जलाभास।

अलग होकर भी, वस्तुतः समुद्रसे अलग नही है वैसे ही मानव-सत्ता भी अनन्तसे भिन्न कुछ नही। "नेह नानास्ति किञ्चन", "अग्निर्यथैको भुवन प्रविष्टो रूप रूप प्रतिरूपो बभूव। एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूप रूप प्रतिरूपो बहिश्च" इत्यादि श्रुतियोमे इसी रहस्यकी ओर संकेत है।

दूसरे चरणमे मीर कहते है—'यह नुमाइश सुराबकी-सी है।' यह दृश्य-प्रपच मृगजल-भ्रमके समान है अर्थात् माया है। सुराब रहती कुछ है और दिखाई देती कुछ और है। कडकड़ाती धूपमे प्याससे व्याकुल शिथिलदृष्टि मृग जब चारों ओर देखता है तो दूरकी शुष्क बालुकाराशि लहराते हुए जलके सदृश दीख पड़ती है। यह संसार भी एक सुराब है। जिस रूपमे हम इसे देख रहे है, वह इसका वास्तविक रूप नही है।

इसे समझकर ही अन्यत्र मीरने कहा है—

चश्मे-दिल खोल उस भी आलमपर,
याँकी औक़ात ख़ाबकी-सी है।

"जरा अपने हियेकी आँखे उस दुनियाकी ओर खोल। यहाँकी अवस्था (जिसमे तू भूला हुआ है) तो स्वप्नवत् है।

स्वप्नमे हम जो चीजे देखते है वे रहती तो असत् है किन्तु स्वप्नकी अवस्थामे वे सच्ची ही मालूम पडती है, वही स्थिति इस दुनियाकी भी है।

[२९]

बारीक वह कमर है ऐसी कि हाल क्या है।
जो अक़्लमें न आवे उसका ख़याल क्या है॥

कमरका पतला होना सौन्दर्यका लक्षण माना जाता है। उसकी बारीकीको लेकर उर्दू, हिन्दी, सस्कृतके कवियोने बडी उडाने भरी है। मीर साहब कहते है कि वह कमर इतनी पतली है कि क्या कहा जाय? भला जो बुद्धिमे, कल्पनामे ही न आवे उसका विचार करनेसे क्या लाभ?

कमरकी सूक्ष्मताकी पराकाष्ठा है। 'जो अक्लमे न आवे उसका ख़याल क्या है' कहकर मीरने उतना कह डाला है जिसके आगे कोई कुछ कह ही नही सकता। वुद्धि या कल्पनासे ही कवि कुछ कह सकता है पर वह इनके परे है। तव उसकी वात क्या ?

इस जमीनपर अन्य कवियोकी करामात भी देखिए। संस्कृतके महाकवि पण्डितराज जगन्नाथ कहते है :—

जगन्मिथ्याभूतं मम निगदतां वेदवचसा-
मभिप्रायो नाद्यावधि हृदयमध्याविशदयम्।
इदानीं विश्वेषां जनकमुदरं ते विमृशतो
विसन्देहं चेतोऽजनि गरुडकेतोः प्रियतमे !

और भी—

अनल्पैवादीन्द्रैरगणितमहायुक्तिनिवहै-
र्निरस्ता विस्तारं क्वचिदकलयन्ती तनुमपि।
असत्ख्याति-व्याख्यादिकचतुरिमाख्यातमहिमा-
ऽवलग्ने लग्नेयं सुगतमतसिद्धान्त-सरणिः॥

अर्थात् वौद्ध दार्शनिकोके शून्यवादको जव वडे-वडे प्रतिद्वन्द्वी विद्वानों (शकर एव वाचस्पति इत्यादि इसका खण्डन जोरोसे कर गये है) की (अकाट्य युक्तियोकी) मारसे दुनियामे कही जगह न मिली तो वह तुम्हारी (लक्ष्मीकी) कटिमे जाकर समा गया।

पण्डितराज अपने ढगके अनोखे कवि थे; उनकी शब्द-योजना, उनकी शैली, उनकी मधुरिमा और उनकी धारा उन्हीकी चीज है। ये विशेषताएँ एकत्र, सस्कृतके कदाचित् ही दूसरे किसी कविको प्राप्त हुई हो। भाषाके प्रवाह और वर्णनकी निर्भीकतामे तो कोई उनके सामने ठहर नही सकता। यह उसी निर्भीकताका उदाहरण है—जगज्जननीकी कटिपर भी कलम चलानेमें उन्हे हिचकिचाहट न हुई।

'बेङ्कटाध्वरि' सस्कृतके एक प्रतिभाशाली, पर अपेक्षाकृत अप्रसिद्ध, कवि हुए है। यह 'नीलकण्ठ' (सस्कृतके प्रसिद्ध कवि) के सहपाठी थे। इनका समय १६४० ई०के आस-पास है। 'लक्ष्मीसहस्र' इनकी सबसे उत्तम पर क्लिष्ट रचना है। लक्ष्मीके ऊपर सस्कृत साहित्यमे जितने स्तुतिकाव्य है, कहा जा सकता है कि, यह उनमे सर्वश्रेष्ठ है। इसमे भी लक्ष्मीकी कटिका वर्णन मिलता है :—

परमादिषु मातरादिमं यदिदं कोषकृताह मध्यमम्।
अमरः किल पामरस्ततो स बभूव स्वयमेव मध्यमः ॥

अत्यन्त क्लिष्ट पर चमत्कारपूर्ण रचना है। कवि कहता है :—"हे देवि ! तुम्हारी कटि ससारके आदिभूत परमाणुओसे भी सूक्ष्म है। यह मध्यभाग (कमर) परमादि (उत्तमोमे भी उत्तम) वस्तुओमें भी आदिम (श्रेष्ठ, उत्तम) है किन्तु अमर (कोषकार) को यह समझ कहाँ ? उसने ऐसी उत्तम कटिको मध्यम (नीच एव मध्यमे मकार युक्त) कह डाला। वह यही समझता है कि यह मध्यम, परमादि (अन्त्य 'म'कार सयुक्त) शब्दोमे आदिम (आदि 'म'कार-सयुक्त) है (अर्थात् जैसे परम चरम इत्यादि शब्दोके अन्तमे 'म' है वैसे ही 'मध्यम' मे भी है) उनसे इसमे विशेषता यह है कि यह आदिम है (क्योकि इसके आदिमे भी 'म'कार है।) देवि ! तुम्हारी ऐसी सर्वोत्तम कटिको मध्यम (नीच) कहनेका फल कोषकार अमरको खूब भोगना पड़ा। उसने तुम्हारी कटिको 'मध्यम' कहा, इसका फल यह हुआ कि वह स्वयं ही मध्यम (मध्य 'मकार' सयुक्त) हो गया। कहाँ तो वह पहले 'अमर' (देवता) था—स्वर्गमे सुख भोगता था कहाँ इस निन्दाजन्य पापका फल पाकर मध्यम (मानव लोकमे आकर मनुष्य) बन गया। देवि ! तुम्हारी शक्तिसे अपरिचित मदमत्त चला तो था तुम्हे 'मध्यम' (मध्य मकार युक्त) कहने पर वह स्वय 'मध्यम' (अमर शब्दके मध्यमे 'म' है) हो गया। (तुम्हारा)

मध्यम (कटिभाग) तो मध्यमे मकारवाला नही हुआ (क्योकि उसके मध्यमे तो 'म' न होकर 'ध्य' है) परन्तु अमर स्वय मध्यम हो गया। इतना ही नही वह 'पामर' बन गया (क्योकि देवलोकमे था, अव मनुष्य-लोकमे आकर देवत्वसे च्युत हो गया।)

क्लिष्ट श्लेपकी वहार है। नैपधमे श्रीहर्पने भी कटिका अच्छा वर्णन किया है पर विस्तार-भयसे उसे छोडता हूँ। अव उर्दू-हिन्दी कवियोकी करामात देखिए।

उर्दूके प्रसिद्ध कवि स्वर्गीय 'अकबर' इलाहावादी कहते है —

कहीं देखा न हस्ती वो अदम का इश्तराक़ ऐसा,
जहाँ में मिस्ल रखती ही नहीं उनकी कमर अपना !

अर्थात् "कही भाव और अभावका ऐसा सयोग दिखाई न दिया। उनकी कमरकी दुनियामे कोई बरावरी नही।"

भूषण कहते है—

सोंधेको अधार किसमिस जिनको अहार,
चारको सो अंक लंक चंद सरमाती हैं।

—शिवा बावनी

कमर इतनी पतली है जैसे–४–के अकका मध्य भाग जो पडी रेखाओ' के बीचमे दिखाया गया है।

विहारीने कहा है—

*बुधि अनुमान प्रमान स्रुति, किये नीठि ठहराइ।
सूछम कटि परब्रह्म लौ अलख लखी नहिं जाइ॥

---

*याज्ञवल्क्यने मैत्रेयीको ब्रह्म-साक्षात्कारके उपाय बताते हुए जो चार श्रेणियाँ बताई थी, बिहारीने 'बुधि, अनुमान, प्रमान, स्रुति' कहकर उसी-का प्रतिपादन किया है। मूल श्रुति यो है—

'आत्मा वा अरे द्रष्टव्य श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।'

"वह सूक्ष्म कटि परब्रह्मके समान 'अलख' है। श्रुति (कान और वेद वाक्य) द्वारा सुनते है कि कमर है (श्रुति यह भी बताती है कि पर-ब्रह्म है)। सुननेके बाद अनुमान करते है कि ऐसा हो सकता है या नही ? इसके बाद प्रमाण सोचते है कि कटिके बिना धड ठहरेगा किसपर ! (दूसरी ओर यह सोचते है कि ससारका आधार कौन है ?) ऐसा सोचकर उस 'अलख' (कमर और परब्रह्म) दोनोंको बुद्धि द्वारा निरन्तर अभ्यास करके कल्पनाके बलपर स्थिर करते है। तब भी वह अलख ही है। पर-ब्रह्म होते हुए भी जैसे दिखाई नही देता उसी प्रकार कमरका पता नही चलता।"

निश्चय ही विहारीने पण्डितराजको भी पीछे छोड़ दिया है। कवि-श्रेष्ठ 'शकर' ने कहा है—

पासके गये पै एक बूँद हू न हाथ लगै,
दूर सों दिखात मृगतृष्णिकामें पानी है।
'शंकर' प्रमाण-सिद्ध रंगको न संगपर,
जानि परै अम्बरमें नीलिमा समानी है।
भावमें अभाव है अभावमें धौं भाव भरयो,
कौन कहै ठीक बात काहू ने न जानी है।
जैसे इन दोउनमें दुविधा न दूर होत,
तैसे तेरी कमरकी अकथ कहानी है॥

'शकर' का यह कवित्त भी किसीकी उक्तिसे कम नही है। कहते है—दूरसे तो मृगतृष्णिकामे पानी दिखाई देता है। किन्तु पास जानेपर एक बूँद भी हाथ नही लगता। यह बात भी प्रमाण-सिद्ध है कि आकाशमे रगका संयोग नहीं है परन्तु देखनेसे ऐसा मालूम पड़ता है मानो वह नीला है। जान नही पड़ता कि यह क्या बात है ? भावमे अभाव है या अभावमे भाव है ! जैसे आजतक ये दोनो बाते द्विविधामे पड़ी हुई है, वैसे ही तेरी

कमरका भी कोई निश्चय नही। उसकी कहानी 'अकथ' है। कोई क्या कहेगा ?''

'चन्द्रशेखर' कहते है—

जौ कहिये मनकी गति तो मन सों न रहै थिर एक घरी है।
लोक कहै जिमि ब्रह्म है सूछम त्यों अनुमानि कै मानि परी है।
देखि परै न कहूँ दरसै परसै परमानु लौ जानि परी है।
भावतीकी कटि मै करतार करी केहि भाँति धौ कारीगरी है॥

सैयद गुलाम नबी (रसलीन) अपने 'अग-दर्पण'मे कहते है—

सुनियत कटि सुच्छम निपट, निकट न देखत नैन।
देह भये यों जानिए, ज्यों रसनामें बैन॥

अपूर्व दोहा है। कहते है—लोगोसे सुनता हूँ कि कटि निपट सूक्ष्म है किन्तु आँखोसे तो कुछ दिखाई नहीं देता। तव ! तव क्या मान ले कि कटि है ही नही ? नही ऐसा तो हो नही सकता क्योकि यदि कटि है नही तो धड इत्यादि ठहरे किसके सहारे है ? जरूर कटि है। तव फिर दिखाई क्यो नही देती ? जैसे रसनामे वैन है पर उसे देख नही सकते, वैसे ही देह होनेसे जान पडता है कि कमर भी है।

पटका बँधा रहा तो गुमाँ था हमें कि हो,
खुलनेसे खुल गया कि निशाने-कमर नहीं।

—सईद

कहता है कोई बाल उसे कोई रगे-गुल,
कुछ मैं भी कहूँ, तेरी कमर जो नज़र आवे।

—हैफ़

मादूमको क्योंकर कोई साबित करे अल्ला,
मज़मून कमर यारका उनक़ासे नहीं कम।

—निजाम

तुम्हारे लोग कहते हैं कमर है,
कहाँ है किस तरहकी है किधर है ?

—अकबर

यह भी उस नाजुक बदनको बार हो,
गर कमर बाँधें नज़रके तारसे।

—जौक

दीदे-कमरे-यारकी मुश्ताक़ हैं आँखें,
हस्तीमें तमाशाए-अदम मद्दे-नज़र है।

—आतिश

[३०]

हाय उसके शर्बती लबसे जुदा,
कुछ बताशा-सा घुला जाता है जी।

कैसी मधुर शब्द-योजना है। सीधे-सादे शब्द है पर विदग्धतासे ऊपर-से नीचे तक भरे हुए। 'लब' (ओठ) के लिए शर्बती विशेषण भी कितना अच्छा हुआ है। इससे मधुरता और लालिमा दोनोका काम निकल जाता है। "कुछ बताशा-सा घुला जाता है जी"—इस पदने तो गजब ही कर दिया है। 'बताशा-सा जी घुलना' ! कितना बढ़िया ! चमत्कार देखिए—शर्बती लबसे अलग रहनेपर जी बताशा-सा घुला जाता है। 'शर्बत'में मिलनेपर बताशेको घुलना चाहिए किन्तु यहाँ उलटी बात है। उस शर्बतसे दूर रहकर 'बताशा' घुला जा रहा है।

[३१]

यह छेड़ देख हँसके रुखे-ज़र्दपर मेरे,
कहता है मीर! रंग तो अब कुछ निखर चला।

यह छेड और शरारत देखिए। मेरे पीले चेहरेको देखकर यह कहना कि मीर ! अब तो तेरा रंग कुछ निखर चला है।

वहाँ जान जा रही है, यहाँ हँसी सूझ रही है।

[३२]

आशिक है हम तो 'मीर'के भी जब्ते इश्क़के,
दिल जल गया था और नफ़स लबपे सर्द था।

ठण्ढी आहपर क्या शेर कहा है! हम मीरके प्रेमपर नियन्त्रण रखनेकी शक्तिपर मुग्ध है कि दिल जल गया था पर ओठोंपर साँस ठण्डी थी। 'जले दिलसे ठण्डी साँस' का निकलना काव्यका चमत्कार है।

[३३]

बेखुदी ले गयी कहाँ हमको
देरसे इन्तज़ार है अपना।

बेखुदी हमे न जाने कहाँ ले गयी है कि देरसे हम अपनी ही प्रतीक्षा कर रहे है।

अनुभूत एव गहरे भाव है।

[३४]

शरारत-भरे बाह्य सौन्दर्यके चित्र देखिए। वह रातको आये है पर—

थी सुबह जो मुँहको खोल देता,
हर चंद कि तब थी एक पहर रात।
फिर ज़ुल्फोंमें मुँह छिपाके बोला,
अब होवेगी 'मीर' किस क़दर रात।
ज़ुल्म है, क़ह्र है, क़यामत है,
ग़ुस्सेमें उसके ज़ेरे-लबकी बात।

रातमे जब मुँह खोल देते है तव सुवह हो जाती है। फिर वालोमे मुँह छिपा लेते है और अँधेरा हो जाता है। शरारतसे पूछते है—मीर, अब कितनी रात है ? क्रोधमे उनके ओठोंकी वात क्या कहें, कयामत है।

[३५]

ओठोके आमन्त्रणशील सौन्दर्यपर कहते है:—

लाले ख़मोश अपने देखो हो आरसीमें
फिर पूछते हो हँसके मुझ बेनवाकी ख़ाहिश !

अपने मौन लाल (रक्त हीरक ओठ, अधर) को दर्पणमें देखते हो, फिर भी मुझ दीनकी इच्छा पूछते हो ? (चुम्वनकी इच्छाको किस तरह प्रकट किया है।)

[३६]

चालके सौन्दर्य एव आकर्पणके वारेमे कहते हैं.—

क्या चाल यह निकाली होकर जवान तुमने,
अव जब चलो हो, दिलको ठोकर लगा करे है।

तरुणाई पाकर तुमने क्या चाल निकाली है कि जब चलते हो, दिलको ठोकर लगा करती है !

[३७]

वह दर्दे-दिल नहीं तो क्यों देखते ही मुझको,
पलकें झुकालियां हैं, आँखें चुरालियां हैं।

अगर उनमे दिलकी व्यथा नही है, उनमे भी प्यारकी किरण नही है तो मुझे देखते ही उनकी पलकें क्यों झुक जाती हैं और आँखें क्यों चुराई जाती है ?

[३८]

क्रिया जो अर्ज़ कि दिल-सा शिकार लाया हूँ;
कहा कि ऐसे तो मैं मुफ़्त मार लाया हूँ।

वदकिस्मत मीर वडी आगासे अपना दिल लेकर सरकारके दरवारमे नजर करने गये थे। वहाँ जाकर वडी आरजू-मिन्नत एव दीनतासे कहा कि "सरकार! मै आफतका मारा, आपकी नजरोका घायल हूँ। आपके लिए दिल-जैसा (वढिया) गिकार लाया हूँ। वह आपकी नजर है!"

हुजूरने फरमाया—क्या अदना चीज लेकर आया। ऐसे न जाने कितने गिकार तो मै मुफ्त, विना परिश्रम, मार लाया हूँ। (तव तेरा दिल लेकर क्या करूँगा?)

गेरके दूसरे पदमे, जो कि राजकीय उत्तर है—कितनी गोखी, कितना चुलवुलापन है। सीधे-सादे शव्दोमे अपने त्याग और अपने दिलकी चोटका उल्लेख कर दिया है। 'दिल-सा गिकार' कहकर यह भी जता दिया कि मेरा दिल किसीके (नयन) वाणोसे घायल भी हो चुका है। फिर यह भी ध्वनि निकलती है कि मैं तुम्हे ही इसके ग्रहण करने योग्य समझता हूँ, तुम्ही इसको लो। इसके बाद प्रियतमके मुँहसे 'ऐसे तो मै मुफ्त मार लाया हूँ' कहलाकर उनकी निष्ठुरता और परिहासभरी गोखीका चित्र भी खीच दिया है।

[३९]

पलकोंसे रफ़ू उनने किया चाके-दिल ऐ मीर,
किस ज़ख्मको किस नाज़कीके साथ सिया है।

रफू करना, किसी फटी हुई चीजको तागे भरकर पूरा करनेको कहते है। वाकी अर्थ साफ है।

[४०]

कहता है दिल कि आँखने मुझको किया ख़राब,
कहती है आँख यह कि मुझे दिलने खो दिया।
लगता नही पता कि सही कौन-सी है बात,
दोनोंने मिलके 'मीर' हमें तो डुबो दिया॥

दिलका कहना है कि मुझे आँखने चौपट किया और आँख कहती है कि मुझे दिलने खो दिया। दोनोका झगड़ा चल रहा है। ठीक पता नही लगता कि बात क्या है ? पर इन दोनो (दिल और आँख) के झगड़ेमें मैं तो डूब गया।

[४१]

हर सुबह उठके तुझसे माँगू हूँ मैं तुझीको,
तेरे सिवाय मेरा कुछ मुद्दआ नहीं है।

एक प्रेमीके लिए इससे वडी कोई इच्छा नही हो सकती कि किसी भी अवस्थामे वह अपने प्रियतमको न भूले और सदा उसे ही पानेकी इच्छा करे। उसके लिए वही सब कुछ है। परमेश्वर है तो वही है, सृष्टिका स्रष्टा है तो वही है, माता-पिता, भाई-वहिन जो है वही है। वह उसे छोड़ परमात्माकी भी इच्छा नही करता। *और यदि वह परमात्माको मानता है तो उससे भी अपने प्रियतमको ही माँगता है। आगा हश्र कहते हैं :—

---

* मजनूँके सम्वन्धमे एक कथा कही जाती है। एक बार मजनूँने यह स्थिर करके कि मैं इन आँखोंसे लैलाके अतिरिक्त और कुछ न देखूँगा, आँखे मूँद ली और वहुत दिन हो गये खोली नहीं। परीक्षार्थ परमात्मा स्वयं प्रकट हुए और कहा—'तू आँखें खोल और मेरी ओर देख।' मजनूँने पूछा—'तू कौन है ?' आवाज आई,—'मैं परमात्मा हूँ।' मजनूँने कहा—

सब कुछ ख़ुदासे माँग लिया तुझको माँगकर,
उठते नहीं है हाथ मेरे इस दुआके बाद ।

मीर साहब भी फरमाते है कि "प्रतिदिन प्रात काल उठकर मैं तुझसे तुझीको माँगता हूँ । तेरे अतिरिक्त मेरा और कोई प्रयोजन नही है । तेरे सिवा दूसरा और कुछ नही चाहता ।"

दूसरी जगह भी मीर कहते है :—

चाहें तो तुमको चाहें, देखें तो तुमको देखें,
ख्वाहिश दिलोंकी तुम हो, आँखोंकी आरज़ू तुम ।

[४२]

पासे-नामूसे-इश्क़ था वर्ना,
कितने आँसू पलक तक आये थे ।

प्रेममे दिलपर कितना जोर डालना पड़ता है, उसे कितना दबाना पडता है । अन्दर व्यथा और बेचैनीका समुद्र लहरे मारता है; ऊपर हँसना-मुसकराना पडता है । आँखे भर-भर जाती है पर आँसू रोक लेने पडते है ।

मीर कहते है —प्रेमकी बदनामीका ध्यान था अन्यथा न जाने कितने आँसू पलक तक आये हुए थे (जिन्हे मैने रोक लिया ।)

'मुझे परमात्मासे कुछ काम नही । मै इन आँखोसे लैलाको छोड किसीको नही देख सकता ।' ख़ुदाने कहा—'मेरे लिए लोग न जाने कितना दु.ख भोगते है, तब भी मै मुश्किलसे मिलता हूँ और तू इन्कार कर रहा है ?' तरह-तरहके प्रलोभन दिये जानेपर मजनूँने यही कहा—"लैलाके अतिरिक्त मै न तो किसीको चाहता हूँ, न जानता हूँ और न जानने या देखनेकी इच्छा ही रखता हूँ ।"

[४३]

आँखोंसे पूछा हाल दिलका,
एक बूँद टपक पड़ी लहूकी ।

वेदनाका कैसा चित्र है। हर शब्द व्यथासे गीला है ।

[४४]

सुबह तक शमा सिरको धुनती रही,
क्या पतिंगेने इल्तमास किया ।

न जाने पतिंगेने क्या अर्ज़ किया कि शमा सुबह तक अपना सिर धुनती रह गयी !

रहस्यवादका स्पर्श है ।

[४५]

न कटती टुक न होती जो फ़क़ीरी साथ उलफ़तके,
हमें जब उसने गाली दी है तब हमने दुआ दी है ।

मीर साहब कहते है कि "यदि प्रेमके साथ मुझमे थोडी फ़कीरी भी न होती तो दिन न बीतते । उसने जब-जब गालियाँ दी है, मैंने उसे आशीर्वाद दिया है ।"

प्रेमी किसी भी रूपमे प्रियतमसे सम्बद्ध रहना चाहता है इसीलिए उसे गालियाँ भी अच्छी लगती है । 'प्रसाद'ने कितना बढिया कहा है :—

तेरे स्मृति-सौरभमें मृग-मन मस्त रहे,
यही है हमारी अभिलाषा सुन लीजिए ।
शीतल हृदय सदा होता रहे आँसुओंसे,
छिपिए उसीमें, मत बाहर हो भीजिए ॥

हो जो अवकाश कभी ध्यान आवे तुम्हें मेरा,
ए हो प्राण-प्यारे ! तो कठोरता न कीजिए ।
क्रोधसे, विषाद से, दया या पूर्व प्रीति ही से ,
किसी भी बहानेसे तो याद किया कीजिए ॥

[४६]

कोई नाउमीदाना करते निगाह ,
सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले ।

कभी-कभी निराशापूर्ण आँखे तुमपर डाल दिया करते थे सो तुम अब हमसे मुँह छिपाकर जा रहे हो ?

कैसी हसरत है ! कैसा दर्द है ।

[४७]

हसरत उसकी जगह थी खाबीदा ,
मीरका खोलकर कफ़न देखा ।

कैसा करुणापूर्ण चित्र है । मीरका कफन खोलकर देखा तो वह नही था, उसकी जगह उसकी हसरत निद्रामग्न थी ।

[४८]

मृत्युको वह क्षणिक विश्राम मानते है, वह जीवनका अन्त नही है:—

मर्ग एक मॉदगीका वक़्फ़ा है ,
यानी आगे चलेंगे दम लेकर ।

एक जगह और कहते है :—

वक़्फ़ए-मर्ग अब ज़रूरी है ,
उम्र तय करते थक रहे है हम ।

कुछ इसी तरहका सकेत उम्रके वारेमे भी है :—

यह जो मोहलत जिसे कहे हैं उम्र ,
देखो तो इंतज़ार-सा है कुछ ।

[४९]

हुई है दिलकी महवियतसे यकसाँ याँ ग़मो-फरहत ,
न मातम मरनेका है 'मीर' नै जीनेकी शादी है ।

मनुष्यकी आन्तरिक शक्तियोके विकासकी सीमा सुख-दु.खकी सम-अनुभूति ही है जब न आनन्दकी कामना हो, न शोककी ।

मीर साहव कहते है .—"चित्रकी असीम सलग्नतासे मेरे लिए दु:ख-सुख समान हो गये है । अव मुझे न तो मरनेका शोक ही है और न तो जीनेका आनन्द ही है !"

[५०]

अत्यन्त दु.खमे, वहुत रोनेके वाद, वह अवस्था आती है जब रोना भी नही आता । आँखे सूख जाती है; आँसू नही निकलते । इसीका बयान मीर करते है .—

आगे दरिया थे दीदए-तर 'मीर',
अब जो देखो सुराब हैं दोनों ।

पहिले ये तर आँखे सरिता थी, अब मरुभूमि है ।

विस्तार-भयसे थोडे ही शेर दिये गये है ।



काव्य-भाग

ग़ज़लें

न हुआ पर न हुआ 'मीर' का अन्दाज़ नसीब ,
'ज़ौक़' यारोंने बहुत ज़ोर ग़ज़लमें मारा ।

—ज़ौक़ ।

[१]

था मुस्तआर[1] हुस्न से उसके जो नूर[2] था,
ख़ुरशीद[3] में भी उस ही का ज़र्रा ज़हूर था।
पहुँचा जो आपको तो मैं पहुँचा खुदाके तईं,
मालूम अब हुआ कि बहुत मैं भी दूर था।
आतिश[4] बुलन्द दिलकी न थी वर्ना ऐ कलीम[5],
यक शोला बर्क़ ख़िरमने सद कोहेतूर[6] था।
मजलिसमें रात एक तेरे परतो[7] ए बग़ैर,
क्या शमअ, क्या पतंग हर एक बे हुज़ूर था।
हम ख़ाकमें मिले तो मिले लेकिन ऐ सपहर,
उस शोख़को भी राह पै लाना ज़रूर था।
कल पाँव एक कासए[8] सरपर जो आ गया,
यकसर वह इस्तख़ान[9] शिकस्तोंसे चूर था।
कहने लगा कि देखके चल राह बेख़बर,
मैं भी कभू किसूका सरे पुर ग़रूर था।
था वह तो रश्के हूर बिहिश्ती[10] हमींसे 'मीर',
समझे न हम तो फ़हम[11] का अपने क़सूर था।

---

१. रिआयत, उधार माँगा हुआ। २. प्रकाश। ३. सूर्य। ४. अग्नि। ५ ईश्वरसे बातें करने वाला, हजरत मूसा। ६. सौ कोहे तूर। कोहे तूर पर ही मूसाको ब्रह्मज्योतिके दर्शन हुए थे (खिरमनकी बिजलीका एक शोला शत-शत कोहेतूर जैसा था।) ७. ज्योति, आभा। ८. खोपड़ी। ९. हड्डी। १०. स्वर्गकी परियोको लज्जित करनेवाली। ११. बुद्धि।

[२]

गुल व बुलबुल बहारमें देखा,
एक तुझको हज़ारमें देखा।
जल गया दिल सफ़ेद है आँखें,
यह तो कुछ इन्तज़ारमें देखा।
आबलेका भी होना दामनगीर,
तेरे कूचेके ख़ारमें देखा।
जिन बलाओंको 'मीर' सुनते थे,
उनको इस रोज़गारमें देखा।

[३]

इस ओहद[1] में इलाही मुहब्बतको क्या हुआ?
छोड़ा वफ़ाको उनने मुरौवतको क्या हुआ?
उम्मीदवार वादये दीदार[2] मर चले,
आते ही आते यारो क़यामत को क्या हुआ?
बख़्शिशने मुझको अब्रे करम[3]की किया खिजल[4],
ऐ चश्म जोशे-अश्के नदामत[5]को क्या हुआ?
जाता है यार तेग़बकफ़[6] ग़ैरकी तरफ़,
ऐ कुश्तए-सितम[7] तेरी ग़ैरतको क्या हुआ?

---

१. युग। २. दर्शनके आश्वासनके प्रत्याशी। ३. कृपावर्षा। ४. लज्जित। ५ अनुतापजन्य अश्रु-प्रवाह। ६ तलवार हाथमे लिये। ७ अत्याचार-दग्ध, अनीतिसे कटा हुआ।

[४]

कहा मैंने कितना है गुलका सबात[1],
कलीने यह सुनकर तबस्सुम[2] किया।
जिगर ही में एक क़तरा खूँ है सरश्क[3]*,
पलक तक गया तो तलातुम[4] किया।
किसू वक्त पाते नहीं घर उसे,
बहुत 'मीर' ने आपको गुम किया।

[५]

उलटी हो गई सब तदबीरें कुछ न दवाने काम किया,
देखा इस बीमारिए-दिलने आख़िर काम तमोम किया।
अहद जवानी रो रो काटा पीरी[5] में लीं आँखें मूँद,
यानी रात बहुत जागे थे, सुबह हुई आराम किया।
नाहक हम मजबूरोंपर यह तोहमत है मुख़्तारी[6] की,
चाहते हैं सो आप करे हैं, हमको अबस बदनाम किया।
किसका काबा, कैसा क़िबला, कौन हरम है क्या अहराम,
कूचेके उस बाशिंदोंने सबको यहींसे सलाम किया।

---

१ दृढता, स्थिरता। २. मुसकराकट। ३ आँसू।

* इसी जमीनपर मिर्जा गालिबने लिखा है —

दिलमें फिर गिरियाने एक शोर उठाया 'गालिब',
आह जो क़तरा न निकला था सो तूफ़ाँ निकला।

४ तूफान, लहर पर लहर उठना। ५ वृद्धावस्था। ६ स्वतत्रता।

याँके सपेद व सियहमें हमको दख़ल जो है सो इतना है,
रातको रो रो सुबह किया, या दिनको जूँ तूँ शाम किया।
'मीर'के दीनो मज़हबको अब पूछते क्या हो उनने तो,
क़श्क़ा[1] खींचा, देर[2] में बैठा, कब का तर्क इस्लाम किया।

[६]

चमनमें गुलने जो कल दावए-जमाल किया,
जमाले-यारने मुँह उसका ख़ूब लाल किया।
मेरी अब आँखें नहीं खुलतीं ज़ोफ़[3] से हमदम[4],
न कह कि नींदमें है तू यह क्या ख़याल किया।
बहारे-रफ्ता फिर आई तेरे तमाशेको,
चमनको यमने क़दमने तेरे निहाल किया।
लगा न दिलको कहीं क्या सुना नहीं तूने,
जो कुछ कि 'मीर'का इस आशिक़ी ने हाल किया!

[७]

जिस सरको गुरूर आज है याँ ताजवरीका।
कल उसपे यहीं शोर है फिर नौहागरी[5] का।
[6]ज़िन्दाँमें भी सोरिश[7] न गई अपने जुनूँ[8] की,
अब संग[9] मुदावा[10] है इस आशुफ़्तासरी[11] का।

---

१. तिलक। २ मन्दिर। ३ दुर्बलता। ४ साथी, मित्र। ५ मृत्यू-परान्त रोदन। ६ कारागार। ७ हंगामा। ८. उन्माद। ९ पत्थर। १० ओषधि। ११ पागलपन।

हर ज़ख़्मे-जिगर दावरे महशर[1] से हमारा,
इन्साफ़तलब है तेरी बेदादगरी[2] का।
ले साँस भी आहिस्ता कि नाजुक है बहुत काम,
आफ़ाक़[3] की इस कारे गहे शीशागरीका।
टुक 'मीर' जिगरसोख़्ता[4] की जल्द ख़बर ले,
क्या यार भरोसा है चिराग़े-सेहरी[5] का।

[८]

मुँह तका ही करे है जिस तिसका,
हैरती है यह आईना किसका।
शाम ही से कुछ बुझा-सा रहता है,
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिसका।
फ़ैज़ ऐ अब्र चश्मे-तरसे उठा,
आज दामन वसीअ[6] है उसका।
ता'ब ही किसको जो हाले 'मीर' सुने,
हाल ही और कुछ है मजलिसका।

[९]

वह एक रविशसे खोले हुए बाल आ गया,
संबुल[7] चमनका मुफ़्तमें पामाल[8] हो गया।

---

१. प्रलयके अधिकारी, खुदा। २. अन्याय। ३ ससारसे अभिप्राय। ४. दग्ध हृदय। ५ प्रात कालीन दीपक। ६ विस्तृत। ७ एक सुगन्धित घास जिससे बालोकी उपमा दी जाती है। ८ पद-मर्दित।

*दावा किया था गुलने तेरे रुख़से बाग़में,
सेली लगी सबाकी सो मुँह लाल हो गया।
क़ामत खमीदा[1] रंग शिकस्ता[2] बदन नज़ार[3],
तेरा तो 'मीर' ग़मने अजब हाल हो गया।।

[१०]

हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया,
दिल सितमज़दःको हमने थाम थाम लिया।
मेरे सलीक़ेसे मेरी निभी मोहब्बतमें,
तमाम उम्र मैं नाकामियोंसे काम लिया।†

---

* किसी शायरने कहा है —

दवा किया था गुल ने कल उसके रंगो-बूका।
धौलें सबाने मारीं, शबनमने मुँहपे थूका।।

मीरने स्वयं अन्यत्र कहा है —

चमनमें गुलने जो कल दावए जमाल किया।
सबाने मार तमाँचा मुँह उसका लाल किया।।

१ झुका हुआ। २ टूटा। ३ दुर्बल।

† हसरत मोहानीका शेर है —

इश्के बुतोंको जीका जंजाल कर लिया है।
'हसरत' यह तूने अपना क्या हाल कर लिया है।।

[११]

कुछ नहीं सूझता हमें उस बिन,
शौक़ने हमको बेहवास किया।
सुबह तक शमा सिरको धुनती रही,
क्या पतिंगेने इल्तमास[1] किया।
ऐसे वहशी कहाँ हैं ऐ खूबाँ,
'मीर' को तुम अबस[2] उदास किया।

[१२]

ऐ तू कि याँसे आक़बते-कार जायगा,
ग़ाफ़िल न रह कि क़ाफ़ला एकबार जायगा।
मौक़ूफ़[3] हश्र[4] पर है सो आती भी वह नहीं,
कब दरमियाँसे वादए दीदार जायगा।
आवेगी एक बला तेरे सिर सुन ले ऐ सबा,
ज़ुल्फे सियहका उसके अगर तार जायगा।

[१३]

गर्मीसे मैं तो आतिशे ग़म[5] की पिघल गया,
रातोंको रोते-रोते ही जूँ शमा गल गया।
हम ख़स्ता-दिल हैं तुझसे भी नाज़ुक मिज़ाजतर,
त्योरी चढ़ाई तू ने कि याँ जी निकल गया।
गर्मी-ए-इश्क़ मान'ए[6] नश्वो-नुमां[7] हुई,
मैं वह निहाल[8] था कि उगा और जल गया।

---

१. निवेदन। २. व्यर्थ। ३ स्थगित। ४. प्रलय। ५. दुखाग्नि। ६ बाधक। ७. पालन-पोषण, विकास। ८. पौधा।

[१४]

मिला है खाकमें किस किस तरहका आलम याँ,
निकलके शहरसे टुक सैर कर मज़ारोंका।
तड़पके खिरमने गुलपर कभी गिर ऐ बिजली,
जलाना क्या है मेरे आशियाँ के ख़ारोंका।

[१५]

दमे-सुब्ह बज़्मेखुशजहाँ शबेगमसे कम न थे मेहरबाँ,
कि चिराग़ था सो तो दूद था जो पतंग था सो गुबार था।
दिले-मुजतरब से गुजर गई शबेवस्ल अपनी ही फ़िक्रमें,
न दिमाग़ था, न फ़ुराग़ था, न शकेब था, न क़रार था।
कभू जायगी जो उधर सबा तो य कहियो उससे कि बेवफ़ा,
मगर एक 'मीर' शिकस्तपा तेरे बाग़ ताज़ामें ख़ार था।

[१६]

फोड़ा सा सारी रात जो पकता रहेगा दिल,
तो सुबह तक तो हाथ लगाया न जायगा।
याद उसकी इतनी ख़ूब नहीं 'मीर' बाज़ आ,
नादान फिर वह जीसे भुलाया न जायगा।

---

१. पुष्प-समूह। २ घोसला। ३ काँटो (तिनको)। ४ धुवाँ। ५ बेचैन हृदय। ६ मिलन-रात्रि। ७ फुरसत। ८. धैर्य।

[१७]

उनने तो मुझको झूठे भी पूछा न एकबार,
मैने उसे हज़ार जताया तो क्या हुआ?
क्या क्या दुआएँ माँगी हैं खिलवत[1] में शेख़, यों,
ज़ाहिर जहाँमें हाथ उठाया तो क्या हुआ?
जीते तो 'मीर' उनने मुझे दाग़ ही रखा,
फिर गोर[2] पर चिराग़ जलाया तो क्या हुआ?

[१८]

ऐ दोस्त कोई मुझ सा रुसवा न हुआ होगा,
दुश्मनके भी दुश्मनपर ऐसा न हुआ होगा।
जुज़[3] मर्तबए कुल[4] को हासिल[5] करे है आख़िर,
एक क़तरा न देखा जो दरिया न हुआ होगा।

[१९]

वे दिन गये कि आँखें दरिया सी बहतियाँ थीं,
सूखा पड़ा है अब तो मुद्दतसे यह दोआबा।

[२०]

इब्तिदाए इश्क़[6] है रोता हैं क्या?
आगे आगे देखिए होता है क्या।
सब्ज़ होती ही नही यह सरज़मीं,
तुख़्मे ख़ाहिश[7] दिलमें तू बोता है क्या।

---

१. एकान्त। २ कब्र, समाधि। ३ अंश। ४ पूर्णताका पद।
५. प्राप्त। ६. प्रेमारम्भ। ७. इच्छाओके बीज।

[२१]

रंग उड़ चला चमनमें गुलोंका तो क्या नसीम[1],
हमको तो रोज़गार[2] ने बे बालोपर किया।
है कौन आपमें जो मिले तुझसे मस्ते-नाज़?
ज़ौक़े ख़बर ही ने तो हमें बेख़बर किया।
बेशरम महज़ है वह गुनहगार जिनने 'मीर',
अब्रे करम[3] के सामने दामाने तर किया।

[२२]

अश्क आँखोंमें कब नहीं आता,
लहू आता है जब नहीं आता।
होश जाता नहीं रहा लेकिन,
जब वह आता है तब नहीं आता।
दूर बैठा गुबारे 'मीर' उससे,
इश्क़ बिन यह अदब नहीं आता।

[२३]

क़द्र रखती न थी मुताअे[4] दिल,
सारे आलमको मै दिखा लाया।
दिल कि एक क़तरा खूँ नही हैं बेश,
एक आलमके सर बला लाया।

---

१ मलयवायु। २. ससार। ३ दया-मेघ। ४. माल, जिस।

सब पे जिस बारने गिरानीकी ;
उसको यह नातवाँ[1] उठा लाया ।*
दिल मुझे उस गलीमें ले जाकर ,
और भी ख़ाकमें मिला लाया ।
इब्तिदा[2] ही में मर गये सब यार ,
इश्ककी कौन इन्तिहा[3] लाया ।
अब तो जाते हैं बुतकदे[4] से 'मीर' ,
फिर मिलेंगे अगर ख़ुदा लाया ।

[२४]

ग़म रहा जब तक कि दममें दम रहा ।
दिलके जानेका निहायत ग़म रहा ।
हुस्न था तेरा बहुत आलमफ़रेब[5] ,
ख़तके आनेपर भी एक आलम रहा ।
दिल न पहुँचा गोशए-दामाँ[6] तलक ,
क़तरए-ख़ूँ था मज़े[7] पर जम रहा ।

---

१. दुर्बल ।

*हाफ़िज कहते हैः—

आसमाँ बारे अमानत न तवानस्त कशीद ।
कुर्रए फ़ाल बनामे मने दीवाना जदंद ।

२ आरम्भ । ३. अन्त, सीमा । ४. मूर्त्तिधाम, मन्दिर । ५. विश्व-प्रलुब्धकारी । ६. आँचलके कोने तक । ७. पलक ।

मेरे रोनेकी हक़ीक़त जिसमें थी,
एक मुद्दत तक वह काग़ज़ नम रहा।
सुबह पीरी शाम होने आई 'मीर',
तू न चेता यॉ बहुत दिन कम रहा।

[२५]

आँखोंमें जी मेरा है इधर यार देखना,
आशिक़का अपने आख़री दीदार देखना।
कैसा चमन कि हमसे असीरों[1] को मना है,
चाके क़फ़स[2] से बाग़की दीवार देखना।

[२६]

जो इस शोरसे 'मीर' रोता रहेगा,
तो हमसाया काहेको सोता रहेगा।
मैं वह रोनेवाला जहाँसे चला हूँ,
मुझे अब्र[3] हर साल रोता रहेगा।
मुझे काम रोनेसे अक्सर है नासेह[4],
तू कब तक मेरे मुँहको धोता रहेगा।
बस ऐ मीर! मिज़गाँ[5] से पोंछ आँसुओंको,
तू कब तक यह मोती पिरोता रहेगा।

---

१. वन्दियों। २ वन्दीगृहके छिद्रसे। ३. मेघ। ४ उपदेशक ५ पलके।

[२७]

आहे सेहरने सोज़िशे दिलको मिटा दिया,
इस बादने हमें तो दिया-सा बुझा दिया।
पोशीदा[1] राज़े-इश्क़[2] चला जाय था सो आज,
बेताक़तीने दिलका वह परदा उठा दिया।
इस मौजख़ेज़[3] देहरमें हमको क़ज़ा[4] ने आह,
पानीके बुलबुलेकी तरहसे मिटा दिया।
आवारगाने-इश्क़का पूछा जो मैं निशां,
मुश्तेगुबार[5] लेके सबाने उड़ा दिया।

[२८]

बेख़ुदी ले गई कहाँ हमको,
देरसे इन्तज़ार है अपना।*
रोते फिरते हैं सारी-सारी रात,
अब यही रोज़गार है अपना।
जिसको तुम आसमान कहते हो,
सो दिलोंका ग़ुबार है अपना।

---

१. गुप्त। २. प्रेमका भेद। ३. तरंगित। ४. मृत्यु। ५. मुट्ठीभर धूल।

* 'मीर' अन्यत्र कहते हैं:—

हम आपसे गये सो इलाही कहाँ गये,
मुद्दत हुई कि अपना हमें इन्तजार है।

[२९]

इस मौजख़ेज़ देहरमें तू है हुबाब-सा,
आँखें खुलें तेरी तो यह आलम है ख़्वाब-सा।
वह दिल कि तेरे होते रहे था भरा-भरा,
अब उसको देखिए तो है एक घर ख़राब-सा।
मुद्दत हुई कि दिलसे क़रारो सुकूँ गये,
रहता है अब तो आठ पहर इज़्तराब[1] सा।

[३०]

दिखलाते क्या हो दस्ते हिनाई[2] का मुझको रंग,
हाथोंसे मैं तुम्हारे बहुत हूँ जला हुआ।
यों फिर उठा न जायगा ऐ अब्र दश्त[3] से,
गर कोई रोने बैठ गया दिल भरा हुआ।
दामनसे मुँह छिपाये जुनूँ कब रहा छिपा,
सौ जा से सामने है गरेबां फटा हुआ।

[३१]

मेरे मुरदेसे भी वह चौंके हैं,
अब तलक मुझमें जान है गोया।
हैरते रूये गुलसे मुर्ग़े चमन,
चुप है यों बेज़बान है गोया।
मस्जिद ऐसी भरी भरी कब है,
मैकदा[4] एक जहान है गोया।

---

१. बेचैनी। २. मेहदी लगे हाथ। ३. जंगल। ४. मद्यशाला।

[३२]

आँसू मेरी आँखोंमें हर दम जो न आ जाता,
तो काम मेरा अच्छा परदेमें चला जाता।
तिफ़्ली[1] की अदा तेरी जाती नहीं यह जी से,
हम देखते तुझको तो तू मुँहको छिपा जाता।
कहते तो हो यों कहते यों कहते जो वह आता,
यह कहनेकी बातें हैं कुछ भी न कहा जाता।

[३३]

मुँहपर उस आफ़ताब[2] के है यह नक़ाब क्या ?
परदा रहा है कौन सा हमसे हिजाब[3] क्या ?
ऐ अब्रेतर यह गिरिया हमारा है दीदनी,
बरसे है आज सुबहसे चश्मे पुरआब[4] क्या ?
सौ बार उसके कूचे तलक जाते हैं चले,
दिल है अगर बना तो है वह इज़्तराब क्या ?

[३४]

कब और ग़ज़ल कहता मैं इस ज़मींमें लेकिन,
परदेमें मुझे अपना अहवाल सुनाना था।
कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह,
कल 'मीर' खड़ा था याँ सच है कि दिवाना था।

---

१. लड़कपन। २. सूर्य। ३. लज्जा। ४. पानी (आँसू) भरी आँखे।

[३५]

दूरिए यारमें है हाले-दिल अबतर अपना,
हमको सौ कोससे आता है नज़र घर अपना।*
तुझसे बेमेह्रके लग लगने न देते हरगिज़,
ज़ोर चलता कुछ अगर चाहमें दिलपर अपना।

[३६]

ऐ काश मेरे सरपर एक बार वह आ जाता,
ठहराव सा हो जाता यूँ जी न चला जाता।
अब तो न रहा वह भी ताक़त गई सब दिलकी,
जो हाल कभी अपना मैं तुमको सुना जाता।
क्या शौक़की बातोंकी तहरीर हुई मुश्किल,
थे जमा क़लम क़ाग़ज़पर कुछ न लिखा जाता।
था 'मीर' भी दीवाना पर साथ ज़राफ़तके,
हम सिलसिलेवारोंकी ज़ंजीर हिला जाता।

[३७]

शायद जिगर हरारते-इश्क़ीसे जल गया।
कल दर्दे-दिल कहा सो मेरा मुँह उबल गया।
हरचन्द मैंने शौक़को पेनहां किया वले,
एक आध हर्फ़ प्यारका मुँहसे निकल गया।
सर अब लगे झुकाने बहुत खाककी तरफ़,
शायद कि 'मीर' जी का दिमाग़ी ख़लल गया।

---

* 'हाली' का शेर है.—

हो अज़्मे देर शायद काबेसे फिर कर अपना।
आता है दूर ही से हमको नज़र घर अपना।

[३८]

अगर हँसता उसे सैर चमनमें अबकी पाऊँगा।
तो बुलबुल आशियाँ तेरा भी मैं फूलोंसे छाऊँगा।
बशारत[1] ऐ सबा दी जो असीराने क़फ़स[2] को भी,
तसल्लीको तुम्हारी सरपे रख दो फूल लाऊँगा।
दिमाग़े-नाज़बरदारी नहीं है कमदिमाग़ीसे,
कहाँ तक हर घड़ीके रूठेको पहरों मनाऊँगा।
अभी हूँ मुन्तज़िर[3] जाती है चश्मे शौक़ हर जानिब,
बुलन्द उस तेग़को होने तो दो सर भी झुकाऊँगा।

[३९]

सख़ुन मुश्ताक़[4] है आलम हमारा।
ग़नीमत है जहाँमें दम हमारा।
रहे है आलमे-मस्तीमें अक्सर,
रहा कुछ और ही आलम हमारा।
बिखर जाते हैं कुछ गेसू तुम्हारे,
हुआ है काम दिल बरहम[5] हमारा।
रखे रहते हैं दिलपर हाथ ऐ मीर !
यहीं शायद कि है सब ग़म हमारा।

---

१. शुभ समाचार, प्रसन्नता। २. पिजड़ेके बन्दी। ३. प्रतीक्षारत। ४. काव्यप्रेमी। ५. बिखरा हुआ।

[४०]

बज़्म[1] की ऐशे शब[2] का याँ दिन होते ही यह रंग हुआ।
शमअकी जगह दूद[3] तनिक था खाक़स्तर परवाना था।*
तुफ़ाँ ख्याल किया करता था, इश्को जुनूँ में रोज़ोशब,।
रोते रोते हँसने लगा यह 'मीर' अजब दीवाना था।

[४१]

फ़लकने पीसकर सुर्मा बनाया।
नज़रमें उसकी मैं तो भी न आया।
तमामी उम्र जिसकी जुस्तजू की,
उसे पास अपने एक दम भी न पाया।
न थी बेगानगी मालूम उसकी,
न समझे हम उसीसे दिल लगाया।

---

१. सभा। २. आनन्द रात्रि। ३. धुवाँ।

*गालिब कहते है :—

या शबको देखते थे कि हर गोशए-बिसात,
दामाने बागवाँ व कफे-गुलफरोश है।
लुत्फ़ेखराम साक़ी व जौके सदाये चंग,
यह जन्नते निगाह वह फिरदौस गोश है।
या सुबहदम जो देखिए आकर तो बज़्म में,
नै वह सरूरो सोज़ न जोशो खरोश है।
दाग़े फ़ुराक सोहबते शबकी जली हुई,
एक शमा रह गयी है सो वह भी खमोश है।

रदीफ़ बे

[४२]

शबनमसे कुछ नहीं है गुलो यासमनमें आब।
देख उसको भर भर आवे है सबके देहनमें आब[1]।
सोज़िश[2] बहुत हो दिलमें तो आँसूको पी न जा,
करता है काम आगका ऐसी जलनमें आब।
देखो तो किस रवानीसे कहते हैं शेर 'मीर',
दुर[3]से हज़ार चंद है उसके सखुन में आब।

[४३]

क्या हमें हम तो हो चले ठंडे,
गर्म गो यारकी ख़बर है अब।
क्या कहें हाले-खातिर आशुफ़्ता[4],
दिल खुदा जानिए किधर है अब।

[४४]

जोश रोनेका मुझे आया है अब।
दीदए-तर[5] अब्र सा छाया है अब।
टेढ़े बाँके सीधे सब हो जायँगे,
उसके बालोंने भी बल खाया है अब।

---

१ मुँहमे पानी भर आता है। २ जलन। ३ मोती। ४ बेचैन दिलकी हालत। ५. अश्रुपूर्ण नयन (घनसे घिरे है)।

[४५]

दिलके गये बेकस कहलाये ऐसा कहाँ हमदम है अब ।
कौन ऐसे महरूम ग़मी[1] का हमराज़ो-महरम है अब ।
सुनके हाल किसूके दिलका रोना ही मुझको आता था,
यानी कभू जो कुढ़ता था मैं वह रोना हरदम है अब ।
देखें दिन कटते है क्योंकर रातें क्योंकर गुज़रती हैं,
बेताबी है ज़्यादा ज़्यादा सब्र बहुत कम कम है अब ।
इश्क़ हमारा आह न पूछो क्या क्या रंग बदलता है,
ख़ून हुआ दिल दाग़ हुआ फिर दर्द हुआ फिर ग़म है अब ।
मिलनेवालो फिर मिलिएगा है वह आलमे-दीगरमें,
'मीर' फ़क़ीर को सुक्र[2] है यानी मस्तीका आलम है अब ।

रदीफ़ ते

[४६]

पलकों पै थे पारए जिगर रात ।
हम आँखोंमें ले गये बसर रात ।
मुखड़ेसे उठाईं उनने जुल्फें,
जाना भी न हम गई किधर रात ।
खुलती है जब आँख शबको तुझ बिन,
कटती नहीं आती फिर नज़र रात ।
थी सुबह जो मुँहको खोल देता,
हरचंद कि तब थी एक पहर रात ।

---

१. वंचित दुखिया । २. नशा, बेहोशी ।

फिर जुल्फोंमें मुँह छिपाके पूछा,
अब होवेगी 'मीर' किस क़दर रात।

[४७]

कहते थे उससे मिलिये तो क्या क्या न कहिए लेक,
वह आ गया तो सामने उसके न आई बात।
अब तो हुए हैं हम भी तेरे ढबसे आशना,
वाँ तूने कुछ कहा कि इधर हमने पाई बात।
ख़त लिखते लिखते 'मीर' ने दफ़्तर किये रवाँ,
इफ़राते इश्तियाक़[1] ने आख़िर बढ़ाई बात।

[४८]

देरसे सूए हरम आया न टुक,
हम मिज़ाज अपना इधर लाये बहुत।
फूलो गुल शम्सो क़मर[2] सारे ही थे,
पर हमें इनमें तुम्हीं भाये बहुत।
'मीर'से पूछा जो मैं आशिक़ हो तुम,
होके कुछ चुपकेसे शरमाये बहुत।

[४९]

दिलकी तहकी कही नहीं जाती नाज़ुक हैं इसरार बहुत,
अक्षर हैं तो इश्कके दो ही लेकिन है बिस्तार बहुत।
हिज्रने[3] जी ही मारा हमारा क्या कहिए क्या मुश्किल है,
उससे जुदा रहना होता है जिससे हमें है प्यार बहुत।

---

१ उत्कण्ठाकी प्रबलता। २ सूर्य-चन्द्र। ३ वियोग।

[५०]

खुश्की लबकी जर्दी रुखकी, नमनाकी दो आँखों की ,
जो देखे है कहे है उनने खींचा है आज़ार बहुत ।
ज़िस्मकी हालत जी की ताक़त नब्ज़से कर मालूम तबीब[1] ,
कहने लगा जाँबर क्या होगा यह तो है बीमार बहुत ।
चार तरफ़ अबरूके[2] इशारे इस ज़ालिमके ज़मानेमें ,
ठहरे क्या आशिक़ बेकस याँ चलती है तलवार बहुत ।
जीके लगाव कियेसे हमने जी ही जाते देखे हैं ,
इस पे न जाना आह बुरा है उल्फ़त[3] का आज़ार बहुत ।

रदीफ़ जीम

[५१]

आये है मीर मुँहको बनाये जफ़ासे आज ।
शायद बिगड़ गई है कुछ उस बेवफ़ासे आज ।
जीनेमें इख़्तियार नहीं वर्ना हमनशीं ,
हम चाहते है मौत तो अपनी ख़ुदासे आज ।
साक़ी टुक एक मौसिमे गुलकी तरफ़ भी देख ,
टपका पड़े है रंग चमनमें हवासे आज ।
था जीमें उससे मिलिए तो क्या क्या न कहिए 'मीर' ,
पर कुछ कहा गया न ग़मे दिल हयासे आज ।

---

१ चिकित्सक । २ भौ, भ्रू । ३. प्रेम ।

[५२]

उसका बहरे हुस्न सरासर ओज व मौजो तलातुम है।
शौक़की अपने निगाह जहाँ तक जावे बोसो किनार है आज।
खूब जो आँखें खोलके देखा शाख़े गुल पै नज़र आया,
इन रंगों फूलोंमें मिला कुछ महवे[1] जल्वये यार है आज।
ज़ज़्बे इश्क़ जिधर चाहे ले जाये महमिल लैलाका,
यानी हाथमें मजनूँके नाक़े[2] की उसके मेहार है आज।
रातको पहना हार जो अब तक दिनको उतारा उनने नहीं,
शायद 'मीर' जमाले गुल भी उसके गलेका हार है आज।

रदीफ़ चे

[५३]

चश्म हो तो आईनाखाना है देहर[3],
मुँह नज़र आता है दीवारोंके बीच।
हैं अनासिर[4] की यह सूरतबाज़ियाँ,
शोब्दे[5] क्या क्या हैं इन चारों के बीच।

[५४]

मैं बेदिमाग़ इश्क़ उठा सो चला गया,
बुलबुल पुकारती ही रही गुलसितांके बीच।
क्या जानूँ लोग कहते हैं किसको सुरूरेक़ल्ब[6],
आया नहीं यह लफ़्ज़ तो हिन्दी जबाँके बीच।

---

१ निमग्न, तल्लीन। २. ऊँटनी। ३ जमाना। ४. तत्त्व। ५. चमत्कार, जादू। ६. हृदयका आनन्द।

इतनी जबीं रगड़ी कि संग आईना हुआ,
आने लगा है मुँह नज़र उस आस्तांके बीच।

[५५]

यह उलझाव सुलझता मुझको देहै दिखाई मुश्किल सा,
यानी दिल अटका है जाकर इन बालोंकी शिकनके बीच।
क्या शीरीं है हर्फ़ों हिकायत हसरत हमको आती है,
हाय ज़ुबाँ[1] अपनी भी होवे यकदम उसके देहनके बीच।

रदीफ़ हे

[५६]

क्या मैं हूँ छेड़ छेड़के खाता हूँ गालियाँ,
अच्छी लगे है सबको मेरे बदज़बाँकी तरह।
नक़्शा इलाही दिलके मेरे कौन ले गया,
कहते हैं सारे अर्श[2] में है इस मकाँ की तरह।

[५७]

दौरे गर्दूंसे हुई कुछ और मैख़ाने की तरह।
भर न आवें क्योंकि आँखें मेरी पैमानेकी तरह।
आ निकलता है कभू हँसता तो है बाग़ो बहार,
उसकी आमदमें है सारी फस्ल गुल आनेकी तरह।
किस तरह जीसे गुज़र जाते है आँखें मूँदकर,
दीदनी है दर्दमन्दों की भी मर जानेकी तरह।

---

१ जिह्वा। २ स्वर्ग।

रदीफ़ दाल

[५८]

न पढ़ा ख़तको या पढ़ा क़ासिद[1] ।
आखिरकार क्या कहा क़ासिद ।
गिर पड़ा खत तो तुझपे हर्फ़ नही ,
यह भी मेरा ही था लिखा क़ासिद ।
यह तो रोना हमेशा है मुझको ,
फिर कभू फिर कभू भला क़ासिद ।

[५९]

तुझ बिन ऐ नौबहारके मानिन्द ।
चाक है दिल अनार के मानिन्द ।
[2]बर्क़ तड़पी बहुत वले न हुई ,
इस दिले बेक़रारके मानिन्द ।

[६०]

तनको जिस जगहसे छेड़ूँ हूँ वहाँ है दर्द दर्द ।
हाथ लगते दिलके हो जाता हूँ कुछ मैं ज़र्दज़र्द ।
अब तो वह हसरतसे आहोनाला करना भी गया ,
कोई दम होंठों तक आ जाता है गाहे सर्द सर्द ।

---

१. दूत, सदेश-वाहक । २. विजली ।

रदीफ़ रे

[६१]

देखूँ मैं अपनी आँखोंसे आवे मुझे क़रार ।
ऐ इंतज़ार तुझको किसीका हो इंतज़ार ।
किस ढबसे राहे-इश्क़ चलूँ है यह डर मुझे ,
फूटें कहीं न आबले टूटें कहीं न ख़ार ।

[६२]

यह क्या जानूँ कि क्यों रोने लगा रोनेसे रहकर मैं ,
मगर यह जानता हूँ मेंह घिर आता है फिर खुलकर ।
मेरे पास उसकी खाकेपाय[1] बीमारीमें रक्खा था ,
न आया सर मेरा बालीं पै ऊधर जो गया ढुलकर ।
गुदाज़े आशक़ी[2] का 'मीर' के शब ज़िक्र आया था ,
जो देखा शमअ मजलिसको तो पानी हो गयी घुलकर ।

[६३]

गुस्सेसे उठ चले हो जो दामनको झाड़कर ।
जाते रहेंगे हम भी गरेबान फाड़कर ।
दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके ,
पछताओगे सुनो हो यह बस्ती उजाड़कर ।

[६४]

सहल मत बूझ यह तिलिस्मे जहाँ[3] ,
हर जगह याँ ख़याल है कुछ और ।

---

१. चरण-धूलि । २ प्रेमकी तपिश । ३. जगत्का इन्द्रजाल ।

तू रगेजाँ[1] समझती होगी नसीम,
उसके गेसूका बाल है कुछ और।
न मिलें गोकि हिज्रमें[2] मर जायँ,
आशिक़ोंका विसाल[3] है कुछ और।
'मीर' तलवार चलती है तो चले,
ख़ुशख़रामोंकी चाल है कुछ और।

[६५]

उस रूए आतशीं[4] से बुर्क़ा सरक गया था,
गुल बह गया चमनमें ख़िजलत[5] से आब होकर।
एक क़तरा आब मैंने इस दौरमें पिया है,
निकला है चश्मे तरसे वह ख़ूने नाब[6] होकर।

[६६]

हम भी फिरते हैं एक हशम[7] लेकर।
दस्तए दाग़ व फ़ौजे ग़म लेकर।
दस्तकश नाला पेशरू गिरिया,
आह चलती है याँ अलम[8] लेकर।
मर्ग यक माँदगीका वक़्फ़ा है,
यानी आगे चलेंगे दम लेकर।

---

१. प्राण-नाडी। २. वियोग। ३. मिलन। ४. अग्निमुख, प्रकाशमान मुख। ५. लज्जा। ६. विशुद्ध। ७. वैभव। ८. झण्डा।

ज़ोफ़[1] याँ तक खिंचा कि सूरतगर[2],
रह गये हाथमें क़लम लेकर।
'मीर' साहब ही चूके ऐ बदअहद !
वर्ना देना था दिल क़सम लेकर।

[६७]

झूठे भी पूछते नहीं टुक हाल आनकर,
अनजान इतने क्यों हुए जाते हो जानकर।
वे लोग तुमने एक ही शोख़ीमें खो दिये,
पैदा किये थे चर्ख़[3] ने जो ख़ाक छानकर।

[६८]

मरते है हम तो आदमे ख़ाकीकी शान पर,
अल्लाह रे दिमाग़ कि है आसमान पर।
शोख़ी तो देखो आपही कहा आओ, बैठो मीर,
पूछा कहाँ तो बोले कि मेरी ज़बान पर।

[६९]

बज़्ममें मुँह उधर करें क्योंकर।
और नीची नज़र करें क्योंकर।
यूँ भी मुश्किल है वों भी मुश्किल है,
सर झुकाये गुज़र करें क्योंकर।

---

१. दुर्बलता। २. चित्रकार। ३. आकाश।

राज़पोशीए[1] इश्क़ है मंजूर,
आँखें रो रोके तर करें क्योंकर।
मस्त वो बेखुद हम उसके दर पे गये,
लोग उसको ख़बर करें क्योंकर।
सो रहा बाल मुँह पै खोलके वह,
हम शब अपनी सेहर[2] करें क्योंकर।
दिल नहीं दर्दमन्द अपना 'मीर',
आहो नाले असर करें क्योंकर।

[७०]

पुर नातवाँ हूँ मुझपर भारी है जी ही अपना,
मुझसे उठेंगे उसके नाज़ो अताब क्योंकर ?
पानी के धोके प्यासे क्या-क्या अज़ीज़ मारे,
सर पर न ख़ाक डाले अपने सुराब क्योंकर ?

[७१]

अब्रेसियह[3] क़िबलेसे उठकर आया है मैख़ाने पर।
बादाकशों[4] का झुरमुट है कुछ शीशेपर पैमाने[5] पर।
बेताबाना शमअपर आया गिर्द फिरा फिर जल ही गया,
अपना जी भी हदसे ज़ियादा रात जला परवाने पर।

१. प्रेमका गुप्त रखना। २. प्रभात। ३. काला बादल। ४. मद्यपो।
५. सुराही और प्याला।

रदीफ़ ज़े

[७२]

मुन्तज़िर कत्लके वादेका हूँ अपने यानी ,
जीता मरनेको रहा है यह गुनहगार हनोज़[1] ।
अभी एकदममें ज़बाँ जलनेसे रह जाती है ,
दर्दे दिल क्यों नहीं करता है तू इज़हार हनोज़ ।
आँखोंमें आन रही जी जो निकलता ही नहीं ,
दिलमें मेरे है गिरह हसरते दीदार[2] हनोज़ ।
भर नज़र देखने पाता नही में निज़अ[3] में भी ,
मुँहके तईं फेरे ही लेता है वह बेबाक हनोज़ ।
बाद मरनेके भी आराम नहीं 'मीर' मुझे ,
उसके कूचेमें है पामाल[4] मेरी ख़ाक हनोज़ ।

[७३]

आशिक़ के उसको गिरियए खूनींका दर्द क्या ,
आँसू नहीं है आँखसे जिसकी गिरा हनोज़ ।
बरसोंमें नामाबर[5] से मेरा नाम जो सुना ,
कहने लगा कि ज़िंदा है वह नंग क्या हनोज़ ।

[७४]

हरचंद आसमां पै हमारी दुआ गई ,
उस मह[6] के दिलमें करती नहीं कुछ असर हनोज़ ।

---

१. अवतक । २. दर्शनेच्छा । ३. अन्तिम क्षण । ४ पददलित । ५ पत्रवाहक । ६. चाँद ।

बरसोंसे लखनऊमें अक़ामत है मुझको लेक,
याँके चलनसे रखता हूँ अज़्मे सफ़र[1] हनोज़ ।
तेशासे कोहकन[2] के दिले कोह[3] जल गया,
निकले हैं संग-संगसे अक्सर शरर[4] हनोज़ ।

रदीफ़ सीन

[७५]

ऐ अब्रतर तू और किसी सिम्तको बरस ।
इस मुल्कमें हमारी ही यह चश्मे तर है बस ।
हमाँ तो देख फूल बिखेरे थी कल सबा,
एक वर्गे गुल गिरा न जहाँ था मेरा क़फ़स ।
मिज़गाँ भी बह गयीं मेरे रोनेसे चश्मकी,
सैलाब मौज मारे तो ठहरे है कोई ख़स ।
मजनूँका दिल हूँ, महमिले लैलासे हूँ जुदा,
तनहा फिरूँ हूँ, दश्तमें जूँ नालए-जरस[5] ।
ऐ गिरिया उसके दिलमें असर ख़ूब ही किया,
रोता हूँ जब मैं सामने उसके तो दे है हँस ।

[७६]

क्योंकि निकला जाय बहरे-ग़मसे मुझ बेदिलके पास
आके डूबी जाती है किश्ती मेरी साहिल[6] के पास ।
है परीशां दश्तमें किसका गुबारे-नातवां[7],
गर्द कुछ गुस्ताख आती है चली महमिलके पास ।

---

१ यात्रा करने, विदा होनेकी आकाक्षा । २. फरहाद । ३. पहाड का हृदय । ४. चिनगारी । ५. घण्टा घड़ियालका रुदन । ६. तट । ७ क्षीण धूलि ।

आह नाले मत किया कर इस तरह बेताब हो,
ऐ सितमकश 'मीर' ज़ालिम है जिगर भी दिलके पास।

[७७]

[1]क़यामत है न ऐ सरमायए जान,[2]
न होवे वक्त़ मरनेके भी तू पास।
यही गाली, यही झिड़की, यही छेड़,
न कुछ मेरा किया तूने कभू पास।

रदीफ़ शीन

[७८]

लाले खमोश अपने देखे हो आरसीमें,
फिर पूछते हो हँसकर मुझ बेनवाकी ख़ाहिश।
अक़्लीमे हुस्न[3] से हम दिल फेर ले चले है,
क्या करिये याँ नहीं है जिंसे-वफ़ाकी ख़ाहिश।

[७९]

पाँव पड़ता है कहीं आँखें कहीं,
उसकी मस्ती देखकर जाता है होश।
दोस्तोंका दर्दे-दिल टुक गोशकर[4],
गर नसीबे दुश्मना है दर्दगोश।

---

१ प्रलय। २ प्राणनिधि। प्राणधन। ३. सौन्दर्य-प्रदेश।
४ सुनाकर।

[८०]

किसकी आँखें फिरी है आँखोंमें,
दम बदम है मेरी नज़र दरपेश।
मस्ती भी अहले होश की है जिन्हें,
आवे है आलम दिगर दरपेश।

[८१]

कब तलक बेक़रार रहिएगा,
कुछ तो मिलनेका हो क़रार ऐ काश।
राह तकते तो फट गयीं आँखें,
उसका करते न इन्तज़ार ऐ काश!
उसकी पामाली सरफ़राज़ी है,
राहमें हो मेरी मज़ार ऐ काश!

रदीफ़ फ़े

[८२]

जो देखे मेरे शेरे तरकी तरफ़।
तो मायल[1] न हो फिर गुहर[2] की तरफ़।
मोहब्बतने शायद कि दी दिलमें आग,
धुवाँ-सा है कुछ उस नगरकी तरफ़।
नज़र क्या करूँ उसके घरकी तरफ़।
निगाहें हैं मेरी नज़रकी तरफ़।
बड़ी धूमसे अब्र आये गये।
न कोई हुआ चश्मेतरकी तरफ़।

१. आकर्षित। २. मोती।

[८३]

क्या नीची आँखें देखो हो तलवारकी तरफ़
देखो किन आँखियों ही से गुनहगारकी तरफ़ ।
आवारगीके महो[1] है हम ख़ानमाँ ख़राब,
मुतलक़ नही नज़र हमें घरबारकी तरफ़ ।

रदीफ़ क़ाफ़

[८४]

दर्द ही खुद है ख़ुद दवा है इश्क़ ।
शेख क्या जाने तू कि क्या है इश्क़ ।
तू न होवे तो नज़्म[2] कुल उठ जाय,
सच्चे हैं शायरां ख़ुदा है इश्क़ ।
इश्क़ ही इश्क़ है जहाँ देखो,
सारे आलममें भर रहा है इश्क़ ।
इश्क़ माशूक़ इश्क़ आशिक़ है,
यानी अपना ही मुब्तला है इश्क़ ।
क्या हक़ीक़त कहूँ कि क्या है इश्क़ ।
हक़शनाशों[3] का हाँ खुदा है इश्क़ ।
और तदबीरको नही कुछ दख़ल,
इश्क़के दर्दकी दवा है इश्क़ ।
कौन मक़सद[4] को इश्क़ बिन पहुँचा,
आरज़ू इश्क़ मुद्दआ है इश्क़ ।

---

१ तल्लीन । २ व्यवस्था । ३. सत्य पहचाननेवालो । ४. उद्देश्य, लक्ष्य ।

[८५]

अर्ज़ो समा[1] में इश्क है सारी चारों ओर फिरा है इश्क़।
हम हैं जनाबे इश्क़ के बन्दे नज़दीक अपने ख़ुदा है इश्क़।
ज़ाहिर[2] व बातिन[3] अव्वलो आख़िर पाईं-बाला[4] इश्क़ है सब,
नूरो ज़ुल्मत[5] मानी व सूरत[6] सब कुछ आप ही हुआ है इश्क़।

[८६]

वस्लो जुदाईसे वह मुबर्रा[7] है कामे जाँ,
मालूम कुछ हुआ न हमें याँ सिवाय शौक़।
हर चार ओर उड़ती फिरे है हमारी ख़ाक,
सरसे गयी न जी भी गये पर हवाए-शौक़।
दैरो-हरममें हमको फिराता है देर तक,
फिर भी हमारे साथ वही है अदाये-शौक़।

रदीफ़ काफ़

[८७]

जिसे शब आग-सा देखा दहकते,
उसे फिर ख़ाक है पाया सेहर तक।
गली तक तेरी लाया था हमें शौक़,
कहाँ ताक़त कि अब फिर जायँ घरतक।

---

१. विस्तार और जमाना। २. प्रकट। ३. अन्तर। ४. नीचे-ऊपर।
५. प्रकाश और अन्धकार। ६. अर्थ और रूप। ७. स्वतन्त्र।

[८८]

काबा पहुँचा तो क्या हुआ ऐ शेख,
सई[1] कर टुक पहुँच किसी दिल तक।
बुझ गये हम चिराग़-से बाहर,
कहियो ऐ बाद शमए-महफ़िल तक।*

[८९]

शायद कि देवे रुख़सते गुलशन हो बेक़रार,
मेरे क़फ़सको ले तो चलो बाग़बाँ तलक।
क़ैदे - क़फ़ससे छूटके देखा जला हुआ,
पहुँचे न होते काशके हम आशियाँ तलक।
इतना हूँ नातवाँ कि दरे दिलसे अब गिला,
आता है एक उम्रमें मेरी ज़बाँ तलक।

[९०]

यों न रोओ त्यों न रोओ वर्ना रोओ प्यारसे,
हर क़दम इस दश्तमें पैदा है चश्मे-गिरियानाक।
बे गुदाज़े दिल नहीं इमकान रोना इस क़दर,
तहको पहुँचो ख़ूब तो परदा है चश्मे-गिरियानाक।

रदीफ़ गाफ़

[९१]

बुत चीज क्या कि जिसको खुदा मानते हैं सब,
खुशएतक़ाद[2] कितने हैं हिन्दोस्तांके लोग।

---

१ श्रम। २ सुन्दर निष्ठावाले।

*यहाँ 'तक' से मतलब 'से' से है यानी महफ़िलकी शमासे कहना।

फ़िरदौस[1] को भी आँख उठा देखते नहीं,
किस दर्जे-सीरे-चश्मे[2] हैं कूए - बुतांके लोग।

[९२]

पावोंमें पड़ गये हैं फफोले मेरे तमाम,
हर गाम राहे इश्क़में गोया दबी है आग।
जल जलके सब इमारते दिल ख़ाक हो गयी,
कैसे नगरको आह मोहव्बतने दी है आग।
अब गर्मो सर्दे देहरसे यकसां नहीं है हाल,
पानी है दिल हमारा कभू तो कभी है आग।
यारब हमेशा जलती ही रहती हैं छातियाँ,
यह कैसी आशिक़ोंके दिलोंमें रखी है आग।
अफसुर्दगीए सोख़्ता जानाँ है क़हृ 'मीर',
दामनको टुक हिला कि दिलोंकी बुझी है आग।

[९३]

रहे-मर्गसे क्यों डराते हैं लोग।
बहुत उस तरफ़को तो जाते हैं लोग।
रहे हम तो खोये गयेसे सदा,
कभू आपमें हमको पाते हैं लोग।
उन आँखोंके बीमार हैं 'मीर' हम,
बजा देखने हमको आते हैं लोग।

---

१ स्वर्ग। २. सन्तुष्टनयन (सन्तोषी)।

[९४]

क्या जो अफ़सुर्दगीके साथ खिला,
दिल गुले बेवहारके-से रंग।*
वर्के अब्रे बहारने भी लिये,
अब दिले बेक़रारके-से रंग।
वर्गे गुलमें न दिलकशी होगी,
कफ़े पाये निगार[1] के-से रंग।

रदीफ़ लाम

[९५]

अल्ला रे अन्दलीब[2] की आवाज़े-दिलख़राश,
जी ही निकल गया जो कहा उनने हाय गुल।
गुलचीं समझके चुनियो कि गुलशनमें 'मीर'के
लख़्ते-जिगर पड़े है नहीं वर्गहाय गुल।

[९६]

गुलकी जफ़ा भी देखी देखी वफ़ाए बुलबुल।
यक मुश्तपर पड़े हैं गुलशनमें जाय बुलबुल।
कर सैरे जज़्बे उलफ़त गुलचींने कल चमनमें,
तोड़ा था शाख़े गुलको निकली सदाय बुलबुल।

---

* 'मीर' का एक और शेर है —

मुद्दत तो वा हुआ ही नहीं गुञ्चःदार दिल।
अब जो खिला सो जैसे गुले बेवहार दिल।

१. चित्रित चरणोंके तलवे। २. बुलबुल।

यकरंगियोंकी राहें तय करके मर गया है,
गुलमें रगें नहीं यह हैं नक़्शे-पाये बुलबुल।

[९७]

बुलबुलको नाज़ क्यों न ख़याबाने गुल पे हो,
क्या जाने जीने छातीपै भरकर न खाये गुल।
कब तक हिनाई पाँव[1] बिन उसके यह बेकली,
लग जाय टुक चमनमें कहीं आँख पाये-गुल।
बुलबुलको क्या सुने कोई उड़ जाते हैं हवास,
जब दर्दमन्द कहती है दम भरके* हाय गुल।
था वस्फ़ उन लबोंका ज़बाने क़लममें 'मीर',
या मुँहमें अन्दलीब के थे बर्गहाय गुल।

[९८]

खिंचता है उस तरफ़ हीको बेइख़्तियार दिल।
दीवाना दिल बलाज़दा दिल बेक़रार दिल।
समझा भी तू कि दिल किसे कहते हैं दिल है क्या,
आता है जो ज़बां पै तेरी बार-बार दिल।

रदीफ़ मीम

[९९]

काम क्या आते होंगे मालूमात,
यह तो समझे ही न कि क्या है हम।

---

१. मेहदी लगे चरण।
*'दम भरके' से अभिप्राय 'गहरी साँस लेकर' से है।

ऐ बुताँ इस क़दर जफ़ा हमपर,
आक़बत[1] बन्दए ख़ुदा हैं हम।

[१००]

सूख ग़ममें हुए हैं काँटासे,
पर दिलोंमें खटक रहे है हम।
वक़फ़ए-मर्ग अब ज़रूरी है,
उम्र तय करते थक रहे है हम।

[१०१]

है तहे-दिल बुतोंको क्या मालूम,
निकले परदेसे क्या ख़ुदा मालूम।
यही जाना कि कुछ न जाना हाय,
सो भी यक उम्रमें हुआ मालूम।
गर्चे तू ही है सब जगह लेकिन,
हमको तेरी नहीं है जा मालूम।

[१०२]

सय्याद बहार अबकी सब लूटूँगा क्या मैं ही,
टुक बाग़ तलक ले चल मेरा भी क़फ़स जालिम।
जूँ अब्र मैं रोता था जूँ बर्क़ तू हँसता था,
सोहबत न रही यों ही एक आध बरस ज़ालिम।

---

१ परिणाम।

[१०३]

कौन कहता है मुँहको खोलो तुम,
काश के परदे ही में बोलो तुम।
जाना आया है अब जहाँसे हमें,
थोड़ी तो दूर साथ हो लो तुम।
रात गुज़री है सब तड़पते 'मीर',
आँख लग जाय टुक तो सो लो तुम।

[१०४]

याँ आप ही आप आकर गुम आपमें हुए हो।
पैदा नहीं कि किसकी करते हो जुस्तजू तुम।
चाहें तो तुमको चाहें देखें तो तुमको देखें,
ख़ाहिश दिलोंकी तुम हो आँखोंकी आरज़ू तुम।

[१०५]

क्या दिन थे वे देखते तुमको नीची नज़र मैं कर लेता,
शर्मा-शर्मी लोगोंसे जब आँखें मुझको दिखाते तुम।
बिस्तरपर मैं मुर्दा-सा था जान-सी मुझमें आ जाती,
क्या होता जो रंजःक़दम कर मेरे सिरहाने आते तुम।

[१०६]

यह हुस्ने ख़ल्क[1] तुममें इश्क़से पैदा हुआ वर्ना,
घड़ीके रूठेको दो-दो पहर तक कब मनाते तुम।
नज़र दुज़दीदा[2] रखते हो झुकी रखते हो पलकोंको,
लगी होती न आँखें तो न आँखोंको छिपाते तुम।

---

१. ससारका सौन्दर्य (शिष्टाचार)। २ छिपी हुई, चुराई हुई।

यह सारी ख़ूबियाँ दिल लगनेकी हैं मत बुरा मानो,
किसूका बारे मिन्नत बे-इलाक़ा कब उठाते तुम।
फिरा करते थे जब मग़रूर अपने हुस्नपर आगे,
किसूसे दिल लगा जो पूछते हो आते-जाते तुम।

रदीफ़ नून

[१०७]

बेकली बेखुदी कुछ आज नहीं।
एक मुद्दतसे वह मिज़ाज नहीं।
दर्द अगर यह है तो मुझे बस है,
अब दवा को भी एहतियाज[1] नहीं।
हमने अपनी-सी की बहुत लेकिन,
मर्ज़ इश्क़का इलाज नहीं।
शहरे खूबीको खूब देखा 'मीर',
जिसे दिलका कहीं रिवाज नहीं।

[१०८]

सोज़िशे-दिलसे मुफ़्त गलते हैं।
दाग़ जैसे चिराग़ जलते है।
इस तरह दिल गया कि अब तक हम,
बैठे रोते हैं हाथ मलते है।

---

१. आवश्यकता।

भरी आती हैं आज यों आँखें,
जैसे दरिया कहीं उबलते हैं।
तेरे बेखुद जो हैं सो क्या चेतें,
ऐसे डूबे कहीं उछलते हैं।

[१०९]

दें उम्र ख़िज्र मौसिमे-पीरी[1] में तो न ले,
मरना ही उससे ख़ूब है अहदे-शबाब[2] में।
आ निकले थे जो हज़रते 'मीर' इस तरफ़ कहीं,
मैंने किया सवाल यह उनकी जनाबमें।
हज़रत सुनो तो मैं भी तअल्लुक़ करूँ कहीं,
फरमाने लगे रोके यह उसके जवाबमें।
तू जान ले कि तुझसे भी आये जो कल थे याँ,
हैं आज सिर्फ़ ख़ाक जहाने-ख़राबमें।

[११०]

मुत्तसिल[3] रोते ही रहिए तो बुझे आतिशे-दिल,[4]
एक दो आँसू तो और आग लगा जाते हैं।
वक्त़ खुश उनका जो हमबज़्म हैं तेरे, हम तो,
दरो दीवारको अहवाल सुना जाते हैं।
एक बीमारे जुदाई हूँ मैं आपी तिसपर,
पूछनेवाले जुदा जानको खा जाते हैं।

---

१. बुढापेका जमाना। २. यौवन-काल। ३. लगातार। ४. हृदय-की आग।

[१११]

कहियो क़ासिद जो वह पूछे हमें क्या करते हैं।
जानो ईमानो मुहब्बतको दुआ करते हैं।
रुखसते जुंबिशेलब[1] इश्क़की हैरतसे नहीं,
मुद्दतें गुजरीं कि हम चुप ही रहा करते हैं।
फ़ुर्सते ख्वाब नहीं जिक्रे-बुतामें हमको,
रात-दिन राम कहानी सी कहा करते हैं।
यह ज़माना नहीं ऐसा कि कोई ज़ीस्त करे,[2]
चाहते हैं जो बुरा अपना भला करते हैं।

[११२]

हमचश्म[3] है हर आबलए पा का मेरा अश्क,
अज़ बस कि तेरी राहमें आँखोंसे चला हूँ।
इतना ही मुझे इल्म है कुछ मैं भी बहर चीज़,
मालूम नहीं ख़ूब मुझे भी कि मैं क्या हूँ।

[११३]

आँखें जो खुल रही हैं मरनेके बाद मेरी,
हसरत यह थी कि उसको मैं यक निगाह देखूँ।
यह दिल वह जा है जिसमें देखा था तुझको बसते
किन आँखोंसे अब उजड़ा इस घरको आह देखूँ।
आँखें तो तूने दी हैं ऐ जुर्म बख़्शे आलम[4],
क्या तेरी रहमत[5] आगे अपने गुनाह देखूँ।

---

१ ओठका हिलना जो बन्द है। २ जिये। ३. सहदर्शक। ४ ससारके अपराधोको क्षमा करनेवाले। ५ कृपा, दया।

[११४]

निकले हैं जिंसे-हुस्न किसी कारवानमें।
यह वह नहीं मुताअ कि हो हर दुकानमें।
यारब कोई तो वास्ता सरगश्तगीका है,
एक इश्क़ भर रहा है ज़मीन आसमानमें।
फाड़ा हज़ार जासे गरेबाने सब्र 'मीर',
क्या कह गयी नसीमे सेहर[1] गुलके कानमें।

[११५]

न खोल ऐ यार मेरा गोरमें मुँह,
कि हसरत है मेरी जागह कफ़नमें।
रखाकर हाथ दिलपर आह करते,
नहीं रहता चिराग़ ऐसे पवनमें।
जले दिलकी मुसीबत अपनी सुनकर,
लगी है आग सारे तन बदनमें।

[११६]

जिनके लिए अपने तो यों जान निकलते हैं,
इस राहमें वे जैसे अनजान निकलते हैं।
क्या तीरे सितम उसके सीनेमें भी टूटे थे,
जिस ज़ख़्मको चीरूँ हूँ पैकान[2] निकलते हैं।

---

१. सुरभित प्रभाती। २. तीरकी नोक।

[११७]

हम आप हीको अपना मकसूद[1] जानते हैं,
अपने सिवाय किसको मौजूद जानते हैं।
इज्ज़ो नियाज़[2] अपना अपनी तरफ़ है सारा,
इस मुश्तेखाकको हम मसजूद[3] जानते हैं।

[११८]

किया जो अर्ज़ कि दिलसा शिकार लाया हूँ।
कहा कि ऐसे तो मैं मुफ़्त मार लाया हूँ।
चला न उठके वहीं चुपके चुपके फिर तू 'मीर',
अभी तो उसकी गलीसे पुकार लाया हूँ।

[११९]

इन लबोंका जवाब है वह लाल,
हम तुझीसे सवाल रखते है।
ख़ाके आदम ही है तमाम ज़मीन,
पाँवको हम सँभाल रखते है।
यह जो सर खींचे तो क़यामत है,
दिलको हम पायमाल रखते है।

[१२०]

दफ़्तर बनी कहानी बनी मस्नवी बनी,
क्या शरहे सोज़े इश्क़[4] करूँ मैं ज़बाँ नहीं।

---

१. लक्ष्य। २. दीनता। ३. उपास्य। ४. प्रेमाग्निकी व्याख्या, टीका।

अपना ही हाथ सर पे रहा अपने हाँ सदा,
मुशफ़िक़[1] कोई नहीं है कोई मेहबाँ नहीं।
इस अह्द[2] को न जानिए अगला-सा अह्द 'मीर',
वह दौर अब नहीं वह ज़मीं आसमाँ नहीं।

[१२१]

जोशिशे-अश्कमें शब दिल भी गया सीनेसे,
कुछ न मालूम हुआ हाय असर पानीमें।
महो कर आपको यूँ हस्तीमें उसकी जैसे,
बूँद पानीकी नहीं आती नज़र पानी में।

[१२२]

बेकली दिल ही की तमाशा थी,
बर्क़में ऐसे इज़्तिराब[3] कहाँ ?
हस्ती अपनी है बीचमें परदा,
हम न होवें तो फिर हिजाब[4] कहाँ ?

[१२३]

यारो मुझे मुआफ़ करो, मैं नशेमें हूँ।
अब दो तो जाम ख़ाली ही दो मैं नशेमें हूँ।
एक-एक फ़र्ते-दौरमें यूँ ही मुझे भी दो,
जामे-शराब पुर न करो मैं नशेमें हूँ।
मस्तीसे दरहमी[5] है मेरी गुफ़्तगूके बीच,
जो चाहो तुम भी मुझको कहो, मै नशेमें हूँ।

---

१. मित्र। २ युग। ३. घबराहट, बेकरारी। ४. परदा, आड, लज्जा। ५. बिखराव, अस्तव्यस्तता।

या हाथों हाथ लो मुझे मानिन्द जामे-मय[1],
या थोड़ी दूर साथ चलो मैं नशेमें हूँ।
माज़ूर[2] हूँ जो पाँव मेरा बे-तरह पड़े,
तुम सरगराँ[3] तो मुझसे न हो मैं नशेमें हूँ।
भागी नमाज़े जुमा तो जाती नहीं है कुछ,
चलता हूँ मैं भी टुक तो रहो मै नशेमें हूँ।
नाज़ुकमिज़ाज आप क़यामत हैं 'मीर' जी,
जूँ शीशा मेरा मुँह न लगो मैं नशेमें हूँ।

[१२४]

काश के दिल दो तो होते इश्क़में।
एक रहता एक खोते इश्क़में।
ख़्वाबमें देखा उसीको एक रात,
बरसों काटे हमने सोते इश्क़में।

[१२५]

इस ढंगसे हिला कि बजा दिल नहीं रहे,
इस गोशके गुहरसे[4] दम आये हैं नाकमें।
अबकी जुनूँमें फ़ासला शायद न कुछ रहे,
दामनके चाक और गरेबाँके चाकमें।

[१२६]

क्या क्या लक़ब[5] हैं शौक़के आलममें यारके,
काबा लिखूँ कि क़िबला उसे या ख़ुदा लिखूँ।

---

१. मधुपात्रकी भाँति। २. निषेध किया हुआ। ३. अप्रसन्न। ४ कानके मोतीसे। ५. उपाधियाँ।

हैराँ हो मेरे हालमें कहने लगा तबीब[1],
इस दर्दमन्दे-इश्क़की मैं क्या दवा लिखूँ।

[१२७]

ऐ काश हमको सुक्र[2]की हालत रहे मुदाम,
ता हालकी ख़राबीसे हम बेख़बर रहें।*
रहते हैं यूँ हवास परीशाँ कि जूँ कहीं,
दो तीन आके लूटे मुसाफ़िर उतर रहें।

[१२८]

सदा हम तो खोये गयेसे रहे,
कभू आपमें तुमने पाया हमें।
शब आँखोंसे दरिया सा बहता रहा,
उन्हींने किनारे लगाया हमें।

[१२९]

ज़ुल्मो सितम क्या जौरो जफ़ा क्या जो कुछ कहिए उठाता हूँ।
ख़िफ़्फ़त खींच के[3] जाता हूँ रहता नहीं दिल फिर आता हूँ।

---

१. चिकित्सक। २. बेहोशी। *इस बेखुदीकी हालतपर कुछ शेर है :—

मयसे गरज निशात है किस रू-सियाहको।
इक गूना बेखुदी मुझे दिन रात चाहिए। —ग़ालिब।
ली होशमें आनेकी जो साक़ीसे इजाज़त,
फरमाया खबरदार कि नाजुक है जमाना। —हाली।
ख्वाहम कि यह बेखुदी बरआरम नफ़्सी,
मी खुर्दन व मस्तबूदनम ज़ी सबवे अस्त।—उमर खैयाम।

३. जिल्लत उठाकर।

घरसे उठकर कोनेमें बैठा बेत पढ़े दो बातें कीं,
किस किस तौरसे अपने दिलको उस बिन मैं बहलाता हूँ।

[१३०]

जब लग गये झमकने रुख़सारे-यार दोनों,
तब मेहो-महने अपनी आँखें झुकालियाँ हैं।
सुबहे-चमनका जलवा हिन्दी बुतोंमें देखा'
सन्दल भरी जबीं हैं होंठोंकी लालियाँ हैं।
उन गुलरुखोंकी क़ामत लहके है यूँ हवामें,
जिस रंगसे लचकती फूलोंकी डालियाँ हैं।
वह दुज़्दे दिल[1] नहीं तो क्यों देखते ही मुझको,
पलकें झुकालियाँ हैं आँखें चुरालियाँ हैं।

[१३१]

कहा मैं दर्दे-दिल या आग उगली,
फफोले पड़ गये मेरी ज़बाँमें।
तेरी शोरिश भी बेकल है मगर 'मीर',
मिला दी पीसकर बिजली फ़ुग़ाँमें[2]।

[१३२]

उससे घबराके जो कुछ कहनेको आ जाता हूँ।
दिलकी फिर दिलमें लिये चुपके चला जाता हूँ।
मजलिसे-यारमें तो बार नहीं पाता हूँ।
दरो-दीवारको अहवाल सुना जाता हूँ।

---

१. हृदयको चुरानेवाला। २. रोदनमे।

[१३३]

तुर्फ़ा[1] .ख़ुशरू दमे ख़ूँरेज़ अदा करते हैं।
वार जब करते हैं मुँह फेर लिया करते हैं।
दिलको जाना था गया रह गया है अफ़साना,
रोज़ो-शब हम भी कहानी सी कहा करते हैं।

[१३४]

वह संग-दिल न आया बहुत देखी उसकी राह,
पथरा चली हैं आँख मेरी इन्तज़ारमें।
किस किस अदासे रेखते मैंने कहे वले,
समझा न कोई मेरी ज़बाँ इस दयारमें।

रदीफ़ वाव

[१३५]

हुए थे जैसे* मर जाते, पर अब तो सख़्त हसरत है,
किया दुश्वार[2] नादानीसे हमने कारे आसाँको।
तुझे गर चश्मे-इबरत है तो आँधी औ बगोलेसे,
तमाशा कर ग़ुबार अफशानिए-ख़ाके-अज़ीज़ाँको।
कोई काँटा सरे रहका हमारी ख़ाकपर बस है,
गुले-गुलज़ार क्या दरकार है गोरे ग़रीबाँको।
सदाये-आह जैसे तीर, जीके पार होती है,
किसू बेदर्दने खींचा किसूके दिलसे पैकाँ[3] को।

---

१. विचित्र। * तात्पर्य यह है कि पैदा होते ही मर गये होते।
२. कठिन। ३. तीरकी नोक।

[१३६]

गर्चे कब देखते हो पर देखो।
आरज़ू है कि तुम इधर देखो।
इश्क़ क्या-क्या हमें दिखाता है,
आह, तुम भी तो एक नज़र देखो।

[१३७]

उसकी तर्ज़े-निगाह मत पूछो।
जी ही जाने है आह मत पूछो।
कहीं पहुँचोगे बेरहीमें भी,
गुम रहा यों यह राह मत पूछो।

[१३८]

तेवरमें जबसे देखे है साक़ी खुमारके,
पीता हूँ रखके आँखों पै जामेशराबको।
अब तो नक़ाब मुँह पै ले ज़ालिम कि शब हुई,
शर्मिन्दा सारे दिन तो किया आफ़ताबको।
कहनेसे 'मीर' और भी रोता है मुज़्तरब,
समझाऊँ कब तक इस दिले-ख़ानाख़राबको।

[१३९]

बरसोंमें कभू ईधर तुम नाज़से आते हो।
फिर बरसों तई प्यारे जीसे नहीं जाते हो।
रहते हो तुम आँखोंमें फिरते हो तुम्हीं दिलमें,
मुद्दतसे अगर्चे याँ आते हो न जाते हो।

ख़ुश करनेसे टुक ऐसे नाख़ुश ही रखा करिए,
हँसते हो घड़ी भर तो पहरों ही रुलाते हो।
दिल खोलके मिल चलिए जो 'मीर'से मिलना है,
आँखें भी दिखाते हो फिर मुँह भी छिपाते हो।

[१४०]

करते हो तुम नीची नज़रें यह भी कोई मुरौवत है,
बरसोंसे फिरते हैं जुदा हम आँखसे आँख मिलाने दो।
क्या जाता है इसमें हमारा चुपके हम तो बैठे है,
दिल जो समझना था सो समझा नासेह[1] को समझाने दो।

[१४१]

सर पे आशिक़के न यह रोज़े-सियह[2] लाया करो।
जी उलझता है बहुत मत बाल सुलझाया करो।
शौक़से दीदारके भी आँखोंमें खिंच आया जी,
इस समयमें देखने हमको बहुत आया करो।

[१४२]

रहने से मेरे पासके बदनाम हुए तुम,
अब जाके रहो वाँ कहीं रुसवा[3] न जहाँ हो।
कुछ हाल कहें अपना नहीं बेख़ुदी तुजको,
ग़श आता है लोगोंको यह अफ़साना जहाँ हो।
इन उजड़ी हुई बस्तियोंमें दिल नहीं लगता,
है जीमें वहीं जा बसें वीराना जहाँ हो।

---

१. उपदेशक (नसीहत करनेवाला)। २. काला दिन। ३. बदनाम।

रदीफ़ हे

[१४३]

आग थे इब्तिदाए-इश्क़[1] में हम,
अब जो हैं खाक इन्तिहा[2] है यह।
बूदे-आदम[3] नमूदे-शबनम[4] है,
एक दो दममें फिर हवा है यह।
शुक्र उसकी जफ़ा[5] का हो न सका,
दिलसे अपने हमें गिला[6] है यह।
शोरसे अपने हश्र[7] है परदा,
यों नहीं जानता कि क्या है यह।

[१४४]

क्या कहूँ तुझसे कि क्या देखा है तुझमें मैंने,
इश्वः[8] वो ग़मज़ः[9] वो अन्दाज़ो अदा क्या-क्या कुछ।
दिल गया, होश गया, सब्र गया, जी भी गया,
शग़्लमें ग़मके तेरे हमसे गया क्या-क्या कुछ।
हसरते-वस्ल[10] वो ग़मेहिज्र[11] वो खयाले-रुखे-दोस्त[12],
मर गया मै पै मेरे जीमें रहा क्या-क्या कुछ।
दर्दे दिल, ज़ख्मे जिगर, कुलफ़ते ग़म, दाग़े फिराक़,
आह आलमसे मेरे साथ चला क्या-क्या कुछ।

---

१. प्रेमारम्भ। २. अन्त। ३. मानवका अस्तित्व। ४. ओस-कणकी भाँति। ५. जुल्म, अन्याय। ६. शिकायत। ७. प्रलय। ८. नाज-नखरा। ९ आँख मारना, नखरा, अदा। १०. मिलनकी लालसा। ११. वियोग-दुःख। १२. प्रियतमके मुखका ध्यान।

[१४५]

बूद नक़्शो निगार[1] सा है कुछ।
सूरत एक एतबार सा है कुछ।
यह जो मोहलत जिसे कहे हैं उम्र,
देखा तो इन्तज़ार सा है कुछ।
क्या है देखो हो जो उधर हरदम,
और चितवनमें प्यार सा है कुछ।

[१४६]

आँखें जो हों तो ऐन है मक़सूद हर जगह।
बिलज़ात है जहाँमें वह मौजूद हर जगह।
वाक़िफ़ हो शाने बन्दगी[2] से क़ैदे क़िब्ला[3] क्या,
सर हर कहीं झुका कि है मसजूद[4] हर जगह।

[१४७]

न बातें करो सरगरानीके साथ।
मेरी ज़ीस्त है मेहबानीके साथ।
न उठकर दरे-यारसे जा सके,
यह कम लुत्फ़ है नातवानीके साथ।

रदीफ़ इये

[१४८]

मुद्दत हुई न ख़त है न पैग़ाम है मगर,
एक रस्म वफ़ाकी बर उफ़्ताद[5] हो गयी।

---

१. तस्वीरकी भाँति। २. उपासनाकी रीति। ३ काबेकी उपास्य भूमिकी ही कैद क्या है? ४. उपास्य। ५. परम्पराकी समाप्ति।

दिल किस क़दर शिकस्ता हुआ था कि रात 'मीर',
आई जो बात लब पे सो फ़रयाद हो गयी।

[१४९]

उसके ईफ़ाए अहद[1] तक न जिये,
उम्रने हमसे बेवफ़ाई की।
वस्लके दिनकी आरज़ू ही रही,
शब न आख़िर हुई जुदाईकी।
कासए चश्म[2] लेके जूँ नरगिस,
हमने दीदारकी गदाई की।[3]

[१५०]

काबा सौ बार वह गया तो क्या,
जिसने याँ एक दिलमें राह न की।
जिससे थी चश्म हमको क्या क्या 'मीर',
उस तरफ़ उनने एक निगाह न की।

[१५१]

कहाँका गुबार आह दिलमें यह था,
मेरी ख़ाक बदली सी सब छा गयी।
हुई सामने यूँ तो एक-एक के,
हमींसे वह कुछ आँख शर्मा गयी।

---

१ वादेकी पूर्ति। २. नयन-पात्र। ३. हमने दर्शनकी भीख माँगी।

[१५२]

क्या करूँ शरह[1] ख़िस्ताजानीकी ।
मैंने मर मरके ज़िन्दगानीकी ।
तिश्नालब[2] मर गये तेरे आशिक़,
न मिली एक बूँद पानीकी ।
जिससे खोई थी नींद 'मीर'ने कल,
इब्तिदा फिर वही कहानी की ।

[१५३]

गोर[3] किस दिल जलेकी है यह फ़लक,
शोला एक सुबह याँसे उठता है ।
ख़ानए-दिल[5]से ज़ीनहार[6] न जा,
कोई ऐसे मकाँसे उठता है ।
यों उठे आह उस गलीसे हम,
जैसे कोई जहाँ[7] से उठता है ।

[१५४]

कली कहते हैं उसका सा देहन[8] है ।
सुना करिए कि यह भी एक सख़ुन है ।
टपकते दर्द हैं आँसूकी जागह,
इलाही चश्म या ज़ख़्मे कुहन[9] है ।

---

१. टीका, भाष्य । २. प्यासे ओठवाले । ३ समाधि, क़ब्र । ५. हृदय-मन्दिर । ६. हरगिज । ७. ससार । ८. मुख । ९. पुराना ।

[१५५]

सरापा आरज़ू[1] होनेने बंदा कर दिया हमको,
वगर्ना हम ख़ुदा थे गर दिले बेमुद्दआ[2] होते ।*
[3]फ़लक ऐ काश हमको ख़ाक ही रखता कि इसमें हम,
गुबारे-राह[4] होते या किसूकी ख़ाके-पा[5] होते ।
इलाही कैसे होते है जिन्हें है बंदगी ख़ाहिश,
हमें तो शर्म दामनगीर होती है ख़ुदा होते ।
कहें जो कुछ मलामतगर[6] बजा है, 'मीर' क्या जाने,
उन्हें मालूम तब होता कि वैसेसे जुदा होते ।

[१५६]

चमन यार तेरा हुआ ख़ाह है ।
गुल एक दिल है जिसमें तेरी चाह है ।
सरापा[7] में उसके नज़र करके तुम,
जहाँ देखो अल्लाह अल्लाह है ।
तेरी आह किससे ख़बर पाइए,
वही बेख़बर है जो आगाह है ।

---

१. सशरीर कामना । २. कामना-रहित हृदयवाले । * किसी और कविने भी कहा है :—

हम ख़ुदा थे गर न होता दिलमें कोई मुद्दआ,
आरज़ूओंने हमारी हमको बंदा कर दिया ।

३. आकाश । ४. राहकी धूल । ५ चरण-धूलि । ६ मलामत करनेवाले । ७ नखशिख ।

कभी वादिए-इश्क़[1] दिखलाइए,
बहुत ख़िज़्र[2] भी दिलमें गुमराह है।
जहाँसे तो रख़्ते-अक़ामत[3] को बाँध,
यह मंज़िल नहीं बेख़बर राह है।
न शर्मिन्दा कर अपने मुँहसे मुझे,
कहा मैंने कब यह कि तू माह[4] है।

[१५७]

जाए रोग़न दिया करे है इश्क़,
ख़ूने-बुलबुल चिराग़में गुलके।
दिल तसल्ली नहीं सबा वर्ना,
जलबे सब हैंगे दाग़में गुलके।

[१५८]

हस्ती अपनी हुबाबकी-सी है।
यह नुमाइश सुराबकी-सी है।
नाज़की उसके लबकी क्या कहिए,
पंखड़ी एक गुलाबकी-सी है।
चश्मे दिल खोल उस भी आलमपर,
याँकी औक़ात ख़ाबकी-सी है।

---

१. प्रेमकी घाटी। २. एक प्रसिद्ध पैगम्बर जिनके बारेमे प्रसिद्धि है कि उन्होने अमृत-पान किया है और लोगोको राह बताया करते है। ३. अस्तित्वके सामान। ४. चाँद।

वार-बार उसके दर पे जाता हूँ,
हालत अब इज़तिराबकी-सी है।
'मीर' उन नीमबाज़ आँखोंमें,
सारी मस्ती शराबकी-सी है।

[१५९]

ताकि वह टुक आनके पूछे कभू,
इसलिए बीमार हुआ चाहिए।
मुस्तबए बेखुदी[1] है यह जहाँ,
जल्द खबरदार हुआ चाहिए।

[१६०]

पासे नामूसे इश्क़[2] था वर्ना,
कितने आँसू पलक तक आये थे।
'मीर' साहब रुला गये सबको,
कल वे तशरीफ़ याँ भी लाये थे।

[१६१]

ख़ूब ही ऐ अब्र यक शब आओ बाहम रोइए।
पर न इतना भी कि डूबे शहर कम-कम रोइए।
वक्त खुश देखा न इकदमसे ज़ियादा देहमें,
ख़न्दए सुबहे चमन[3] पर मिस्ले शबनम रोइए।
शादी वो ग़ममें जहाँकी एकसे दसका फ़र्क़,
ईदके दिन हँसिये तो दस दिन मोहर्रम रोइए।

---

१. बेखुदीका सौदा बेचनेका चबूतरा। २. प्रेमकी बदनामीका खयाल। ३. उद्यानके हँसते हुए प्रभात।

[१६२]

बुर्क़ेको उठा चेहरेसे वह बुत अगर आवे।
अल्लाहकी क़ुदरतका तमाशा नज़र आवे।
खुलनेमें तेरे मुँहके कली फाड़े गरेबाँ,
हिलनेमें तेरे होठोंके गुल बर्ग तर आवे।

[१६३]

कहाँ ऐ रश्के-आबे-ज़िन्दगी[1] है तू कि याँ तुझ बिन,
हर एक पाकीज़ा गौहर जीसे अपने हाथ धोता है।
लगा मुर्देको मेरे देखकर वह नासमझ कहने,
जवानीकी है नींद इसको कि इस ग़फ़लतसे सोता है।
न रक्खो कान नज़्मे शायराने हालपर इतने,
चलो टुक 'मीर' को सुनने कि मोतीसे पिरोता है।

[१६४]

करे क्या कि दिल भी तो मजबूर है।
ज़मीं सख़्त है आसमाँ दूर है।
तमन्नाए दिलके लिए जान दी,
सलीक़ा हमारा तो मशहूर है।

[१६५]

सिजदा करनेमें सर कटे हैं जहाँ,
सो तेरा आस्तान है प्यारे।

---

१. जीवनामृत-विनिन्दक।

गुफ़्तगू रेख़्तेमें हमसे न कर,
यह हमारी ज़बान है प्यारे।
छोड़े जाते हैं दिलको तेरे पास,
यह हमारा निशान है प्यारे।

[१६६]

ग़ालिब कि यह दिलख़स्ता शबे हिज्रमें मर जाय।
यह रात नहीं वह जो कहानीमें गुज़र जाय।
नै बुतकदा है मंज़िले मक़सूद न काबा,
जो कोई तलाशी* हो तेरा आह किधर जाय।
याक़ूत कोई इनको कहै है कोई गुलबर्ग,
टुक होंठ हिला तू भी कि एक बात ठहर जाय।

[१६७]

हँसते हो रोते देखकर ग़मसे।
छेड़ रक्खी है तुमने क्या हमसे।
सबने जाना कहीं यह आशिक़ है,
बह गये अश्क दीदए-नम से।
मुफ़्त यों हाथसे न खो हमको,
कहीं पैदा भी होते हैं हमसे।
कोई बेगाना गर नहीं मौजूद,
मुँह छिपाना यह क्या फिर हमसे।

---

* 'तलाशी' यहाँ तुर्की भाषाके शब्द-रूपमे आया है जिसका अर्थ होता है तलाश करनेवाला। फारसी और उर्दूमे इसके स्थानपर मतलाशी शब्द प्रयुक्त होता है।

[१६८]

मेरी ख़ल्क़े महवे कलाम[1] सब मुझे छोड़ते हैं ख़मोश कब,
मेरा हर्फ़[2] रश्के किताब है मेरी बात लिखनेका बाब है।
जो वह लिखता कुछ भी तो नामाबर कोई रहती मुँहमें तेरी जुबाँ,
तेरी ख़ामुशीसे यह निकले है कि जवाब ख़तका जवाब है।
नहीं खुलतीं आँखें तुम्हारी टुक कि मआलपर नज़र भी करो,
यह जो वहमकी सी नमूद है इसे .ख़ूब देखो तो ख़ाब है।
मेरा शोर सुनके जो लोगोंने किया पूछना तो कहे है क्या,
जिसे 'मीर' कहते हो साहबो यह वही तो ख़ानाख़राब है।

[१६९]

नज़र मुतलक़ नहीं हिजराँमें उसको हालपर मेरे,
मेरा दिल उसके ग़ममें गोया उसका दिल है क्या जाने।
तड़पना नक़्शे-पाये नाक़ापर[3] जाने है इक मजनूँ,
बयाबाँमें वह लैलाका किधर महमिल[4] है क्या जाने।
तरफ़ होना मेरा मुश्किल है 'मीर' इस शेरके फ़नमें,
यूँ ही सौदा कभी होता है सो जाहिल है क्या जाने।

[१७०]

याँ तो आई नही शतरंजे-ज़मानेकी चाल,
और वहाँ बाज़ी हुई मात चली जाती है।

---

१ मेरी वाणी (कविता) पर मुग्ध दुनिया। २. दाग, दोप, अपराध। ३. ऊँटनीका पद-चिह्न। ४. परदेदार पालकी गाड़ी।

रोज़ आने पै नहीं निस्बते इश्क़ी मौक़ूफ़,
उम्र भर एक मुलाक़ात चली जाती है ।

[१७१]

मेरे तग़य्युरे हालपर मत जा
इत्तिफ़ाक़ात हैं ज़मानेके ।
दमे आख़िर ही क्या न आना था,
और भी वक़्त थे वहानेके ।

[१७२]

फ़क़ीराना आये सदा[1] कर चले ।
मियाँ ख़ुश रहो हम दुआ कर चले ।
वह क्या चीज़ है आह जिसके लिए,
हर एक चीज़से दिल उठाकर चले ।
कोई नाउमीदाना करते निगाह,
सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले ।
दिखाई दिये यों कि बेख़ुद किया,
हमें आपसे भी जुदा कर चले ।
परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सभोंकी ख़ुदा कर चले ।

[१७३]

करो तवक्कुल[2] कि आशक़ीमें न यों करोगे तो क्या करोगे ।
अलम[3] जो यह है तो दर्दमन्दो कहाँ तलक तुम दवा करोगे ।

---

१. आवाज । २. सब्र, ईश्वर-निर्भरता । ३. दु ख, वेदना ।

[१७४]

इधरसे अब्र उठकर जो गया है।
हमारी ख़ाकपर भी रो गया है।
मसायब[1] और थे पर दिलका जाना,
अजब एक सानहा सा हो गया है।
सिरहाने 'मीर'के कोई न बोलो,*
अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

[१७५]

सरगुज़श्त अपनी किस अन्दोह[2]से शब कहता था,
सो गये तुम न सुनी आह कहानी उसकी।
आबलेकी - सी तरह टीस लगी फूट बही,
दर्दमन्दीमें गई सारी जवानी उसकी।

[१७६]

दुज़दीदा निगह करना फिर आँख मिलाना भी।
इस लोटते दामनको पास आके उठाना भी।
पामालिए आशिक़[3]को मंजूर रखे जाना,
फिर चालकी ढब चलना ठोकर न लगाना भी।
बुर्क़ेको उठा देना पर आधे ही चेहरेसे,
क्या मुँहको छिपाना भी कुछ झमकी[4] दिखाना भी।
देख आँखें मेरी नीची एक मारना पत्थर भी,
ज़ाहिरमें सताना भी परदेमें जताना भी।

---

१ कष्ट। *'सिरहाने मीरके आहिस्ता बोलो' पाठ भी प्रचलित है।
२. दर्द। ३. प्रेमीका पद-दलन। ४ झलक।

[१७७]

देखा तो मिस्ले अश्क नज़रसे गिरा दिया,
अब मेरी उसकी आँखमें इज़्ज़त नहीं रही।
दीवानगीसे अपनी है अब सारी बात खब्त,
इफ़राते इश्तियाक़[1] से वह मत नहीं रही।

[१७८]

यों तो मुरदेसे पड़े रहते हैं हम,
पर वह आता है तो आ जाता है जी।
हाय उसके शर्बती लबसे जुदा,
कुछ बताशा-सा घुला जाता है जी।
क्या कहें तुमसे कि उस शोले बग़ैर,
जी हमारा कुछ जला जाता है जी।
उठ चले पर उसके ग़श करते हैं हम,
यानी साथ उसके चला जाता है जी।

[१७९]

इलाही कहाँ मुँह छिपाया है तूने।
हमें खो दिया है तेरी जुस्तजूने।
जो खाहिश न होती तो काहिश[2] न होती,
हमें जीसे मारा तेरी आरज़ूने।

---

१. उत्कण्ठाका प्राबल्य। २. उदासी, दु ख, पतन।

[१८०]

काबे गये क्या कोई मक़सद[1] को पहुँचता है,
क्या सई[2] से होता है जब तक न ख़ुदा चाहे।
हम इज्ज़[3] से पहुँचे हैं मक़सूदकी मंजिलको,
वह ख़ाकमें मिल जावे जो उससे मिला चाहे।

[१८१]

छाती जला करे है सोज़े दरूँ बलासे[4],
एक आग सी लगी है क्या जानिए कि क्या है!
मैं और तू हैं दोनों मजबूर तौर अपने,
पेशा तेरा जफ़ा[5] है, शेवा[6] मेरा वफ़ा[7] है।
फिरते हो 'मीर' साहब सबसे जुदा जुदा तुम,
शायद कहीं तुम्हारा दिल इन दिनों लगा है।

[१८२]

हमारा तो है अस्ले मुद्दआ तू,
ख़ुदा जाने तेरा क्या मुद्दआ है।
[8]हरमसे देर[9] उठ जाना नहीं ऐब
अगर याँ है ख़ुदा वाँ भी ख़ुदा है।
न आलममें है नै आलमसे बाहर,
यह सब आलमसे आलम ही जुदा है।

---

१. लक्ष्य। २ परिश्रम, यत्न। ३. दैन्य। ४. प्रबल आन्तरिक ज्वाला। ५. अन्याय। ६. परम्परा, ढग। ७. निष्ठा। ८ मस्जिद। ९. मन्दिर।

[१८३]

लुत्फ़ उसके बदनका कुछ न पूछो,
क्या जानिए जान है कि तन है।
गह देरमें है गहे हरममें,
अपना तो यही दिवानापन है।
हम कुश्तए-इश्क़ हैं हमारा,
मैदानकी खाक ही कफ़न है।

[१८४]

हर सुबह उठके तुझसे माँगूँ हूँ मैं तुझीको,
तेरे सिवाय मेरा कुछ मुद्दआ नहीं है।
मैं रोऊँ तुम हँसो हो क्या जानो 'मीर' साहब,
दिल आपका किसूसे शायद लगा नहीं है।

[१८५]

ऐसा न हुआ होगा कोई वाक़आ आगे,
एक खाहिश दिल साथ मेरे जीती गड़ी है।
क्या नक्शमें मजनूँ हीके थी रफ़्तगीए-इश्क़[1],
लैलाकी भी तस्वीर तो हैरान खड़ी है।

[१८६]

हम तौरे इश्क़से तो वाक़िफ़ नहीं है लेकिन,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है।

---

१. प्रेमकी बेचैनी या बेहोशी।

क्या चाल यह निकाली होकर जवान तुमने,
अब जब चलो हो दिलको ठोकर लगा करे है।
समझा है यह कि मुझको ख़ाहिश है ज़िंदगीकी,
किस नाज़से मुआलिज[1] मेरी दवा करे है।
एक आफ़ते ज़माँ है यह 'मीर' इश्क़पेशा,
परदेमें सारे मतलब अपने अदा करे है।

[१८७]

किसको कहते हैं नहीं मैं जानता इस्लामो कुफ़्र,
देर हो या काबा मतलब मुझको तेरे दरसे है।*
अश्क पै दर पै चले आते थे चश्मे ज़ारसे,
हर निगहका तार माना रिश्तए-गौहरसे है।

[१८८]

शेर मेरे हैं सब खवास-पसन्द[2],
पर मुझे गुफ़्तगू अवाम[3]से है।†
सर झुकाऊँ तो और टेढ़े हो,
क्या तुम्हें चिढ़ मेरे सलामसे है।

---

१. चिकित्सक। २. विशिष्ट जन-प्रिय। ३. सामान्यजन।

* उर्फ़ी कहता है:—
आशिक़ हम अज़् इस्लाम खराबात हम अज़् कुफ़्र,
परवाना चिरागे हरम व देर न दानद।

† फ़ैज़ी कहता है:—
हदीस मतलबे मा मुद्दआए जेर लबी अस्त।
कि अहले बज्म अवाम अन्दो गुफ़्तगू अरबी अस्त।

सहल है 'मीर' का समझना क्या,
हर सखुन उसका एक मुक़ामसे है।

[१८९]

सोज़े दरूँने आख़िर जी ही खपा दिया है,
ठंडा दिल अब है ऐसा जैसे बुझा दिया है।
आँखोंकी कुछ हया थी सो मूँद लीं इधरसे,
परदा जो रह गया था वह भी उठा दिया है।

[१९०]

सर किसूसे फ़रो[1] नहीं आता,
हैफ़ बन्दे हुए ख़ुदा न हुए।
कैसा कैसा क़फससे सर मारा,
मौसिमे गुलमें हम रिहा न हुए।

[१९१]

बहार आई निकालो मत मुझे अबके गुलिस्तांसे।
मेरा दामन बने तो बाँध दो गुलके ग़रेबांसे।
ख़ुदा जाने कि दिल किस खाना आबादाँको दे बैठे,
खड़े थे मीर साहब घरके दरवाज़े पै हैरां-से।

[१९२]

मौसिम है निकले शाखोंसे पत्ते हरे हरे।
पौधे चमनमें फूलोंसे देखे भरे भरे।

---

१ झुकना।

आगे किसूके क्या करें दस्ते तमअ[1] दराज़[2],
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे।

[१९३]

इतने लोगोंमें चश्म किसूकी क़हृ क़यामत आफ़त है,
तुमने देखी नहीं है साहब आँख कोई शर्माई हुई।
हम क़ैदी भी मौसिमे गुलकी कबसे तवक़्क़ा[3] रखते थे,
देर बहार आई अबकी पै असीरोंकी[4] न रिहाई हुई।

[१९४]

आलम आलम इश्क़ोजुनूँ है दुनिया दुनिया तोहमत है।
दरिया दरिया रोता हूँ मैं सेहरा सेहरा वहशत है।
ख़ाकको आदम करके उठाया जिसके दस्ते क़ुदरतने,
क़द्र नहीं कुछ उस बन्देकी यह भी ख़ुदाकी क़ुदरत है।
क्या दिलकश है बज़्म जहाँकी जाते यहाँ जिसके देखो,
वह ग़मदीदा रंजकशीदा आह सरापा हसरत है।



१. लोभका हाथ। २ फैलाऊँ। ३. आशा। ४ वन्दियो।

विविध काव्य

स्फुट

रखाकर हाथ दिलपर आह करते,
नहीं रहता चिराग़ ऐसी पवनमें।

× ×

तेरी ज़ुल्फ़े सियहकी यादमें आँसू झमकते हैं।
अँधेरी रात है, बरसात है, जुगनूँ चमकते हैं।

× ×

आनेके वक़्त तुम तो कहींके कहीं रहे।
अब आये तुम तो फ़ायदा हम ही नही रहे।

× ×

उनने देखा जो उठके सोते से।
उड़ गये आइनेके तोतेसे।

× ×

रहे तलबमें गिरे होते सरके बल हम भी,
शिकस्तापाईने अपनी हमें सँभाल लिया।

× ×

ख़ूब किया जो अहले करमके जूदका कुछ न ख़याल किया।
हम जो फ़क़ीर हुए तो हमने पहले तर्के सवाल किया।

× ×

वस्लमें रंग उड़ गया मेरा,
क्या जुदाईको मुँह दिखाऊँगा।

× ×

कोई हो महरमे शोख़ी तेरा तो मैं पूछूँ,
कि बज़्मे-ऐशे-जहाँ[1] क्या समझके बरहम[2] की।

× ×

बस न लग, चल नसीम मुझसे कि मैं,
रह गया हूँ चिराग़ सा बुझकर।

रुबाइयाँ

दामन अज़लतका[3] अब लिया है मैंने,
दिल मर्गसे[4] आशना किया है मैंने।
था चश्मए आबे ज़िन्दगानी[5] नज़दीक,
पर ख़ाकसे उसको भर दिया है मैंने।

× ×

बुतख़ानेसे दिल अपने उठाये न गये।
काबेकी तरफ़ मिज़ाज लाये न गये।
तौरे मस्जिदको बरहमन क्या जाने,
याँ मुद्दते उम्रमें हम आये न गये।

× ×

दिल ख़ून हुआ ज़ब्त ही करते करते।
हम हो ही चुके दुखोंके भरते भरते।
ऐ मायए ज़िन्दगी[6] सितम है यह अगर,
भर आँख तुझे देखें न मरते मरते।

× ×

---

१ ससार की सुख-सभा। २ बिखेरना। ३ एकान्त। ४. मृत्यु। ५ अमृतका स्रोत। ६ जीवन-धन।

चुपके रहना न मीर दिलमें ठानो।
बोलो चालो कहा हमारा मानो।
एक हर्फ़ न कह सकोगे वक़्ते रफ़्तन[1],
चलनेके ज़बानके ग़नीमत जानो।

मुस्तज़ाद

ता चंद ग़मे दिलसे हिकायत करिये, हो होकर तंग।
किस किससे शबो रोज़ शिकायत करिये, आता है नंग[2]।
सख़्ती कोई ऐ सनम कहाँ तक खींचे, है जीमें कि अब,
हो नाला तेरे दिलमें सरायत[3] करिये, पर तू है संग[4]।

मुसल्लस (त्रिपदी)

ऐ वफ़ाए गुलके आशिक़ सबमें है यह राज़ फाश[5]।
जूँ सबा बेहूदा सरगरदाने ई गुलशन मुबाश[6]।
मन चे गुल चीदम कि उम्रे बाग़बानी कर्दा अम।

× × ×

आई थी मुलाक़ातकी राह उसके वले[7] सूद[8]।
ताचश्म कुनम बाज़ शबेवस्ल सेहर सूद।
उम्रे गुज़राँ बरसरे इन्साफ़ नयामद।

मुख़म्मस (पंचपदी)

तेरा हूँ ख़्वार तेरी शान की मुझे सौगंद।
मरूँ हूँ तुझपे तेरी जानकी मुझे सौगंद।

---

१. चलते समय (मृत्युकालमे)। २. लज्जा। ३. प्रभाव। ४ पत्थर।
५. रहस्य-भेद। ६ ख़ुश। ७. किन्तु। ८. लाभ।

तुझीको जपता हूँ ईमानकी मुझे सौगंद।
यही वज़ीफ़ा है कुरआनकी मुझे सौगंद।
तुझीसे बंदगी रखता हूँ मैं खुदाकी क़सम।

× × ×

रहे है मद्दे नज़र तेरी जुल्फ़ काकुल व खाल[1]।
फिरा करे है मेरी आँखोंमें तेरी ही चाल।
शबोंको तेरा तसव्वुर दिनोंको तेरा खयाल।
मरीज़े दिल हूँ मेरा आबिदो[2] है शाहिदे[3] हाल।
इसी सितमज़दह बीमारो बेदवाकी क़सम।

तरकीबबंद

[गजलकी ही तरह है। मकता (अन्तिम पद) भिन्न काफिये और रदीफमे होता है और उसी अन्तिम काफिया और रदीफका वाद वाले खण्ड मे अनुसरण करते है]

गरमी तू कर ऐ सनम कि आख़िर,
पत्थरके जिगरमें भी शरर[4] है।
आनेसे डर न दिलमें मेरे,
खूबाँ[5] यह तो तुम्हारा घर है।
चुप हूँ गोया हूँ बेज़बाँ मै।
रखता हूँ अजब लब वो देहाँ मैं।

× ×

१. कपोलका तिल। २ परहेजगार, उपासक। ३. गवाह। ४. चिनगारी। ५. सुन्दर, प्रिय।

हूँ मैं तो चिराग़ अख़ीर शबका,
कोई दमका हूँ मेहमाँ मैं।
दिलसोज़ी मेरी कर ऐ सबा टुक,
होने तई सुबहके कहाँ मैं।
बारे मैं यह तैयार देखा।
हर कूचेको बार-बार देखा।

× ×

आँखें गईं रोते-रोते लेकिन,
तूने न इधरको यार देखा।
पूछा हमारे बाद हमको,
यारो यह जहाँका प्यार देखा।
देखा तो मिला न कोई हमफ़न।
देखे यहाँ शेख और बरहमन।

× ×

आँखोंमें ठहर रहे हैं आँसू,
होठों पै धरा रहे है शेवन[1]!
तुम बिन नहीं साँस और कुछ है,
चुभता है जिगरमें होके सोज़न।
(इसी प्रकार)।

---

१. फ़रियाद।

वासोख़्त और मुसद्दस (षट्पदी)

तर्के-इख़लास[1] किया सबसे, तुझे प्यार किया।
रहम दिलपर न किया जानको आज़ार किया।
चाहसे अपनी अबस तुझको ख़बरदार किया।
क्या किया हमने कि इस मानीका इज़हार[2] किया।
जो कि अलफ़ाज़ न शायाँ[3] थे सो तू कहने लगा।
वजह बेवजह तू रूपोश[4] ही अब रहने लगा।

× × ×

अब तो जो कुछ हो दिल उस साथ लगा बैठूँगा।
उसके दरवाज़े पै दरवेश हो जा बैठूँगा।
हाथ वासोख़्ता हो तुझसे लगा बैठूँगा।
आऊँगा भी तो तेरे पास न आ बैठूँगा।
दूरसे एक नज़र करके चला आऊँगा।
सो भी कितने दिनों फिर काहेको मै आऊँगा।

× × ×

सच कहो शहरमें सेहरामें कहाँ रहते हो।
यॉ बहुत रहते हो ख़ुशबाश कि वाँ रहते हो।
इन दिनों यारोंकी आँखोंसे निहाँ रहते हो।
ख़ुश रहो 'मीर' मेरी जान जहाँ रहते हो।
एक तरफ़ बैठे हुए हम भी लहू पीते है।
इश्क़की जान को देते हैं दुआ जीते है।

---

१ दोस्ती छोडी। २ अभिव्यक्त। ३ उचित। ४ मुँह छिपानेवाला।

मस्नवी शोलए शौक़

[संक्षिप्त]

मोहब्बतने ज़ुलमत[1] से काढ़ा है नूर[2] ।
न होती मोहब्बत न होता ज़हूर[3] ।
मोहब्बत मुसब्बब[4] मोहब्बत सबब[5] ।
मोहब्बतसे आते हैं कारे अजब ।
मोहब्बत ही इस कारख़ानेमें है ।
मोहब्बतसे सब कुछ ज़मानेमें है ।
मोहब्बतसे है इन्तिज़ामे-जहाँ ।
मोहब्बतसे गर्दिश[6] में है आसमाँ ।
मोहब्बतसे परवाना आतिश बजाँ[7] ।
मोहब्बतसे बुलबुल है गर्मे-फ़ुग़ाँ[8] ।
इसी आगमें शमअको है गुदाज़[9] ।
इसीके लिए गुल है सरगर्मे नाज़ ।

[कथारंभ]

अजब काम पटनेमें इससे हुआ ।
अजब अहले आलमको जिससे हुआ ।
कि वाँ एक जवाँ था परसराम नाम ।
खुशअन्दामो[10] खुशक़ामतो[11] खुशख़राम[12] ।

---

१. अन्धकार । २ प्रकाश । ३. सृष्टि । ४. परिणाम, सृष्टिकर्ता । ५. कारण । ६ चक्कर । ७. जीवित अग्नि । ८ रुदनशील । ९ जलन । १०. सुन्दर शरीर । ११ सुडौल । १२. सुन्दर चालवाला (या वाली) ।

जिधरको वह टुक गर्म रफ्तार हो ।
क़यामत उधरसे नमूदार हो ।
वे क़ाफ़िर भवें होवें मायल[1] जहाँ ।
करें सिजदा उस जा पै इस्लामियाँ ।
निगह तेग़ मजरूह जिसके पड़े ।
पलक सेल जूँ दिलमें जाकर गड़े ।
सियह चश्म उसके दो वदमस्त थे ।
निगाहोंसे शमशीर दरदस्त थे ।
सरापामें उसके जहाँ देखिए ।
वहीं रूए-मक़सूदे जाँ[2] देखिए ।
खरामां निकलता वह जिस राहसे ।
क़यामत थी वाँ नाला वो आहसे ।

[उसे एक स्त्री हृदय-दान करती है। परशुराम उसके प्रेम एव निष्ठाकी कहानी मित्रोसे कहता है। उसका कहना है कि वह एक क्षण मुझे छोड़ नही जी सकती। इसपर लोग उपहास करते है और उसकी प्रियतमाकी परीक्षा लेनेकी बात तय होती है। लोग जाकर कहते है कि परशुराम नदीमे डूब गया।]

सुना उसकी हमसरने[3] जब यह सख़ुन ।
हुआ मौजज़न बहरे-रंजो-मोहिन[4] ।
निगह एक तरफ़ दरके मायूस[5] की ।
दमे सर्द खींचा गया डूब जी ।

१ आकर्षित होना। २. प्राणके अभिप्रेत (प्रियतम) के समान। ३ सगिनी। ४ वेदना-व्यथाका सागर तरगित हो गया। ५. निराश।

वही बेख़ुदी रुख़सते-जान थी।
वह एक दम की गोया कि मेहमान थी।
गिरी होके बेजान वह दर्दमन्द।
हुआ शोर नौहेका घरसे बुलन्द।
मुई ग़ममें इस जुमलातन नाज़के।
गई जान हमरह सख़ुनसाज़के।
वह आया जो था दिल परीशां गया।
कि इस वाक़एसे पशेमां[1] गया।

[वह जाकर परशुरामसे कहता है। तब परशुराम पागल हो उठता है]

गया होश सुनकर परसरामका।
दिवाना हुआ इश्क़के कामका।
उठा बेख़ुदो बेख़रो बेहवास।
गिरा आके उस पैकरे मुर्दा पास।
लगा कहने ऐ मायए-ज़िन्दगी[2]।
मुझे मुँहसे तेरे है शर्मिन्दगी।
न मेरी सुनी कुछ न अपनी कही।
मेरे तेरे दोनोंके जीमें रही।
ज़मीं परसे आख़िर उठाया उसे।
लबे-आब[3] जाकर जलाया उसे।
जब आग उसके पैकर[4] पै सब छा गयी।
मोहब्बत अजब दाग़ दिखला गयी।

---

१ लज्जित। २. जीवन-सम्पत्ति। ३. पानीके किनारे (नदी-तट)। ४. शरीरयष्टि।

यह सरगर्म फ़रियादो ज़ारी हुआ।
लहू उसकी आँखोंसे जारी हुआ।
जिगर ग़ममें यक लख़्त ख़ूँ हो गया।
रुका दिल कि आख़िर जुनूँ[1] हो गया।
गये होशो-सब्र उसके एकबारगी।
तबीयतमें आई एक आवारगी।
कभू याद कर उसके नाला रहे।
कभू टुक जो भूले तो हैरा रहे।
हुई रफ़ता रफ़ता जो वहशत जियाद।
लगा भागने सबसे वह नामुराद।
कुछ अपने बदो-नेककी सुध नहीं।
निकल जाय तनहा कहींका कहीं।
कभू जाके सेहरासे लावें उसे।
कभू रोते दरियापै पावें उसे।
कभू ख़ाक मलता है मुँहपर खड़ा।
कहीं है ख़राबीमें बेसुध पड़ा।
सरेशाम एक रोज़ दरिया गया।
हुई रात वाँसे न आया गया।
किनारे पे रहता था एक दामवार[2]।
रहा रात उसके यह क़ुर्बो जवार[3]।
कहा उसकी औरतने उस रातको।
नहीं तुझसे जी चाहता बातको।

---

१. उन्माद। २. जालवाला (मल्लाह)। ३. आस-पास।

तुझे फ़िक्र कुछ अब हमारी नहीं।
तू जाता नहीं शामसे अब कहीं।
तेरा शबको दरियामें पड़ता था दाम।
तो चलता था बारे मआशियते[1]का काम।
नहीं ताक़ते-सब्र हमको तनक।
बहुत देर मिलता है नानो[2] नमक।
वह बोला कि मैं भी परीशान हूँ।
बहुत तंगदस्तीसे हैरान हूँ।
कहूँ क्या कई रोज़से शामको।
उठाता न हूँ इस सबब दामको।
कि इक शोलए तुन्द पुर[3] पेचोताब।
फ़लकसे[4] उतरता है नज़दीके आब।
कोई दम तो रहता है सरगर्मे गश्त[5]।
कभी सूए दरिया[6] कभी सूए दश्त[7]।
ठहरता जो है फिर किनारेपै वाँ।
कहे है परसराम तू है कहाँ।
यह आतिश मेरे दिलकी क्योंकर बुझे।
अदम[8] में भी मैंने न पाया तुझे।
गया वह यह कहकर सुए आसमाँ।
रहे है मुझे रात दिन ख़ौफ़े-जाँ।

---

१. जीविका। २. रोटी। ३. तीव्र ज्वाला। ४. आकाश। ५. दौड़ता
[रह]ता है। ६. नदीकी ओर। ७. जंगलकी तरफ। ८. परलोक।

सुना हाल शोलाका सय्यादसे।
धुआँ एक उठा जाने नाशादसे।

[इसके बाद वह घर लौटता है और हँसकर सबसे कहता है। इनमें वह दोस्त भी था जिसने परीक्षा लेनेकी बात कहकर प्रियतमाकी जान ली थी]

तबस्सुमकुनाँ[1] वाँ यह उनने कहा।
कि कुलफ़तमें ग़मकी बहुत मैं रहा।
चलो सैरे-गश्तीको हंगाम शब।
लबे-आब ख़ाली करें दिलको सब।
हुआ सो हुआ यों ही तक़दीर थी।
जहाँसोज़ उल्फ़तकी तासीर थी।
हुए आक़बत सूए-दरिया रवाँ।
न पैदा किसूपर यह राज़े-निहाँ[2]।
हुए नावपर शाम गह जब सवार।
कहा उनने याँ एक है दामदार।
उसे साथ लो तो बड़ी बात है।
कि दरियामें फिरना है और रात है।

[लोगोंने उसे साथ ले लिया। कुछ देर परसराम ख़ामोश रहा। फिर उस मल्लाहसे गतरात्रिकी बातका इशारा करके पूछा]

कहाँ शोलए-सरकश आता है याँ।
किधर पेचोताब आके खाता है याँ।

---

१. मुसकराकर। २. प्रच्छन्न रहस्य।

ठहरता है किस जा वह आतिशफ़गन ।
तरफ़ कौनसे हो है गर्मे-सख़ुन ।
यह सय्यादसे था ही महवे सुराग़[1] ।
जिगर आतिशे-शौक़ रखती थी दाग़ ।
कि होकर फ़रोग़[2] एक सुए आसमाँ ।
तड़पने लगा जैसे आतिश बजाँ ।
कोई दममें दरियापै आया फरूद[3] ।
हुआ नेज़ाबाला सभीका नमूद ।
लबे-आब दो शोलए जाँ गुदाज़ ।
तड़पकर बहुत बाज़बाने दराज़[3] ।
पुकारा कहाँ है परसराम तू ।
मोहब्बतका टुक देख अंजाम तू ।
कि मैं जुमलातन[4] आतिशे-तेज़ हूँ ।
दिले गर्मसे शोला अंगेज़ हूँ ।
भड़कती है जब आग दिलकी मेरे ।
लबे आब उतरूँ हूँ ग़ममें तेरे ।
सो यह आब रखता है रोग़नेका काम ।
किया इश्क़ने आह दुश्मनका काम ।
यह बेताब सुनकर हुआ बेकरार ।
सफ़ीने[6] से उतरा बसद इज़तरार[7] ।

---

१. पता लगानेमे लीन । २. उतरकर । ३. तीव्र वाणी । ४. सशरीर ।
घी । ६. नौका । ७. बेचैन ।

हुआ हमदम उस आतिश अंगेज़से ।
कहा उस बलाए-दिल आवेज़[1] से ।
कि मैं हूँ परसराम ख़ानाख़राब ।
मेरा दिल भी उस आगसे है कबाब ।
मेरे भी जिगरमें यही सोज़ है ।
यही मुझको जलना शबो रोज़ है ।
सखुन मुख़्तसर कुछ वह शोला चला ।
कुछ एक अपनी जागहसे यह दिलजला ।
बहम गर्मजोशी[2] से यकजा हुए ।
कि गुज़री थी मुद्दत भी तनहा हुए ।
वह शोला रहा एकजा मुश्तइल ।
कहे तो तसल्ली हुए जानो दिल ।
यकायक भड़ककर वह जलने लगा ।
फिर ईधर उधर फिरने चलने लगा ।
किया पास पानीके आकर सऊद ।
रही रोशनी-सी कोई दम नमूद ।
फिर आगे किसीपै न पैदा हुआ* ।
न जाना कि वह शोला फिर क्या हुआ ।
ख़बरदार हो अहले-किश्ती तमाम ।
लगे कहने बाहम नहीं परसराम ।
उठे ढूँढने होके सब नासबूर ।
किनारेपै दरियाके नज़दीको दूर ।

---

१. प्राणमोहक । २. तीव्र भावना । * किसीको यह न ज्ञात हुआ ।

वह सय्याद बोला कि दूँ मैं निशाँ।
गया था सुए-शोला यह नौजवाँ।
यह और आग दोनों हुए हम सख़ुन।
वह शोला हुआ उस पे आतिश फ़गन।
यह जोशिश तो याँ से थी मद्दे नज़र।
फिर आगे नहीं उसकी मुझको ख़बर।
यक़ीनी हुआ यह कि वह तेज़ आग।
उसी नीम-कुश्ता से रखती थी लाग।
लिपट उसको शोला ही वह ले गया।
अजब तौरका दाग़ यह दे गया।



उपसंहार-भाग

उर्दू पिंगलकी कुछ बातें



१. **बहर और रुकुन**—उर्दू और फारसीकी कवितामे हिन्दी और सस्कृत की भाँति भिन्न-भिन्न छन्दोका प्रयोग होता है। उन्हे बहर कहते है। 'गण'की भॉति बहरमे भी वजन होता है। बहरें अरकानसे बनती है। अरकान आठ है। दो पचाक्षरीय; छ. सप्ताक्षरीय। आठ अरकानसे १९ बहरें बनती है किन्तु प्रसिद्ध १५ है। इनमे सात एक ही रुकुनकी पुनरुक्ति (तकरार) से बनती है और आठ दो रुकुनोंकी पुनरुक्ति (तकरार) से। एक ही रुकुनके तकरारसे बननेवाली है :—१ हजज, २. रमल, ३ रज्ज, ४ कामिल, ५ वाफर, ६ मिनकारिब, ७ मुतदारिक। दो दो या कई रुकुनोके तकरारसे बननेवाली आठ बहरे है—१ मुजारअ, २ सरीअ, ३ मुनसर्ज, ४ मुक्तजिब, ५ खफीफ, ६ मुहब्बतस, ७. तवील, ८ वसीत। इनके बननेका प्रकार निम्नलिखित है :—

१ हजज	. मफाईलन २ बार।
२. रमल	: फाइलातन ४ बार।
३ रज्ज	: मुस्तफेलन ४ बार।
४ कामिल	: मफाइलन ४ बार।
५ वाफ़र	: मफाअलतन ४ बार।
६ मिनकारिब (या मुतकारिब)	: फऊलन ४ बार।
७ मुतदारिक	: फाइलन ४ बार।
८ मुजारअ	' मफाईलन फाइलातन।
९. सरीअ	· मुस्तफेलन मफऊहत २ वार।

१०. मुनसर्ज : मुस्तफेलन मफऊहत २ बार ।
११ मुक्तजिव : मफऊहत मुस्तफेलन २ बार ।
१२ खफीफ . फाइलातन मुस्तफेलन २ बार ।
१३ मुहव्वतस मुस्तफेलन फाइलातन २ बार ।
१४ तवील : फऊलन मफाअलीन २ बार ।
१५ बसीत : मुस्तफेलन फाइलन ।

अधिकाश वहरोमे छ. या आठ अरकान होते है ।

१. मिसरा : एक सुसस्कृत एव सुसगठित पद, चरण ।

२. शेर : दो हमवजन (सममात्रिक) मिसरोका सयोग ।

३. वेत : शेरका एक प्रकार ।

४. काफ़िया : वेत या शेरका आखिरी शब्द जो वदला करता है ।

५. रदीफ़ : तुक ।

६. रुबाई (चतुष्पदी) : चार मिसरो या दो वेतकी होती है । इसके पहिले, दूसरे और चौथे मिसरे जरूर हम-काफिया होते है । यदि चारो हो तो और अच्छा है । इसका एक विशेप वजन होता है । रुबाईमे २४ वज़न होते है । उदाहरण:—

गर लाख बरस जिये तो फिर मरना है,
पैमानए-उम्र एक दिन भरना है ।
हाँ तो शये आखिरत मुहय्या करले,
ग़ाफिल तुझे दुनियासे सफ़र करना है ।

फारसीमे उमर खय्याम अपनी रुवाइयोके लिए मशहूर है । आजकल हिन्दीके तरुण कवि भी रुवाई लिखने लगे है ।

७. मतलअ : गजलका प्रथम शेर जिसके दोनों मिसरे हम-काफिया होते है ।

८. ग़जल : शाब्दिक अर्थ है 'माशूकके साथ खेलना', 'औरतोसे वातचीत' (देखिए फरहग आसफिया)। आकारके विचारसे चन्द बेतोका योग है जो वजन और काफियेमे यकसा हो। प्रथम शेरके दोनों मिसरे (चरण) हम-क़ाफिया (समतुकान्त) होते है, और इसीको मतलअ —मतला—कहते है, और शेषके अन्तिम। एक गजलमे चन्द मतले हों तो अच्छा है। प्राचीन आचार्यो के मतसे गजलके बेतो—शेरों—की संख्या सातसे बारह तक होनी चाहिए किन्तु आधुनिक मर्मज्ञोने उसे बढाकर बीस-पचीस तक कर दिया है। अर्थके विचारसे प्रत्येक शेर मुक्तककी भाँति भिन्न-भिन्न आशयका होता है किन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सम्पूर्ण गजल एक ही मजमूनपर कही गयी हो, प्राचीन आचार्योंने इसके लिए कोई बन्धन नही रखा है। जैसा कि इसके शब्दार्थसे विदित होता है, गजल निकाली तो इसलिए गयी थी कि इसमे केवल शृगार विषयका वर्णन रहे किन्तु पीछे लोग इसमे गूढ दार्शनिक बिचारो, उपदेश, विनोद एव अन्याय विषयोका भी वर्णन करने लगे।

९. मक़तअ : गजलका अन्तिम शेर 'मक़तअ' (मकता) कहा जाता है। एक रिवाज-सा हो गया है कि इसमे शायर अपना 'तख़ल्लुस' (उपनाम) देता है किन्तु फारस—ईरान—के प्राचीन आचार्यो और अरबके कवियोका मत ऐसा नही है।

१०. क़सीदा : आकार प्रकारमे गजलकी भाँति होता है किन्तु इसमे शेरोकी सख्या नियत नही है। प्राय. सौ डेढ़ सौ शेरो तक होता है। अर्थके विचारसे कसीदेमे एक ही विषय होता है। निन्दा, प्रशसा या उपदेश (विशेषत प्रशसा) इसके मुख्य अग है। उर्दूमे 'सौदा' के कसीदे मशहूर है।

११. क़िता : सूरतमे कसीदेकी तरह होता है। अन्तर इतना ही है कि इसमे मतला नही होता।

१२. मस्नवी : अर्थ है दो-दो। एक छन्द है। दो-दो चरण होते है, दोनो मिसरे हम-काफिया होते हैं। सात वजनोपर मस्नवी कही जा सकती है। विषय एक ही हो तो अच्छा है। यह हिन्दीकी चौपाईसे मिलता-जुलता है और प्रबन्ध-काव्य या कथा-काव्यके लिए उपयुक्त है। फारसीमे इसके बडे-बडे आचार्य हुए है। जैसे—फिरदौसी, निजामी, मौलाना रूम, मौ० जामी, खुसरो। उर्दूमे मीर हसन और दयाशंकर 'नसीम' की मसनवियाँ मशहूर है।

१३. मुसल्लस : त्रिपदी जिसका हरबन्द तीसरे मिसरेका हो और तीसरा प्रत्येक स्थानपर समान काफिया रखता हो।

१४. मुखम्मस : पचपदी। मुसल्लसके ही ढगपर पॉच मिसरोका होता है। पाँचवाँ हर जगह यकसॉ काफिया रखता है।

१५. मुसद्दस : षट्पदी। चार मिसरे हमकाफिया और एक मतला। 'हाली' के मुसद्दस मशहूर है।

१६. मर्सिया : मृत्यु या शोक-काव्य। उर्दूमे नासिखके मर्सिये मशहूर है।

१७. तारीख कहना : किसी प्रकारका पद जिसके शब्दोका साख्यिक मूल्य जोडकर मृत्यु या किसी घटनाका समय निकालते है।



उर्दू काव्यमें आनेवाले व्यक्ति



१. लैला मजनूँ :

अरबी, फारसी एव उर्दूके काव्यमे इन दोनो प्रेमियोंका जिक्र बार-बार आता है। अरबके दो प्रेमी। मजनूँका वास्तविक नाम कैस था। मजनूँका अर्थ है जो जुनून (उन्माद) मे है। चूँकि कैस लैलाके प्रेममे पागल था इसलिए इसको यह उपाधि दी गयी जो उसके नामसे भी ज्यादा प्रसिद्ध हो गयी है। उत्कट प्रेमके प्रतीक।

२. शीरीं फरहाद :

ईरानकी प्रसिद्ध प्रेमी आत्माएँ। फरहाद (कोहकन) एक गरीब पत्थर तोडनेवाला था पर शीरीके प्रेममे निमग्न। शीरी भी उसे चाहती थी। पर उसकी शादी ईरानके सम्राट् खुसरो परवेजसे हो गयी। तब भी शीरीको फरहादके प्रेमका विश्वास था। परवेजने फरहादसे कहलाया—तुम अमुक पहाड तोडकर एक नहर निकालो तो तुम्हारी इच्छा पूर्ण की जा सकती है। उसने स्वीकार किया। बरसो पहाड तोडनेमे लगा रहा और नहर जब लगभग पूरी हो चुकी थी, परवेजने षड्यन्त्र किया। एक नकली जनाजा निकाला जो उधरसे ही गुजारा जहाँ फरहाद अपने काममे व्यस्त था। उससे कहा गया, शीरी तो मर गयी, अब नहर किसके लिए खोद रहे हो। सुनते ही उसने उसी कुदालको अपने कलेजेमे मार लिया और मर गया। शीरोने यह सुना तो पागल हो गयी। दौडी उसकी लाश पर गयी और देर तक रोती रही। फिर जहर खाकर उसी लाशपर गिर पडी। प्रेमके लिए उत्सर्गके प्रतीक।

३. यूसुफ़ :

अरबी, फारसी एव उर्दू काव्यमे सौन्दर्यके आदर्श। हजरत याकूबके पुत्र थे जिन्हे उनके चचेरे भाइयोने, शिकार खेलते समय, बहकाकर एक कुएँमे झोक दिया। फिर बडी मुसीबतोके बाद कुएँसे सौदागरोके एक गिरोह द्वारा निकाले जाकर, गुलामोकी भाँति, मिस्रके बाजारमे बेचे गये। सौन्दर्यमे अद्वितीय थे। अजीजे मिस्रकी पत्नी जुलेखा इनपर मोहित हुई थी और उसीके अनुरोधसे वहाँके बादशाह गाजनने इन्हे खरीदा था। सौन्दर्य और मुसीबतोके सम्बन्धमे काव्यमे इनका वर्णन होता है।

४. फ़रऊन :

मिश्रके एक अन्यायी बादशाहकी उपाधि जिसने हजरत मूसाके जमाने मे खुदाईका दावा किया था। अभिमानी एव अत्याचारीके अर्थमे भी इसका प्रयोग होता है।

५. ज़ुलेखा :

यूसुफपर आसक्त महिला। ऐसी सुन्दरी जिसे देख मनमे रागका सचार हो।

६. ख़िज्र :

प्रसिद्ध पैगम्बर। 'लोमस' की भाँति अनन्त आयुवाले। भूले-भटको को राह दिखाया करते है। मशहूर है कि अमृतपान किया है।



काव्यके महत्त्वपूर्ण शब्द-प्रतीक



साक़ी : शराब पिलानेवाला, माशूक़, ईश्वर।

मय : शराब, प्रेम, सौन्दर्य। माशूकका आकर्पण।

मयकदा : मदिरालय, प्रेमागार, प्रियतम।

शीशा : कॉचकी सुराही; मद्यभाण्ड।

पैमाना : प्याला, मधुपात्र। माशूककी ऑखोसे उपमा दी जाती है। जाम भी कहते है।

सुबूही : प्रात.कालिक मद्यपेय।

संबुल : एक प्रकारकी सुगंधपूर्ण घास जिसकी माशूकके वालोसे उपमा देते है।

सरो : एक सुडौल वृक्ष जिसकी प्रेमिकाकी शरीर यष्टिसे उपमा दी जाती है।

ग्रासमॉ : सम्पूर्ण कष्टोका कारण।

अर्श : स्वर्गकी आठवी या नवी श्रेणी जहाँ, इस्लामी पौराणिकताके अनुसार, खुदा रहता है। आकाश।

तूर : अरबके उत्तर-पश्चिमकी एक पहाडी जहॉ हजरत मूसाको ईश्वरीय ज्योतिके दर्शन हुए थे और उनकी आँखें झपक गयी थी। माशूककी सौन्दर्य-ज्योतिके सन्दर्भमे भी इसका प्रयोग होता है।

लाल : रत्न विशेप जिससे ओठोकी उपमा दी जाती है।

गुल : पुष्प; माशूक, प्रेमिका।

बुलबुल : प्रेमी, आहोजारी करनेवाला, पीड़ित।

क़फस : पिजड़ा, जहॉ बुलबुलको गुलसे अलग करके वन्द किया जाता है। घर और माशूकासे जुदा करनेवाली चीज।

आशियाँ : घोसला। (जिससे प्रेमी या बुलबुलको प्राय निर्वासित कर दिया जाता है।)

सय्याद : माशूक, या प्रेमी (बुलबुल) से माशूक (गुल) को जुदा करनेवाला; जालिम।

खिजाँ : व्यथा और वियोगका प्रतीक।

रक़ीब : प्रतिद्वन्द्वी (प्रेम का)।

वस्ल : मिलन।

हिज्र : वियोग।

सबा : पूर्वी हवा। प्रभाती।

नसीम : शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर।

नरगिस : पुष्प विशेष जिससे (प्रियतमाकी) आँखोकी उपमा दी जाती है।

गरेबाँ : गला, पागलपनमे प्रेमी गरेबाँ फाडता है। और जगल तथा मरुभूमि (दश्तो सहरा) की ओर, एकान्तकी ओर भागता है।



मीर-काव्यके कुछ विशिष्ट शब्द



आजकल बताना : झूठे वादे करना, हीला-हवाला करना, चकमा देना।

आदमीगरी : मनुष्य बनाना, तमीज सिखाना।

आफ़ताबा : एक विशेष प्रकारका लोटा, जिससे मुँह-हाथ धोते है।

आफ़ताबी : हवेलियोमे धूपमे बैठनेकी छायादार जगह।

आला : हरा, ताजा।

इजारा : ठीका, केराया।

इस्तहाला : रूपान्तर।

इस्तखॉशिकनी : श्रम उठाना।

इस्लामी : मुसलमान।

इग़्माज़ : आँख छिपाना।

इकराह : जबर्दस्ती।

इन्तिहा लेना : थाह लेना।

उनने : उसने।

उलझाव : झगडा-बखेड़ा।

बाब : सम्बन्धमे (दरवाजा)।

बाब होना : किसी बातके योग्य होना।

बाव बहना : हवा चलना।

बफरना : झल्लाना।

बिचलना : डगमगाना, बिगड़ना।

बर उफ़्ताद होना : दूर होना, निमग्न होना।

बज़नगाह : क़त्लगाह।

बज़ा : एक जलपक्षी।

भेचक : भौंचक, हैरान ।
वेतिही : वातकी तहको न पहुँचना ।
पानी टूट जाना : पानी कम होना ।
पानी करना : नर्म करना ।
पाईज़ : पतझड, खिज़ाँ ।
परतवा : परतौ, परछाई ।
तपक : फोडेके दर्दकी टीस ।
तद : तव ।
तरदामन : गुनहगार, व्यसनी ।
जागह : जगह ।
छपाका : फुर्ती, तेजी ।
झमक्का : चमक-दमक, तीव्रज्योति, तीव्र वर्षा ।
चारो दांग : चारो ओर ।
चाव : अरमान, लालसा ।
चर्खज़न : चकित ।
चश्मकज़नी : आँखका इशारा करना, सैन मारना ।
चौरंग होना : तलवारके विशेष प्रकारके वारसे मरना ।
हाल : वेहोशी ।
ख़ाकदान : ससार ।
ख़राबा : वीरान, उजड़ा स्थान ।
खराज : फोडा, जख़्म ।
खस्मी : दुश्मनी ।
ख़ोर : सूर्य
खुश ज़ाहिर : दुनियादार आदमी ।
दरवाजेकी मिट्टी ले जाना : वार-वार फेरे करना ।
दस्तो पा गुम करना : घवरा जाना ।

दिलज़दा : मरे हुए दिलवाला।

दिलशब : अर्धरात्रि।

दिलगुज़ीद : दिलपसन्द।

डोर होना : मोहित होना।

राता माता : रातका जागा हुआ।

रेगे-रवाँ : स्थान विशेष जहाँ रेत सदा चलती रहती है। वहाँसे चश्मा निकलता है जिसमे पानी और पारा मिला होता है।

ज़गन : चील।

ज़ुल्फा, ज़ुल्फेन : दरवाजेका कुण्डा जिसमे कुण्डी अटकाते हैं।

ज़ंजीर करना : जजीरमे बाँधना।

सब्ज़क : नीलकण्ठ।

सब्जा : हरियल, हारिल।

सुकरोही : बेतकल्लुफी, प्रफुल्लता।

सरसे गुज़र जाय : सरकी परवाह न करे।

सरनशी : काफिलेमे सबके आगे चलनेवाला (या वाली)

सफ़री : सफर करनेवाला (अब मुसाफिर बोलते हैं।)

सुनगुन : उडती ख़बर।

शीशए जाँ : नाजुक मिजाज।

सर्फ़ा : फ़ायदा।

सोब : कठिन।

तर्फ़ : तुलना।

इर्ज : इज्जत, आबरू।

ऊर : नगा।

गुंचाखातिर : दुःखी हृदय।

क़ाक़ : पतला दुबला सूखा आदमी।

कद : कब।

लागा : लगा।

लाले खमोश : नीरव अधर।

मबीयत : रात ठहरनेकी जगह।

मिरज़ाई : अहकार।

नाजी : नजात पानेवाला।

नोक करना : बढ-बढकर बातें करना।

वाशिद : खिलना।

मीरके काव्यमे निम्नलिखित हिन्दी तथा ठेठ शब्द प्रायः मिलते है.— अफरना, उतारा, अटना, उगास, उलझाव, उलीचना, पाख (पक्ष), अगदान, अनमना, अनूठा, ओर, वास, बिसाहना, विस्तार, विश्राम, बिलोना, भस्म, भस्मन्त, पैंठ, पवन, तनिक, ठौर, जतन, जोग, चाव, रिझवार, रोम-रोम, सालना, साँझ, सुभाव, सराहना, सखी, सन्मुख, सूर (शूरके अर्थमे), काका, कपी (वन्दरके अर्थमे), गाँती, गठबधन, गढी, लोथ, निपट, निबल (निर्बल), निदान, निरास, नगर इत्यादि।

मीरने कभी, सभी की जगह कभू, सभू तथा चलता है की जगह चले है इत्यादि रूपोका प्रयोग किया है जो उस समय प्रचलित थे। आज-कलके अनेक पुल्लिग शब्दोको स्त्रीलिग तथा स्त्रीलिगको पुल्लिगरूपमे लिखा है पर ऐसा तत्कालीन अन्य कवियोमे भी मिलता है।

